गाँधी के हमराही
सीमान्त गाँधी

सोहन माथुर
रामजन्म चतुर्वेदी

●

रेखा प्रकाशन

गाँधी के हमराही
सीमान्त गाँधी

[चार खण्डों में]

प्रथम खण्ड : प्रशस्तियाँ

द्वितीय खण्ड : जीवनवृत

तृतीय खण्ड : सीमान्त गांधी
लेखकों की दृष्टि मे

चतुर्थ खण्ड : सीमान्त गांधी के विचार

अफगानिस्तान मे बादशाह खान के निवास स्थान पर श्रीमती इन्दिरा गांधी सीमान्त गाधी के साथ विचार विमर्श करती हुई ।

राज्यपाल सरदार हुकमसिह, सीमान्त गाधी तथा मुख्य मत्री मोहनलाल सुखाडिया ।

सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण सीमान्त गांधी के साथ

भूमिका

बादशाह खान भारतीय स्वाधीनता संग्राम के प्रमुख सेनानी रह चुके है। उनके जीवन की विडम्बना यह है कि आजादी के लिए अंग्रेजो के विरुद्ध सघर्ष करते समय उन्होने जितना कष्ट नही उठाया, उससे कई गुना अधिक कष्ट उन्हे आजादी के बाद पाकिस्तान के हाथो उठाना पड रहा है।

आप पूछेगे इसका कारण क्या है ?

कारण बहुत संक्षिप्त है : बादशाह खान कहते है कि उनके प्रान्त पख्तूनिस्तान को गुलाम बनाकर न रखा जाय, उनके साथ भी भाईचारे और इन्सानियत का व्यवहार किया जाय। लेकिन पाकिस्तान को यह मंजूर नही !

वे गाँधी जी के सच्चे हमराही है—पूरे अहिसक। भारत में वे अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का नेहरू पुरस्कार लेने १ नवम्बर १६६६ को आए थे। इसके बाद उन्होने यहाँ के लोगो के बीच घूम-घूम कर शान्ति, अहिसा और भाईचारे का पाठ पढाया। उन्हे इस बात को देखकर अत्यन्त दुख रहा कि भारत वाले केवल २०-२२ वर्षो मे ही महात्मा गाँधी के बताए मार्ग को भूल गए है।

बादशाह खान ने हमारे देशवासियो से जो बाते कही, उनमें दो सारभूत रूप में ली जा सकती है· पहली बात यह है कि साम्प्रदायिक झगडो में पैसो वालो का हाथ रहता है क्योकि इससे उनकी बन आती है

और गरीब मारे जाते है चाहे वे किसी कौम के हो, दूसरी बात उन्होने यह बताई कि भारत के मुसलमानो को राष्ट्रीयता के रग मे डूब कर बाहर के किसी देश या इस देश के बाहर की किसी कौम की ओर अपनी भलाई के लिए नही देखना है क्योकि इससे उनकी भलाई नही, तबाही होगी ।

जैसा बादशाह खान ने स्वय कहा है कि जब यहा के लोगो ने गाधी को ही भुला दिया तो उनको कैसे याद रखेगे, यह आशका निर्मूल नही है कि बादशाह खान की बाते असर नही करेगी । पर इतना सत्य है कि गाधी के हमराही इस मसीहा की बातो पर यदि देश ने ध्यान नही दिया तो वह तबाह हो जायेगा ।

पुस्तक की रचना का उद्देश्य यह है कि प्रथम तो इस सेनानी के जीवन पर किशोरोपयोगी साहित्य हमारे बालक-बालिकाओ को मिल सके जिससे वे जातीय गौरव एव राष्ट्रीय उत्थान के लिए त्याग और बलिदान की भावना अपने मे अ कुरित व विकसित कर सके । दूसरे यह कि गांधीजी की भूलती हुई शिक्षाओ को एक बार दुहराया जा सके । यह महात्मा गांधी और सीमान्त गांधी दोनो के सम्मान एव श्रद्धा के लिए एक आवश्यक कदम है ।

पुस्तक मे कतिपय लेख ऐसे सगृहीत किये गए है जो आज से वर्षो पूर्व लिखे गए थे । उन लेखो को समयानुकूल न बनाकर ज्यो का त्यो दिया जा रहा है ताकि लेखको की तत्कालीन भावनाए सुरक्षित रहे तथा वस्तुस्थिति का सम्यक् बोध हो ।

पुस्तक-प्रणयन मे सामग्री के स्रोत अधिकतर पत्र-पत्रिकाए रही है । कुछ गैर-हिन्दी प्रकाशनो को भी सामग्री का आधार बनाया गया है । इन सभी के प्रति आभार प्रगट करना हम अपना कर्तव्य समझते है ।

—लेखकद्वय

प्रथम खण्ड

प्रशस्तियाँ

१. महात्मा गाधी

२ राष्ट्रपति वी वी. गिरि

३. प्रधानमत्री इन्दिरा गांधी

४. मुख्यमत्री मोहनलाल सुखाडिया

५. शिक्षामत्री शिवचरण माथुर

६ सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण

विश्वप्रेमी सीमान्त गाँधी

—महात्मा गाँधी

बादशाह खान मेरे दोस्त है। मौलाना आजाद तथा जवाहर लाल के महल छोड़कर मेरी झोंपडी में आकर टिकते है। वे पूरे फ़कीर हैं। हम उन्हे सीमान्त गाँधी कहते है।

उनकी पारदर्शी सच्चाई, स्पष्टवादिता और हद दर्जे की सादगी का मुझ पर बड़ा प्रभाव पड़ा। साथ ही मैंने यह भी देखा कि सत्य और अहिसा में केवल नीति के तौर पर नही, वरन् ध्येय के रूप में उनका विश्वास हो गया है। खान अब्दुल गफ्फार खॉ तो मुझे गहरी धार्मिक भावनाओ से ओतप्रोत प्रतीत हुए, परन्तु उनके विचार सकीर्ण नही है। मुझे तो वे विश्वप्रेमी मालूम पड़े।

एक देवदूत

—श्री वी. वी. गिरि

बादशाह खान मानवीय शरीर मे एक देवदूत है जो इस धरती के व्याकुल, संतप्त प्राणियो को दुःख-दैन्य से मुक्ति दिलाने का अमृतोपम सन्देश सुना रहे है । उनके व्यक्तित्व, उनके कर्त्तृत्व मे पूज्य बापू के विश्व-बन्धुत्व, सत्यान्वेषण, शान्ति तथा सद्भाव के दर्शन होते है । उनके सान्निध्य मे ऐसा लगता है मानो राष्ट्रपिता की आत्मा जागरूकता का उद्बोधन दे रही हो । बादशाह खान की उपलब्धियाँ अपना विशिष्ट महत्त्व रखती है—उनमे एक नवीन मानवी शक्ति का उद्भव परिलक्षित होता है, एक ऐसी शक्ति मात्र जिसके आधार पर ही अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव एव भाईचारे की महत्ता स्थापित की जा सकेगी ।

卐

बापू की प्रतिमूर्ति

—श्रीमती इन्दिरा गाँधी

बादशाह खान जीवन की सार्थकता के ज्वलन्त प्रमाण है। मनुष्य अपने जीवन में जो कुछ कर सकता है तथा वस्तुत जो कुछ व्यक्ति को करना चाहिए, सीमान्त गाँधी उसकी जीती जागती तस्वीर है।

पूज्य बापू की प्रतिमूर्त्ति बादशाह खान ने खूँखार एवं उग्र हिसक पठान जाति को अहिसा, भ्रातृत्व और एकता का पाठ पढाकर उन्हे एक सशक्त जाति में परिवर्तित कर दिया। हमें आशा है कि उनकी भारत यात्रा से हमारे देश को भी वह मार्ग दर्शन मिलेगा जो उन्होने अपनी कौम को दिया।

आज देश में हिसा की आग भड़क रही है, साम्प्रदायिक कटुता की आधी से जनमानस आतकित है। ऐसे वातावरण में महात्मा गाधी की प्रतिमूर्ति सीमान्त गाँधी का आगमन, मुझे पूरा यकीन है, इस हिसा के वातावरण को मिटाने मे सहायक सिद्ध होगा तथा भारत के लोगो को प्रेरणा मिलेगी।

बादशाह खान अटूट साहस के प्रतीक है एक सच्चे मुसलमान है जिसका ईमान सारी इन्सानियत की सेवा है। वे मजहब को राष्ट्र और जाति का उन्नायक मानते है, उसकी प्रगति का अवरोधक नही। जातिगत द्वेष तथा साम्प्रदायिक कटुता से दूर रहकर उन्होने भारतीय स्वाधीनता सग्राम को जो अपना अमूल्य योगदान किया है, वह विरल है।

एक देवदूत

—श्री वी. वी. गिरि

बादशाह खान मानवीय शरीर मे एक देवदूत हैं जो इस धरती के व्याकुल, संतप्त प्राणियो को दुख-दैन्य से मुक्ति दिलाने का अमृतोपम सन्देश सुना रहे है। उनके व्यक्तित्व, उनके कर्तृत्व मे पूज्य बापू के विश्व-बन्धुत्व, सत्यान्वेषण, शान्ति तथा सद्भाव के दर्शन होते हैं। उनके सान्निध्य मे ऐसा लगता है मानो राष्ट्रपिता की आत्मा जागरूकता का उद्बोधन दे रही हो। बादशाह खान की उपलब्धियाँ अपना विशिष्ट महत्त्व रखती हैं—उनमे एक नवीन मानवी शक्ति का उद्भव परिलक्षित होता है, एक ऐसी शक्ति मात्र जिसके आधार पर ही अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव एव भाईचारे की महत्ता स्थापित की जा सकेगी।

卐

बापू की प्रतिमूर्ति

–श्रीमती इन्दिरा गाँधी

बादशाह खान जीवन की सार्थकता के ज्वलन्त प्रमाण है। मनुष्य अपने जीवन में जो कुछ कर सकता है तथा वस्तुत जो कुछ व्यक्ति को करना चाहिए, सीमान्त गाँधी उसकी जीती जागती तस्वीर है।

पूज्य बापू की प्रतिमूर्त्ति बादशाह खान ने खूँखार एवं उग्र हिसक पठान जाति को अहिसा, भ्रातृत्व और एकता का पाठ पढाकर उन्हे एक सशक्त जाति में परिवर्तित कर दिया। हमें आशा है कि उनकी भारत यात्रा से हमारे देश को भी वह मार्ग दर्शन मिलेगा जो उन्होंने अपनी कौम को दिया।

आज देश में हिसा की आग भड़क रही है, साम्प्रदायिक कटुता की आधी से जनमानस आतकित है। ऐसे वातावरण मे महात्मा गाधी की प्रतिमूर्ति सीमान्त गाँधी का आगमन, मुझे पूरा यकीन है, इस हिसा के वातावरण को मिटाने मे सहायक सिद्ध होगा तथा भारत के लोगो को प्रेरणा मिलेगी।

बादशाह खान अटूट-साहस के प्रतीक है एक सच्चे मुसलमान है जिसका ईमान सारी इन्सानियत की सेवा है। वे मजहब को राष्ट्र और जाति का उन्नायक मानते है, उसकी प्रगति का अवरोधक नही। जातिगत द्वेष तथा साम्प्रदायिक कटुता से दूर रहकर उन्होने भारतीय स्वाधीनता सग्राम को जो अपना अमूल्य योगदान किया है, वह विरल है।

शान्ति के मसीहा

—श्री मोहनलाल सुखाड़िया

एक अनूठा व्यक्तित्व

—श्री शिवचरण माथुर

बादशाह खान के व्यक्तित्व को यदि अनूठा ही नही, अद्वितीय कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नही होगी। सच पूछिए तो खान अब्दुल गफ्फार जैसे व्यक्ति स्वयं में एक सस्था होते है और होते है कतिपय शाश्वत मूल्यों के प्रतीक। इनके व्यक्तित्व एव कर्तृत्व को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि मानो इनके व्यक्तित्व का गठन दो तत्वों से ही हुआ है—मानवमात्र की सेबा भावना तथा सच्चाई के लिए असीम त्याग।

स्वाधीनता संग्राम के दिनो में जिन लोगो ने कुर्बानियाँ की, उन्हें याद करना, उनके सम्मान मे मस्तक झुकाना तो आज की पीढी का कर्त्तव्य है ही, और अपनी कुर्बानी के कारण ही वे लोग निश्चित रूप से महान् है, किन्तु बादशाह खान उनसे भी अधिक महान् है जो आज भी अपने सिद्धान्तों, आस्थाओ और विश्वासो का मोल जिन्दगी की हर सास से चुकाते आ रहे है।

बादशाह खान ने देश की आजादी के लिए जो अथक प्रयत्न किये, ब्रिटिश शासन और बाद मे पाकिस्तान के शासन मे जो बेइन्तहा कष्ट भोगे, वे बेमिसाल है। ऐसा विरल कर्म एव त्यागी जीवन युगों-युगो में कभी प्रगट होता है।

×

प्रेम के पुजारी

—श्री जयप्रकाश नारायण

बादशाह खान उन महान व्यक्तियो मे से है जिन्होने देश को आजाद कराया। आप प्रेम और सत्य के पुजारी है। इन्होने जिन ऊँचे आदर्शो का एलान किया था, उसका भारत ही नही दोनो पाकिस्तानी इलाको मे भी समर्थन हुआ है।

देश के बँटवारे के बाद यहाँ काफी तब्दीली हुई है—कुछ तब्दीलियाँ अच्छी नही रही। हम रास्ते से भटक गए। बादशाह खान का जीवन सेवा और तपस्या का नमूना है। मुझे आशा है कि उनका भारत आगमन हमें अपनी खोई हुई आत्मा को वापिस लाने मे मदद देगा। गाँधीजी के ही राज्य मे जो कुछ हुआ है, उससे हम शर्म से दबे हुए हैं। आशा है बादशाह खान का निर्देशन हमें सही राह पर लाएगा।

मुझे आशा है कि बादशाह खान के सान्निध्य मे भारतीय जन-मानस अपने को टटोलेगा और लोग अपनी आत्मा की पुकार पर अमल करेंगे। वे अहिंसा और सेवा की जीवन्त प्रतिमा है—गांधी जन्म शताब्दी समारोह के अवसर पर उनकी उपस्थिति का विशेष महत्व है।

×

द्वितीय खण्ड

जीवनवृत
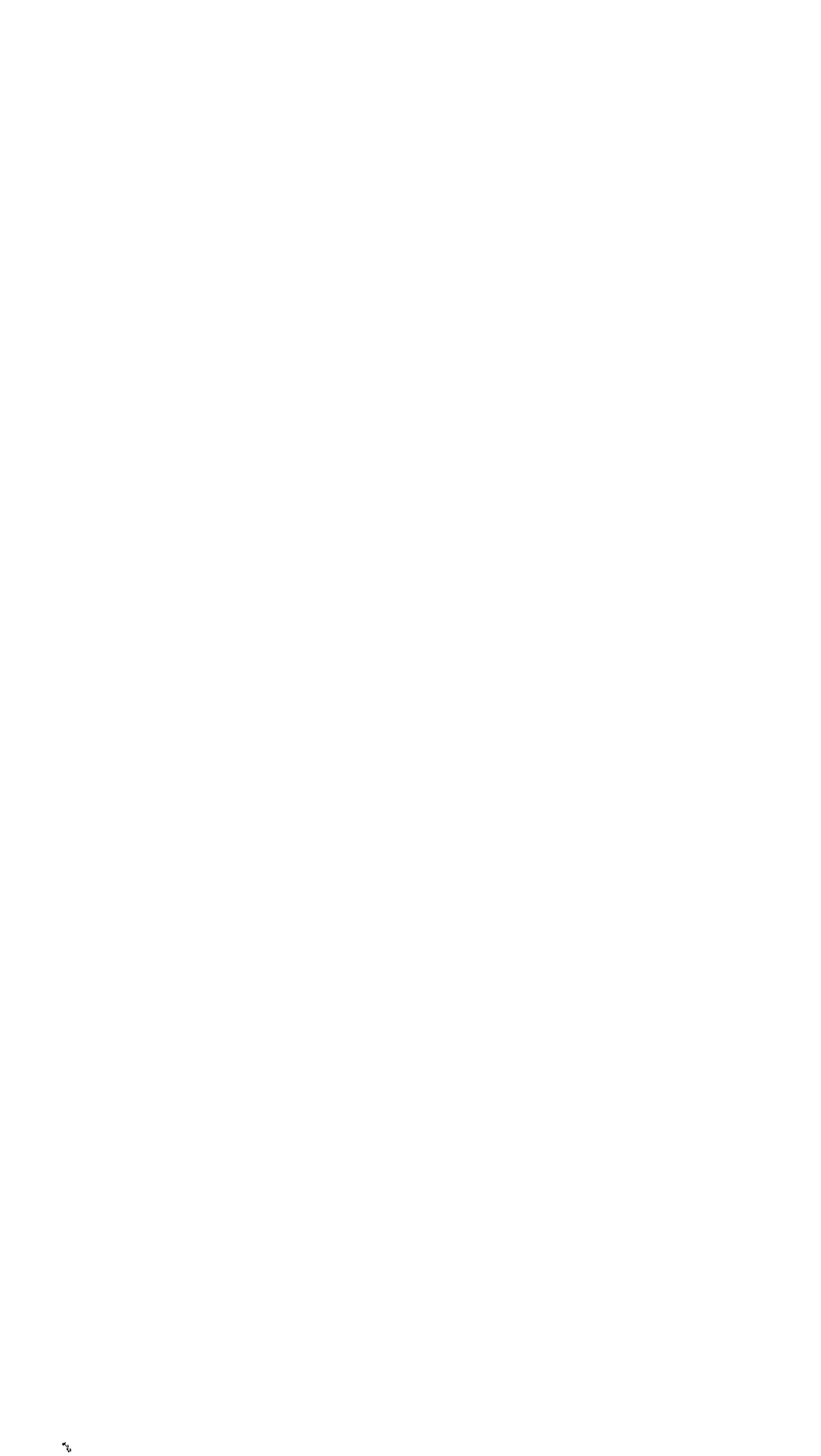
व्यक्ति और व्यक्तित्व | 1

स्वाधीनता संग्राम ने देश को दो गाँधी दिये — एक महात्मा गाँधी, दूसरा सीमान्त गाँधी ।

दोनों ने अपना जीवन जनता की भलाई के लिए, देश को विदेशी दासता से मुक्ति दिलाने के लिए और आम लोगों की खुशहाली के लिए होम कर दिया। वह जमाना देश की गुलामी का था—अंग्रेजो का हमारे देश पर शासन था। आजादी की कोशिश करने वालो को जेल भेज दिया जाता था और उन्हे कारावास में भयंकर यंत्रणाए दी जाती थी ।

लेकिन जिसके मन में लगन होती है, जिसका हृदय नि स्वार्थ सेवा-भावना से तरगित होता रहता है, उसे कठिनाइयों, बाधाओं और विपत्तियों से तिलमात्र भी घबराहट नही होती। ऐसे मनस्वी एवं कर्मठ नरपुंगव अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देते है और तब तक चैन नही लेते है जब तक उन्हे सफलता न मिल जाय ।

महात्मा गाँधी और सीमान्त गाँधी के जीवन पर दृष्टि डालने से विदित होता है कि ये दोनों लाड़ले अपने लिए नही, गरीबों, दीनों-दलितों तथा शोषितो के उद्धार के लिए ही जन्मे। अपने ऊपर अनेक कष्ट सहकर, अपना सर्वस्व लुटाकर भी इन्होने देश और जाति को ऊँचा उठाया—गुलामी की अंधियारी दूर कर देश में स्वाधीनता का नया सूरज उगाया ।

पर जिसका जीवन ही कष्ट भोगने के लिए हो, जो ईसा की तरह सबके पापो को अपने ऊपर लेकर दुनिया को खुशहाली बाँटने के लिए ही इस धरती पर आया हो, उसे उद्देश्य प्राप्त कर लेने के ब.द भी आराम करने का अवकाश कहाँ ? ऐसे महान पुरुषों का

सम्पूर्ण चिन्तन ही जनता-जनार्दन के दुःख-सुख से ओतप्रोत रहता है। यही हुआ महात्मा गांधी के साथ और यही हुआ सीमान्त गांधी के साथ।

आज हम जानते है कि पाकिस्तान भारत का पड़ोसी देश है। पर आज से २३ वर्षो पूर्व पाकिस्तान भारत का ही एक भाग था और देश पर अंग्रेजो का शासन था। उस समय गांधी, सीमान्त-गांधी, जवाहर लाल नेहरू, राजेन्द्र प्रसाद, वल्लभ भाई पटेल जैसे महान् नेताओ ने अंग्रेजी शासन को समाप्त करके देश को आजाद करने का बीड़ा उठाया था और उन्हे सफलता भी मिली। इन नेताओ ने देश की आजादी के लिए कठिन संघर्ष किये, लाठियाँ खाई, जेल गये, किन्तु उनकी प्रेरणा से जनता मे आजादी की ऐसी तीव्र लहर आन्दोलित हो उठी थी कि अंग्रेजो की गोलियो और जेलो से दबाई न जा सकी। हजारो लोगो को गोलियो से भून दिया गया, उनके घर बर्बाद कर दिये गए, किन्तु जनता की भावना दब न सकी और अन्ततः अंग्रेजो ने घुटने टेक दिए। उन्हे हार माननी पड़ी और देश को आजादी मिली।

किन्तु आजादी के साथ ही देश के टुकड़े हो गए—एक भारत बना और दूसरा पाकिस्तान।

बैर, फूट और प्रतिशोध में जलती पठान जाति को अहिंसा, प्रेम और भाईचारे की डोरी में बाँध कर उन्हे एक सशक्त, जागरूक और कर्मठ राष्ट्र के रूप में खडा किया । महात्मा गाँधी ने जीवन भर अहिंसा तथा धार्मिक भेद-भाव भुलाकर एकता पर जोर दिया । इसी तरह बादशाह खान ने खूंखार, रक्तपिपासु पठानो मे अहिंसा और सद्व्यवहार के भाव जागृत किये । गाँधी जी की तरह ही बादशाह खान ने अंगेजों की जेलो मे देश की आजादी के लिए वर्षों यातनाएं सही और जब देश आजाद हुआ तो दोनों को समान फल भोगने पड़े— महात्मा गाँधी को हमारे ही देश के एक पागल हिन्दू ने गोलियों का शिकार बना दिया और बादशाह खान को उनकी ही मुस्लिम सरकार ने जेल के सीकचो मे डाल दिया जहाँ वे बुढापे मे भी १५ वर्षो तक भयंकर कष्ट भोगते रहे ।

यही कारण है कि बादशाह खान को सीमान्त गाँधी कहते है । इनका पूरा नाम है खान अब्दुल गफ्फार खाँ ।

ऐसे स्वातन्त्र्य-प्रेमी, निर्भीक एवं अदम्य साहसी अब्दुल गफ्फार खां का जन्म पेशावर से २० मील दूर 'उतमान जई' नामक गाँव में सन् १८९० ईस्वी मे हुआ था। इनके पिता बहराम खान थे जो पठानो में अत्यन्त सम्भ्रान्त थे । इनका परिवार भरा-पूरा और सम्पन्न था ।

पठानो की कौम उन दिनों बाहुबल पर अधिक विश्वास रखती थी । आपसी झगडे-तकरार खूब चलते थे । इन सारी बातों का प्रभाव यह पडा था कि पठान जाति कुरीतियो और अन्ध-विश्वासो मे फसी थी । आधुनिक सभ्यता की किरणे अभी पठानो को छू नहीं पाई थी । उनमे यह रिवाज भी नही था कि यदि बालक पैदा हो तो उसकी जन्मतिथि या मुहूर्त-समय इत्यादि लिख ले । अब्दुल गफ्फार खा का परिवार धनी था, इनके पिता पठानो के सरदार थे और इन्हें 'खान' की पदवी मिली थी तथा आसपास के लोगों पर, जिनमें पठान और मुसलमान दोनो ही थे, इनका इतना रोबदाब था कि किसी का साहस इनके विरुद्ध कुछ कहने का नही था, फिर भी सामाजिक कुरीतियो से इनका परिवार बच नही पाया था । यही कारण है कि अब्दुल गफ्फार खाँ को ठीक जन्म तिथि का पता नही—केवल इतना ज्ञात है कि इनका जन्म सन् १८९० मे हुआ होगा । अपनी जीवनी मे स्वय बादशाह खान लिखते है, "उस समय प्रथम तो यह रीति नही थी कि कोई बच्चा

पैदा हो तो उसके माता-पिता उसकी जन्म तिथि और सन्-संवत् अपने पास लिखकर रख ले और दूसरी बात यह थी कि उन दिनो लोग लिखना-पढना नही जानते थे। यही कारण है कि मेरी जन्म-तिथि किसी ने भी नही लिखी। परन्तु मेरी माता मुझ से कहा करती थी कि मेरे बडे भाई डा० खान साहब का जब विवाह हुआ था, तब मै ग्यारह वर्ष का था। उनका विवाह सन् १९०१ मे हुआ था। इस लिए मेरा यह कहना ठीक ही है कि मेरा जन्म सन् १८९० मे हुआ था।"

कहा जाता है कि बालक मा-बाप के गुणो को लेकर जन्म लेता है और जिन परिस्थितियो मे वह पलता है, उनके आधार पर अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। अब्दुल गफ्फार खाँ के जीवन पर इन बातो का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

जब हम बादशाह खान के व्यक्तित्व पर दृष्टि डालते है तो स्पष्ट विदित होता है कि वे सादगी की प्रतिमूर्ति है, कट्टर मुसलमानों के बीच पलते हुए भी उनमे धार्मिक सकीर्णता का लेशमात्र भी नही है। उनकी वृत्ति सात्विक है तथा विश्वबन्धुत्व की भावना उनमे सदैव तरगित होती रहती है, दृढता एव निर्भयता के वे जीवन्त प्रमाण हैं तथा स्वातंत्र्यप्रेम की वह अखण्ड ज्योति उनमे जलती रहती है जिससे उनके समीप रहने वाले भी ज्योतित रहते है।

सबसे पहले हम धर्म निरपेक्षता को लेगे। धर्म निरपेक्षता का अर्थ धर्महीन या अधार्मिक होना नही है। बादशाह खान भी अधार्मिक नहीं हैं। एक सच्चे मुसलमान की तरह वे नमाज पढते है, खुदा की इबादत करते है। अभी जोधपुर की यात्रा मे यद्यपि उनके कार्यक्रमो मे मस्जिद मे जाकर सामूहिक रूप मे नमाज पढने का कार्यक्रम नही था किन्तु शुक्रवार का दिन होने के कारण उन्होने मस्जिद मे जाकर अन्य मुसलमानों के साथ नमाज पढी। पर सच्चा मुसलमान होने के कारण ही वे किसी दूसरे धर्म को छोटा नही मानते। उनकी निगाह मे सभी धर्म बराबर है और धर्म और जाति के नाम पर खून-खराबी करना इन्सानियत नहीं, हैवानियत है।

चले हुए आर्यो ने पंजाब और फिर शेष भारत में आने के पहले अफगानिस्तान और पख्तूनिस्तान मे अपने राज्य स्थापित किये। इस तरह उनका देश पहले आर्य सभ्यता का केन्द्र रहा। इसके बाद वहाँ बौद्ध धर्म फैला। अनेक जगहो पर खुदाई करने से जो अवशेष मिले है उनसे पता चलता है कि पख्तूनिस्तान में बौद्धो के अनेक प्रमुख स्थान थे। इस तरह पठान जाति मूलत. आर्य अथवा हिन्दू है। तेरहवी और चौदहवी शताब्दी से जब मुस्लिम आक्रान्ताओ ने अन्य जातियो को तलवार के बल पर अपने धर्म में सम्मिलित करना शुरू किया तो ये पठान भी मुसलमान बना दिये गए।

इस तरह आर्यमूल के होने के कारण और बाद में मुस्लिम धर्म में परिवर्तित हो जाने से यह स्वभाविक ही है कि पठान चाहे धर्म से मुसलमान हो और अपने को मुसलमान कहते भी हो, फिर भी उनके मन में एक अलग जाति होने की भावना जीवित रहे। इन बातो का असर अब्दुल गफ्फार खा पर भी पडना स्वाभाविक था। परिणामस्वरूप उनमे धार्मिक संकीर्णता नाम-मात्र को भी नही है। वे जितने हिन्दू है, उतने ही मुसलमान या ईसाई या कोई अन्य धर्मावलम्बी। यही कारण है कि उन्हे भारत के करोड़ो हिन्दू अपना बडा भाई, रहनुमा और अपने ही परिवार का एक सदस्य मानकर उनको आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखते है।

निर्भयता और स्वातन्त्र्यप्रेम का पाठ अब्दुल गफ्फार खॉ ने अपने पिता और प्रकृति से सीखा जिसकी गोद मे वे पले। अपने पिता बहराम खान के बारे में वे लिखते है: "मेरे पिता गॉव के एक बहुत बड़े खान थे किन्तु उनमें इस महत्त्वपूर्ण पद का लेशमात्र भी गर्व नही था। वे अत्यन्त विनम्रस्वभाव, ईश्वरभक्त, पवित्रहृदय और संयमी थे। वे शक्तिशाली आततायी के मुकाबले मे दुर्बल और सताए हुए व्यक्ति के समर्थक और सहायक थे। उदारता, दया और धैर्य उनकी प्रकृति के विशेष गुण थे। कोई उनका बुरा भी कर देता तो वे बदला चुकाने की सामर्थ्य रखते हुए भी क्षमा और सहिष्णुता से काम लेते। वे बुराई का बदला भलाई से दिया करते थे।"

यह तो हुई उनके व्यक्तिगत गुणो की बात। समाज मे भी अब्दुल गफ्फार खॉ के पिता बहराम खान का अत्यधिक रोब एवं सम्मान था। जिस तरह हिन्दुओ में पंडित लोग होते है जो धर्म के

ठेकेदार माने जाते है, उसी तरह मुसलमानो मे भी मौलवी-मुल्ला होते है जो अपनी धार्मिकता के कारण अन्य मुसलमानो से विशेष महत्त्व रखते है। उतमानजई मे भी पठानो के साथ मौलवी-मुल्ला भी रहते थे। वे अत्यन्त दकियानूस विचारो एव सकीर्ण हृदय वाले थे जो शिक्षा जैसी बात को भी अधार्मिक कहकर उन लोगो को बुरा बताते थे जो अपने बच्चो को पढने के लिए स्कूलो मे भेजते थे। पर अब्दुल गफ्फार खाँ के पिता के विरुद्ध खुल्लेआम कुछ कहने का साहस इन मुल्लाओ का भी नही था। इसका कारण था कि खान होने के कारण बहराम खान को विशेष अधिकार प्राप्त थे और उन पर उगली उठाने का उन्हे कठोर फल भुगतना पड सकता था।

ऐसे प्रतिष्ठित, निर्भीक, ईमानदार, सहिष्णु एव सात्विक गुणो से पूर्ण पिता का समुचित प्रभाव अब्दुल गफ्फार खाँ पर पडा जो उनके जीवन मे आज भी दृष्टिगोचर होता है।

स्वतत्रता के प्रति जन्मजात अभिरुचि तो पठानो का सहज गुण है। उनका देश बीहड जगलो और सुनसान पहाडियो का देश है जिसमे वे बेरोक-टोक विचरण किया करते थे। लूट-मार और झगडे उनके रोज के खिलवाड थे। फिर अब्दुल गफ्फार खाँ के पिता तो पर सामन्त थे—सरदार, ऐसे सरदार जिन्होने अपने जीवन मे कभी किसी शासक की खुशामद नही की, शासको के यहाँ आने-जाने मे भी जिसका आत्मसम्मान चोट खा जाता था। इतना ही नही, जातीय गौरव उनके परिवार मे कूट-कूट कर भरा था। इनके दादा ने अग्रेजो के विरुद्ध गाजियो का साथ दिया था और इनके परदादा को इसीलिए दर्रानियो ने फाँसी पर लटका दिया कि उन्होने अपनी कौम की भलाई चाही, दर्रानियो का विरोध किया जो अग्रेजो से पहले अफगानिस्तान पर राज्य करते थे।

परिस्थितियों का मुकाबला करेगे और भयंकर से भयंकर कष्टों को हँसते हुए झेलेगे किन्तु ताकत के आगे सिर नही झुकायेंगे, दीन-दुखी की सेवा से मुँह नही मोड़ेगे और जाति तथा देश के लिए सर्वस्व न्यौछावर कर देगे।

अब्दुल गफ्फार खाँ के मन पर दो और व्यक्तियो ने अपने अमिट प्रभाव छोडे। उनमे एक थे अध्यापक विगरम तथा दूसरे थे महात्मा गाँधी। विगरम उसी स्कूल के प्रधानाध्यापक थे जिसमें अब्दुलगफ्फार खाँ पढते थे। ये महोदय अत्यन्त सेवापरायण तथा सात्विक विचारो के ईसाई पादरी थे। छात्रों को अपने पुत्र की तरह मानते थे तथा अनेक गरीब विद्यार्थियो को अपने पास से छात्रवृत्ति भी दिया करते थे। बादशाह खान ने अपनी जीवनी मे इनका उल्लेख करते हुए कहा है "'उनकी इन बातो का मुझपर गहरा प्रभाव पडा। मै अपने मनमे कहा करता था कि एक ओर तो हम मुसलमान भाई है जिनमे इतनी सहानुभूति भी नही कि अपने ही किसी गरीब भाई की मदद करे, और दूसरी ओर ये विदेशी है जो न हमारी बिरादरी के, न हमारी कौम के, फिर भी हमारे गरीब भाइयो की मदद करते है।" आगे बादशाह खान ने स्वीकार किया है कि अध्यापक विगरम के परोपकारी एवं सेवापूर्ण व्यक्तित्व के कारण ही उनमे मानव-मात्र की सेवा करने को लालसा जगी जो परिस्थितियोवश अधिकाधिक दृढ एव तीव्र होती गई।

अध्यापक विगरम का प्रभाव अब्दुल गफ्फार खाँ पर इतना गहरा पडा कि उन्होने निश्चय किया कि इगलैण्ड जाकर ऐसे उदार लोगो के बीच रहकर शिक्षा ग्रहण की जाय। पर अपनी माता के हठ के कारण वे इगलैण्ड न जा सके। फिर भी किशोर गफ्फार के मन मे तरगित सेवा की भावना मिटी नही। उन्होने तय किया कि यही रहकर प्राणीमात्र की सेवा करूँगा और इसका आरम्भ पठानो की निरक्षरता तथा अविद्या को दूर करने के प्रयत्नो से होगा। परिणाम-स्वरूप अब्दुल गफ्फार खाँ ने अपने कुछ उत्साही मित्रो की मदद से अपने गाँव मे ही एक स्कूल खोला। उनके इस प्रयत्न के परिणाम अत्यन्त उत्साहवर्द्धक रहे और धीरे-धीरे सारे प्रान्त मे बहुत सारे विद्यालय खुल गए।

गांधी जी का प्रभाव इनके जीवन पर युवावस्था मे पडा जब ये ३८ वर्ष के थे। बात कलकत्ते की है। काग्रेस का अधिवेशन हो रहा था। अब्दुल गफ्फार खाँ अपने कुछ साथियो के साथ अधिवेशन देखने गए थे। तब तक ये गांधीजी से मिले नहीं थे। अधिवेशन में गांधी जी भाषण कर रहे थे। एक नवयुवक उन्हे बार-बार भाषण के बीच टोक रहा था – इतना ही नही, वह गांधी जी की शान के खिलाफ ओछी बात भी कहने से बाज नही आता था। किन्तु गांधी जी ने अपने मन को जीत रखा था। वे युवक की बातो पर हँस देते। उन्हे क्रोध बिल्कुल नही आता था।

गांधी जी के इस सहनशील व्यक्तित्व का अब्दुल गफ्फार खाँ पर गहरा असर पडा। यह पहला अवसर था जब अब्दुल गफ्फार खाँ एक हिन्दू नेता और काग्रेस से प्रभावित हुए और उनके मन मे कांग्रेस के प्रति आस्था जगी।

इस तरह प्रकृति से स्वातंत्र्यप्रेम, माँ-बाप से सहिष्णुता, क्षमा, निरभिमानिता, दीन-दुखी-जन-कल्याण–भावना, जातीय गौरव-गर्व तथा अध्यापक से विश्वबन्धुत्व की भावना ग्रहण कर किशोर अब्दुल गफ्फार खाँ ने देश-जाति की सेवा का महान् व्रत लेकर जीवन मे पदार्पण किया। उस समय देश की परिस्थितियाँ ऐसे कर्मठ, साहसी एव धुन के पक्के नवयुवको का स्वागत करने को उत्सुक थी। जगह-जगह अंग्रेजो के अत्याचार हो रहे थे जो इन देश-भक्तो की उत्कट राष्ट्रीय भावनाओ को और भी प्रज्वलित करने के लिए आग मे घी का काम करते थे।

●

प्रारम्भिक जीवन | 2

अब्दुल गफ्फार खां का जीवन प्रारम्भ से ही संघर्षों एवं कठिनाइयो का रहा है। ५-६ वर्ष की उम्र में इन्हे पढने के लिए एक मुल्ला के पास भेजा गया। मौलवी स्वयं पढना-लिखना नही जानता था। उसे कुरान कण्ठस्थ थी, और अपने शिष्यो को वह कुरान ही रटवाता था। लेकिन उस जमाने में यही बड़ी भारी बात थी।

जब पढाने वालों का यह हाल था कि उन्हे अक्षर लिखना भी नही आता था, तो समाज की क्या हालत होगी, इसे आसानी से समझा जा सकता है। यही कारण है कि पठानो में शिक्षा की बहुत कमी थी। लेकिन इसके पीछे भी अंग्रेजों की चाल थी।

अंग्रेज जानते थे कि पठान लोग बहुत बहादुर और ताकतवर कौम है। यदि वे पढ़-लिख जायेगे तो काबू में नही आयेंगे, इसलिए उन्हे अनपढ और अशिक्षित रखना ही ठीक रहेगा। इसीलिए अंग्रेजो ने दोहरी चाल चली। एक ओर तो वे विद्यालय भी खोलते थे और दूसरी ओर मुल्ला-मौलवियो को फुसला कर, उनकी झूठी तारीफ कर यह प्रचार करवाते थे कि अंग्रेजों के स्कूल में पढना-पढ़ाना अधार्मिक है, इससे धर्म भ्रष्ट हो जाता है। इसीलिए अधिकाश पठान शिक्षा से वंचित ही रहते थे। बहुत हुआ तो मस्जिद में कुरान वाले मौलवी के पास अपने बच्चो को भेज दिया ताकि वे कुरान की आयते (पद) रट ले।

यही अब्दुल गफ्फार खा के साथ भी हुआ।

उन्हे जिस मुल्ला के पास भेजा गया, वह बहुत ही कठोर था। वह अपना कर्त्तव्य जितना कुरान पढाना समझता था, उतना ही अपने शिष्यो को पीटना भी। इससे सभी विद्यार्थी उससे घबड़ाते थे और मन ही मन जीभर कोसते थे, लेकिन कोई चारा नहीं था।

अब्दुल गफ्फार खा भी कड़वी घूंट पीकर कुरान रटने में लग गए। दो-तीन वर्षो तक इन्होने मुल्ला के यहाँ शिक्षा पाई। इस बीच

उन्होंने कुरान के कुछ अंश याद कर लिए। यह एक बहुत बडी बात थी। उनके माता-पिता पुत्र की इस पढाई से बहुत प्रसन्न हुए। जब उनकी कुरान की पढाई समाप्त हुई तो खूब मिठाई बांटी गई। मुल्ला साहब को भी गुरु-दक्षिणा मे अच्छी-खासी रकम दी गई।

इसके बाद अब्दुल गफ्फार खां को एक स्कूल मे भेजा गया। यह एक भारी काम था क्योंकि मुल्ला इन स्कूलो का विरोध करते थे। लेकिन गफ्फार खां के पिता उदार और सूझ-बूझ वाले व्यक्ति थे। उन्होंने अपने बडे बेटे को भी अंग्रेजो के स्कूल मे भेजा था। अब्दुल गफ्फार खां के भाई आसपास के इलाके मे पहले पठान थे जो एक स्कूल मे पढने गए।

आठ वर्ष की उम्र मे अब्दुल गफ्फार खां को अंग्रेजी स्कूल मे पढने भेजा गया। उसके कुछ दिनो बाद वे पेशावर के मिशन हाई स्कूल मे भर्ती हो गए। उनका गांव वहां से २० मील दूर था। इसलिए मां-बाप ने उनके लिए पेशावर मे एक नौकर रख दिया था जिसे अब्दुल गफ्फार खां 'बारानी काका' कहा करते थे। इनके बडे भाई जब इस स्कूल की पढाई समाप्त कर बम्बई चले गए तो अब्दुल गफ्फार खां का मित्र या संरक्षक 'बारानी काका' ही रह गया।

जाति का पठान, उम्र से बूढा जिसने अपनी जिन्दगी और जवानी पहाडियों और जंगलो मे ही बिताई थी, बारानी काका की दिलचस्पी फौजी बातों मे थी। स्कूल से वापिस आने पर अब्दुल गफ्फार को बारानी काका सैनिकों के साहस भरे कार्यों की कहानियां बडी रुचि से सुनाया करता था। उसकी बातों का अब्दुल गफ्फार पर इतना असर पडा कि उन्होंने फौज मे भर्ती होने के लिए भारतीय सेना के सबसे बडे अफसर कमाण्डर-इन-चीफ को प्रार्थना पत्र भेज दिया।

ही कमीशन प्राप्त कर अफसर बनना गौरव की बात है। अब्दुल गफ्फार खाँ ने इस सीधे कमीशन के लिए ही प्रार्थना-पत्र दिया था। उन दिनो उनके लिए यह बहुत बडी बात नही थी क्योंकि वे नवी में पढ़ते थे और आज से ५० वर्षों पूर्व तो दसवी पास कर लेना बहुत बड़ी बात थी।

भाग्य ने इस मामले में गफ्फार खाँ का साथ दिया। लगभग साल भर बाद, जब वे नवी पासकर दसवी की परीक्षा दे रहे थे, उन्हे एक पत्र मिला जिसमे आदेश दिया गया था कि वे पत्र पाने के दूसरे ही दिन भरती के दफ्तर में उपस्थित हो जायँ।

अब्दुल गफ्फार को अब यह निर्णय लेना था कि वे दसवी की परीक्षा दे या फौज मे भरती हो। स्वभाव से अक्खड और प्रकृति से साहसी होने के कारण उन्होने निर्णय लिया फौज में भरती होने का। उनकी कल्पना मे एक सैनिक अफसर घूमने लगा जो वर्दी पहने है और जिसको आने-जाने वाला प्रत्येक सिपाही सैल्यूट करता है। 'ओह, कितने सम्मान की वात है फौज का अफसर बनना'! उनका मन इस समाचार से नाच उठा।

दूसरे दिन अब्दुल गफ्फार खा भरती के कार्यालय मे जा पहुँचे। वहाँ उनकी डाक्टरी जाँच हुई। इसमे वे सफल रहे। फिर कठिनाई ही क्या थी! गोरा रग, हट्टा-कट्टा शरीर, ६ फुट की लम्बाई और दसवी तक की पढाई। इन्हे कमीशन मिल गया और भारत की सबसे अच्छी टुकडी गाइड्स मे इन्हे रखा गया जिसमें बड़े-बड़े घरानों के युवक ही थे।

स्वाभिमान की जीत

इस तरह सीधा-कमीशन प्राप्त करने तथा गाइड्स की टुकडी में रखे जाने से अब्दुल गफ्फार खाँ को अपार हर्ष हुआ। उनके पिता भी वहुत प्रसन्न हुए कि लड़के का जीवन सुधर जायेगा, वह एक वड़ा अफ्सर वनेगा। लेकिन अब्दुल गफ्फार खाँ जितने साहसी व महत्वाकांक्षी थे, उससे भी अधिक स्वाभिमानी थे। परिस्थितियाँ उन्हे कही और खीचने को उत्सुक थी। उनके लिए सेना नही, करोड़ों-जनता की आँखे तुला रही थी।

अब्दुल गफ्फार खाँ की कम्पनी मरदान मे थी। वहाँ से वे एक दिन पेशावर अपने मित्र से मिलने गए। मित्र भी सेना में जमादार था। दोनों खड़े-खड़े बातें कर ही रहे थे कि एक अंग्रेज अफसर आ गया। उसने मित्र के फैशननेबुल बालो को देखकर डाँट दिया—'तुम हिन्दुस्तानी होकर भी ऐसे बाल रखता है—अंग्रेज बनना चाहता है !'

इस घटना का स्वाभिमानी अब्दुल गफ्फार खाँ पर विपरीत प्रभाव पड़ा। वे फौज मे रुपये-पैसो के लिए नही भरती हुए थे—यह तो घर पर ही था। सेना मे भरती होने का उनका उद्देश्य केवल एक ही था कि सम्मान मिलेगा, गौरव मिलेगा। लेकिन यहाँ तो बात ही उल्टी दिखाई दी। एक छोटी सी बात के लिए अंग्रेज कितना बड़ा अपमान कर गया ! छि, यह नौकरी किस काम की ! अब्दुल गफ्फार खाँ का स्वाभिमान जाग उठा। उन्होंने वापिस मरदान आकर नौकरी को लात मारने का निश्चय किया।

नौकरी छोड़ने के पहले उन्होंने अपने पिता को सारी बातें लिख भेजी। अपने बड़े भाई को भी सारी घटनाएं लिखी। उनके बड़े भाई उन दिनो इंगलैण्ड मे डाक्टरी की पढ़ाई कर रहे थे। उनके पिता तो इस बात से अप्रसन्न थे कि लड़का ऐसी अच्छी नौकरी जरा-सी बात के लिए छोड़ दे, किन्तु उनके बड़े भाई ने अब्दुल गफ्फार खाँ

आया तो झट तैयार हो गए। जाने के लिए जहाज में स्थान भी सुरक्षित करा लिया गया लेकिन वे जा न सके।

इसका कारण था कि उनकी माँ यह नही चाहती थी कि दूसरा बेटा भी विलायत जाय। लोगो ने उन्हे भडका रखा था कि एक बार जो विलायत गया, वह हाथ से गया, लौटकर नही आने का; और यदि लौटकर आया तो अंग्रेज बनकर आयेगा। उनकी मां ने यह भी सोचा कि यह दूसरा बेटा भी विलायत चला गया तो वे पुत्रहीना हो जायेगी - दो-दो बेटे होते हुए भी उनका कोई सुख नही पा सकेगी !

बादशाह खान कहते है : जब मै विदा की आज्ञा लेने माँ के पास गया तो वे रोने लगी। मैने उन्हे समझाने की बहुत कोशिश की किन्तु वे किसी तरह राजी न हो सकी। मैने उनसे कहा कि वे अपने प्रदेश पर एक नजर डालकर यह तो देखे कि अंग्रेजो ने किस तरह लोगो को आपस में लड़ाकर पारस्परिक द्वेष और घृणा का वातावरण उत्पन्न कर रखा है, किस तरह बेकसूर लोगो पर झूठे मुकदमे बनाए जाते है और उन्हे तरह तरह के कष्ट दिये जाते है, किस तरह यहाँ का वातावरण ऐसा बना रखा है कि यहाँ रहकर न कुछ पढाई हो सकती है, न व्यक्ति अपनी उन्नति कर सकता है; इसलिए यहाँ रहकर अच्छी शिक्षा ग्रहण करना असभव है। पर माँ पर एक भी बात का असर नही पड़ा और उनके आगे मुझे इगलैण्ड जाने का विचार छोडना पड़ा।

अब्दुल गफ्फार खाँ अपनी मा का अत्यन्त आदर करते थे। वे उन्हें दुखी करके विलायत नही जा सकते थे। परिणामस्वरूप उन्होने विलायत जाने का विचार छोड़ दिया और निश्चय किया कि देश में रह कर ही देश और जाति की सेवा करेंगे।

जनता की सेवा में | 3

पढ़ाई का विचार त्यागना बादशाह खान के जीवन में एक महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी मोड़ था। भाई की इच्छानुसार यदि उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा जारी रखी होती तो विलायत में अपने भाई की तरह इंजीनियरी की सर्वोच्च शिक्षा प्राप्त करके सरकारी नौकरी में किसी उच्च पद पर होते। पर बादशाह खान के हृदय में अपनी जाति और देश की भलाई की तरंगे हिलोरें ले रही थीं— भारतीय स्वाधीनता और कौमी आज़ादी का सैलाब उन्हें अपनी ओर खींच रहा था। उन्हें इसमें बहने से रोकना कठिन था।

यह उस समय की बात है जब अभी कांग्रेस में गांधी जी का प्रभुत्व बढ़ा नहीं था। गांधी जी अफ्रीका से आए ही थे और भारत में कांग्रेस की नब्ज पकड़ कर उसकी कमज़ोरियों को दूर करना चाहते थे। बादशाह खान का परिचय भी गांधी जी से नहीं हुआ था। वे स्वतन्त्र रूप में ही सीमान्त प्रान्त में जातीय उत्थान और जन-कल्याण के लिये उतावले थे।

तीसरी समस्या थी धार्मिक अन्धविश्वास और कुरीतियों को दूर करने की। बादशाह खान ने निश्चय किया कि शिक्षा के माध्यम से ही इन कुरीतियों को भी दूर किया जा सकता है।

यही तीन प्रमुख समस्याएँ थी जिन्हे लक्ष्य बना कर बादशाह खान इन्हे पूर्णतया मिटाने के लिए सामाजिक सेवा के क्षेत्र में कूद पडे।

सेवा-कार्य के लिए बादशाह खान ने अपनी पठान जाति को चुना। वे न नेता बनना चाहते थे और न ही उनके मन में यह लालसा थी कि सारे देश मे उनका नाम हो। हाँ, प्राणीमात्र की सेवा करने की उद्दाम लालसा अवश्य उनमें भरी थी। उन्होने देखा कि उनकी जाति को तबाही और बरबादी का एक कारण यह भी था कि मुसलमानो मे धन के प्रति आसक्ति उत्पन्न हो गई थी। वे इतने धन-लोलुप हो गए थे कि खुदा को भी भूल चले थे। इसीलिए उन्होने अपने विचार वाले कुछ नवयुवकों को साथ लिया। उनसे इस समस्या पर विचार-विमर्श किया। इन्ही दिनो एक सच्चे जातिभक्त और जन सेवक बुजुर्ग हाजी साहब तरंगजई का सम्पर्क मिला। सबने मिलकर १९ ० मे उतमानजई मे ही एक इस्लामी मदरसा कायम किया। इसकी देखादेखी सारे सीमाप्रान्त मे अनेक विद्यालय खुल गए। इन विद्यालयो का प्रभाव यह पडा कि लोगो मे शिक्षा के प्रति रुचि बढ़ गई। इन विद्यालयो मे समाचार पत्र भी मगाए जाने लगे। उन्हे पढकर दूसरे लोगो को सुनाया जाता ताकि लोग देश-विदेश की खबरे जान सके।

यह उस समय की बात है जब अब्दुल गफ्फार खाँ अभी बीस वर्ष के ही थे। कुछ दिनो बाद १९१२ मे उनका विवाह हुआ और १९१३ मे उनके प्रथम बेटे गनी का जन्म हुआ। पर बादशाह खान को पारिवारिक सुख अधिक नही लिखा था। दो वर्ष बाद १९१५ मे उनके दूसरे बेटे वली का जन्म हुआ। इन्ही दिनो सारे देश मे इन्फ्लूएंजा की महामारी फैल रही थी जिसकी लपेट मे गनी आ गया। उसकी हालत मरणासन्न हो गई।

बेटे के लिए प्राण देने की एक मिसाल इतिहास मे बाबर की मिलती है जब उसने हुमायूँ की खाट की परिक्रमा कर उसकी बीमारी अपने ऊपर माँग ली थी। कहते है उसी समय से बाबर

बीमार पड़ने लगा जो फिर नहीं उठा और हुमायूँ बच गया। ऐसी ही बात गनी के लिए उसकी माँ ने की। माँ ने मरणासन्न बेटे गनी की खाट की परिक्रमा कर खुदा से दुआ माँगी— 'अल्लाह, तू मेरे इस मासूम बेटे की बीमारी मुझे दे दे और इसे चंगा कर दे।'

संयोग ही था कि उसी रात से गनी ठीक होने लगा और धीरे-धीरे वह पूर्णतया स्वस्थ हो गया किन्तु उसकी माँ बीमार पड़ी तो लाख कोशिशों के बाद भी बचाई न जा सकी। उसके प्राण-पखेरू उड़ चले और अब्दुल गफ्फार खाँ पुन सेवा कार्य के लिए अकेले रह गए।

इन तीन-चार वर्षों के वैवाहिक जीवन मे भी अब्दुल गफ्फार खाँ आराम से घर नही बैठ सके थे। १६१३ मे ही आगरा मे मुस्लिम लीग का सम्मेलन था। इस सम्मेलन की चर्चा देश मे सर्वत्र थी। बादशाह खान ने भी इसमे सम्मिलित होने का निश्चय किया। वे आगरा आए। अपनी जीवनी मे बादशाह खान ने लिखा है कि इस सम्मेलन मे सर आगा खाँ तथा अब्दुल कलाम आजाद जैसे नेताओं के भाषण का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा और उन्होने इस सम्मेलन से बहुत सी बातें सीखी और समझी। वहाँ से वे दिल्ली होते हुए अपने गाँव लौट गए।

संघर्ष की तैयारी

निकल पड़े। कई दिनों तक तलाश करने के बाद उन्होने 'जगै' नामक गाँव चुना जहाँ केन्द्र स्थापित करना ठीक रहता। यह गाँव ऐसी जगह स्थित था जहाँ अंग्रेज अफसर आसानी से नही पहुंच सकते थे। किन्तु मौलवी अब्दुल्लाह के वहाँ न पहुंचने के कारण अब्दुल गफ्फार खाँ वापिस अपने गाँव लौट आए।

इन्ही दिनो सारी दुनियाँ मे प्रथम विश्व युद्ध छिड चुका था। इस कारण आजाद इलाके मे केन्द्र स्थापित करने की योजना पूरी नही हो सकी। योजना बनाने वालो में से एक शैखुलहिन्द महमूद अलहसन हज करने के लिए मक्का चले गए जहाँ उन्हे पकड़ कर अंग्रेजो के हवाले कर दिया गया।

शैखुलहिन्द को अंग्रेजों के हवाले करने का एक कारण था। प्रथम विश्व युद्ध में टर्की अंग्रेजों के विरुद्ध था। टर्की भी एक मुस्लिम देश था, इसलिए भारतीय मुसलमानो की सहानुभूति टर्की के साथ थी। शैखुलहिन्द भी खुले आम टर्की के साथ थे। भारतीय मुसलमानों को आशंका थी कि यदि युद्ध में अंग्रेजों की जीत हो गई तो वे टर्की से बदला लेगे। इस भावना को अंग्रेजों ने जब जाना तो यह ऐलान किया कि युद्ध-समाप्ति पर टर्की को कोई क्षति नही पहुँचाई जायेगी। वास्तव में यह भी अंग्रेजो की एक चाल थी और ऐलान करने का उनका उद्देश यही था कि भारतीय मुसलमान उनका विरोध न करे।

इतना ही नही, अंग्रेजो ने युद्ध के लिए भारतीय सैनिकों की भर्ती चालू की। यह भर्ती चालू करने के पहिले वायसराय ने दिल्ली मे भारतीय नेताओं का एक सम्मेलन बुलाया। उसमें गाँधी जी भी शामिल हुए थे। उस समय वायसराय ने कहा था कि यदि इस महा-युद्ध मे भारत अंग्रेजो की मदद करेगा तो युद्ध समाप्त होने के बाद भारत को कुछ राजनैतिक अधिकार दिये जायेंगे। बहुत से नेताओ ने वायसराय के इस आश्वासन में कोई दम नही देखा और रंगरूटो की भरती के प्रति असहमति प्रगट की किन्तु गाँधी जी ने यह बात मान ली। उन्होंने कहा, "मुझे देश के प्रति अपनी जिम्मेदारी का पूरा भान है और उस जिम्मेदारी को समझते हुए मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ कि भारतीय रंगरूटो की भरती की जानी चाहिए।"

कार्य के लिए देश के विभिन्न भागो में दौरा किया जिससे वे गम्भीर रूप मे बीमार पड गए ।

उधर १६१८ मे जब युद्ध समाप्त हुआ और अंग्रेजो की जीत हो गई तो वे अपने सारे वायदे भूल गए । मुसलमानो को दिये गए वचन भी ठुकरा दिये और टर्की को दबाकर उसका बहुत सा प्रदेश आपस मे बाँट लिया । इससे भारतीय मुसलमान भडक कर अंग्रेजो के विरुद्ध हो गए । उन्होने खिलाफत आन्दोलन जारी किया ।

इतना ही नही, भारतीय जनता को दिये अपने वचन से भी अंग्रेज मुकर गए और राजनैतिक तथा प्रशासनिक सुविधाएँ देने की बात तो दूर रही, उन्होने 'रौलट बिल' पास किया जिससे किसी को भी कैद मे डाला जा सकता था । यह राजनैतिक अधिकारो का खुला और मनमाना हनन था ।

इन रौलट बिलो का यह असर पडा कि सारे भारत में अंग्रेजो के विरुद्ध क्रोध की लहर दौड गई । सारे देश मे प्रबल एवं व्यापक आन्दोलन प्रारम्भ हो गए । भारत के सभी वर्गों के नेता–चाहे हिन्दू चाहे मुसलमान–इस बिल के विरोध मे एकमत थे ।

रौलट बिलो का बहिष्कार एव इनके विरोध की घटना ऐसी है जिस मे दोनो गांधी–महात्मा गांधी तथा सीमान्त गांधी–सक्रिय रूप में राजनीति मे कूद पडे । अब तक महात्मा गांधी भी समाज की भलाई में ही लगे थे और अब्दुल गफ्फार खाँ भी सामाजिक कल्याण के कार्यों मे ही रहे थे, किन्तु इस आन्दोलन के कारण देश मे जो लहर फैली उसने दोनो को राजनीति में एक साथ ही खींचा ।

पकड़े जाने पर फौरन गोली मार दी जाती थी। हजारों बेकसूर इस तरह मौत के घाट उतारे जा चुके है।

मार्शल ला की खबर सुनकर अब्दुल गफ्फार खाँ वापिस लौट पड़े और विचार किया कि देश छोड़ कर अफगानिस्तान चले जायें जहाँ सुरक्षित रहेगे। रास्ते में उनके पिता मिल गए। उन्होने अब्दुल गफ्फार खाँ को अफगानिस्तान जाने से रोका। फलस्वरूप वे एक दूसरे गाँव मे अपने खेत पर जा छिपे। वहाँ वे दिनभर छिपे रहते और रात को घर आते।

आखिर एक दिन पुलिस को पता चल गया और इन्हे पकड़ कर जेल में डाल दिया गया। जब इनके पैरो मे बेड़ियाँ डाली जाने लगी तो सारे जेलखाने मे इनके पैर के नाप की बेड़ियाँ ही नहीं थी—अब्दुल गफ्फार खाँ इतने हट्टे-कट्टे थे। इससे अधिकारी डर गए क्योकि वे इनको बिना बेड़ियो के रख नही सकते थे। यदि कोई अंग्रेज अफसर देख लेता कि एक कैदी के पैरो में बेड़ियाँ नहीं है तो अधिकारियो की मौत थी।

परिणामस्वरूप छोटी और तंग बेडियाँ ही उनके पैरों में डालकर कस दी गई जिनसे पैर छिल गए और चलना-फिरना भी कठिन हो गया।

इसके पश्चात् अब्दुल गफ्फार खां पर क्या बीती, इसकी चर्चा हम वाद में करेंगे। पहले यह देख ले कि अंग्रेजों ने उनके गाव पर क्या जुल्म ढाए।

उनके गाव उतमान जई को अंग्रेजी फौज ने घेर लिया। इस घेराव में बन्दूकधारी सैनिक ही नही थे, तोपे भी ले जाई गई थी। सभी गाव वालो को उस मदरसे मे विठाया गया जिसे अब्दुल गफ्फार खां ने चलाया था। जव गाव वाले वहा आ गए तो तोपो के मुंह उनकी ओर फेर दिये गए और तोपची ऐसे चिल्लाने लगे मानो वे तोपे अव छूटने ही वाली है। इससे लोगो मे कितनी घवराहट फैली होगी, यह आसानी से जाना जा सकता है। सभी आंतकित हो गए। लोगों ने ऐसा महसूस किया कि अव वे दो-चार क्षणों के ही मेहमान है और तोप के गोले छूटते ही उनका कही पता नही चलेगा। लेकिन तोपे चलाई नही गई—यह सव लोगों को आतंकित करने के लिए किया गया था ताकि वे अंग्रेजो के विरुद्ध जलसो मे सम्मिलित न हो।

तोपे तो न चली किन्तु अंग्रेजो ने तीन अत्याचार कर डाले- पहला तो यह कि सारे गाव को बेरहमी से लूटा, दूसरा यह कि ३० हजार रुपए सामूहिक जुर्माना कर दिया और जब जुर्माना वसूल किया जाने लगा तो ३० हजार के बदले १ लाख से भी अधिक रुपए वसूल किये गए, तीसरा यह कि सौ आदमी कैद मे लिए गए और यह कहा गया कि जब तक जुर्माना पूरा नही जमा हो जाता, तब तक उन्हे छोडा नही जायेगा। और इन लोगो को छोड़ा भी तभी गया जब पूरा जुर्माना जमा करा दिया गया।

इस बीच अफवाह यह फैल गई थी कि अब्दुल गफ्फार खा को फासी दे दी गई है। पर बात यह नही थी, इन्हे केवल ६ माह की कैद दी गई थी।

अब हम आते है बेटी वाली घटना पर। दूसरे दिन जब अब्दुल गफ्फार खा को अदालत चलने के लिए कहा गया तो इन्होने साफ मना कर दिया कि पैर इतने जख्मी हो गए है कि चल नही सकता। अन्तत एक घोडागाडी मगाई गई जिसमे बैठाकर इन्हे अदालत ले जाया गया।

वहां अंग्रेजो ने इनके विरुद्ध एक जाल रच रखा था। इनके गाव के ही एक आदमी को तार काटने के अपराध मे दो वर्ष की कैद मिली हुई थी। उस आदमी को यह सिखलाया गया था कि यदि वह कह दे कि उसने अब्दुल गफ्फार खा के कहने पर तार काटा तो उसे कैद से छोड दिया जायेगा। लेकिन इन्सान कितना भी पतित हो उसमे कुछ तो इन्सानियत रहती है ही। उसने इस बात की पहले तो हां भर ली थी किन्तु बाद मे वह जाग उठा और साफ इन्कार कर गया कि ऐसी झूठी बात नही कहेगा।

६ महीने बाद जब ये जेल से छूटकर आये तो विवाह की सारी तैयारी हो चुकी थी। लेकिन इनके भाग्य में अभी संघर्ष लिखा था। वास्तविकता यह है कि राजनैतिक जीवन में उन दिनो पड़ना विपत्तियो को ही मोल लेना था किन्तु देश-भक्त सर पर कफन बाँधे अंग्रेजो की खिलाफत किया करते थे।

विवाह के सिलसिले मे कुछ सामान खरीदने के लिए अब्दुल गफ्फार खा पेशावर जा रहे थे। इनके साथ इनका एक मित्र भी था। चले तो थे ये लोग सामान खरीदने लेकिन रास्ते मे इन्हे पुलिस ने पकड़ लिया और सी. आई. डी. के बडे अफसर शाट के सामने पेश किया।

कड़ाके की सर्दी मे बाहर ठिठुराने के बाद जब इन्हें शाट के सामने लाया गया तो उसके प्रश्नो का उत्तर ये बुलन्द आवाज में देने लगे। आखिर इन्हे बेकसूर गिरफ्तार किया गया था-इसी से इन्हे झल्लाहट आ रही थी। इस पर शाट ने कहा—धीरे बोलो।

अब्दुल गफ्फार खा झल्लाए तो थे किन्तु आपे से बाहर नही थे। उन्होने अब इतना धीरे बोलना शुरू किया कि शाट को कहना पड़ा—जोर से बोलो।

अब इनसे नही रहा गया। इन्होने कहा—जोर से बोलता हूँ तो हुक्म मिलता है कि धीरे बोलो, और धीरे बोलता हूँ तो जोर से बोलने के लिए कहा जाता है। इसलिए पहले मुझे बता दिया जाय कि मै कैसे बोलूँ।

यह सुनते ही शाट आग-बबूला हो गया। उसने इन्हे हवालात भेज दिया जहाँ सात दिन तक ये गन्दी कोठरी मे पड़े रहे। उसमें जुओ से भरे कम्बल के टुकडे थे जिन्हे न चाहते हुए भी इन्हे काम मे लेना पड़ता था। आठवे दिन पुन. उसी शाट के सामने पेश किया गया। ये छोड़ दिये गए।

कोई और होता तो चुपके से जान बचाकर वापिस आता। पर स्वाभिमानी अब्दुल गफ्फार से रहा नहीं गया। इन्होने पूछा—आखिर मुझे यह तो बताया जाय कि क्यो तो मैं गिरफ्तार किया गया और क्यो छोड़ दिया जा रहा हूँ ?

शाट ने कहा—मै तुम्हारे बारे मे जाँच कर रहा था।

इन्होने पूछा—जाँच करने के बाद मुझे गिरफ्तार नही किया जा सकता था क्या ?

इस पर शाट जोश मे आ गया। उसने कहा—मेरी मर्जी है मैं किसी को पहले गिरफ्तार करूँ और बाद मे जाँच करूँ या पहले जाँच करूँ और बाद मे गिरफ्तार करूँ!

अब्दुल गफ्फार खाँ ने कहा—लेकिन यह तो मेरे साथ अन्याय हुआ है। बिना किसी कारण मुझे इतना कष्ट दिया गया। मेरे व्यक्तित्व को भी नही देखा गया।

शाट ने कहा—जाओ, जाओ! तुम्हारा व्यक्तित्व ही क्या है!

उस समय अब्दुल गफ्फार खाँ आ तो गए पर बाद मे शाट को भी पता चल गया होगा कि अब्दुल गफ्फार खाँ का व्यक्तित्व कैसा है जिससे भारत का वायसराय भी कापने लगा था।

इसके पश्चात् १६२० मे इनकी दूसरी शादी हो गई।

यह जमाना देश मे उथल-पुथल का था। गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन चला रखा था। इस आन्दोलन के प्रभाव मे बडे-बडे लोगो ने सरकारी नौकरियाँ छोड दी थी। अंग्रेजी अदालतो का बहिष्कार किया गया। अंग्रेजो द्वारा चलाए जाने वाले स्कूलो और कालेजो को छोडकर छात्र और अध्यापक बाहर आ गए। भारतीय परम्परा पर नए-नए विद्यालय खुलने लगे थे।

असहयोग आन्दोलन की लहर बडी तेजी से सारे देश मे फैल चुकी थी। मुस्लिम लीग पहले तो कांग्रेस के खिलाफ थी लेकिन इस असहयोग आन्दोलन मे वह भी साथ हो गई। इसका कारण यह था कि टर्की के साथ विश्वासघात करने के कारण अंग्रेजो के विरुद्ध भारतीय मुसलमान हो गए थे और उन्होने खिलाफत आन्दोलन चलाया था। इस तरह खिलाफत और असहयोग दोनो ही अंग्रेजो के विरुद्ध होने से मुस्लिम लीग और कांग्रेस एक ही मंच पर आ गए थे।

था। खिलाफत और असहयोग आन्दोलन के कारण बहुत से मुस्लिम छात्रो ने भी कालेज छोड दिया था। इनमें से कुछ छात्र अलीगढ़ कालेज मे पढते थे। खिलाफत के एक जलसे मे शरीक होने के लिए जब अब्दुल गफ्फार खॉ अलीगढ गए तो ऐसे छात्रो से उनकी भेट हुई, सलाह मशविरा हुआ। इन्ही दिनो इनके बड़े भाई विलायत से डाक्टरी की परीक्षा पास कर आ गए थे। डा० खान अपने भाई अब्दुल गफ्फार खॉ की राष्ट्रीय भावना को सदा से प्रोत्साहन देते आए थे।

परिणामस्वरूप १९२१ में इन्होने अपने गॉव में ही एक हाई-स्कूल की स्थापना की। इस कार्य मे इनके अनेक मित्रो का सहयोग मिला जिनमें काजी अताउल्लाह साहब का नाम विशेषतया उल्लेखनीय है।

विद्यालय की स्थापना तो हो गई लेकिन कठिनाइयॉ बढ़ गईं। पहली कठिनाई तो यह थी कि कम वेतन पर अच्छे अध्यापक नही मिलते थे और अधिक वेतन देने के लिए रुपए का प्रबन्ध करना कठिन था। इससे भी बडी कठिनाई यह थी कि इस विद्यालय में पढ़ाने वाले अध्यापको को अंग्रेज डराते-धमकाते थे। वे बिल्कुल नही चाहते थे कि यह विद्यालय चले। जब डराने-धमकाने से काम नही चलता तो वे अधिक वेतन देकर शिक्षकों को कही और भेज देते।

कहते है जहॉ चाह है वहाँ राह भी होती है। विद्यालय के खर्च की समस्या का समाधान भी निकला, वह इस तरह कि सीमान्त प्रदेश मे भी खिलाफत कमेटी बनाने का निश्चय किया गया और लोगों ने बहुत आग्रह किया कि उस समिति के अध्यक्ष अब्दुल गफ्फार खां ही बने। स्वभाव से ये ऐसी बातो के विरुद्ध थे, नही चाहते थे कि ऊँचे ओहदे लेकर नाम कमाएं। इनके मन मे तो सच्ची सेवा की लगन भरी थी। लेकिन लोगों का आग्रह देखकर इन्होने खिलाफत कमेटी का अध्यक्ष बनना इस शर्त पर स्वीकार किया कि सीमान्त प्रदेश से जो भी चन्दा वसूल होगा, वह वही के विद्यालयों पर खर्च किया जायेगा।

इस तरह विद्यालय की आर्थिक समस्या का समाधान हो गया। अब अब्दुल गफ्फार खाँ आस-पास के इलाके मे दौरे करके लोगो मे राष्ट्रीय जागृति फैलाने के ठोस कार्य मे जुट पड़े।

अब्दुल गफ्फार खाँ को इस तरह राष्ट्रीय आन्दोलन में बढते देखकर अंग्रेजों को चिन्ता खडी हो गई। उस प्रान्त के कमीश्नर ने इनके पिता को बुलाकर समझाया कि वह अपने लडके को मना कर दे कि वह इधर-उधर घूम कर विद्यालय खोलने का काम बन्द कर दे और आराम से घर बैठे।

इनके पिता ने उन्हे समझाया और यह भी कहा कि यदि इसी तरह घूम-घूम कर विद्यालय खोलते रहे और लोगो मे खिलाफत की भावना भरते रहे तो अग्रेज उनसे बहुत नाराज होगे। पर अब्दुल गफ्फार खाँ को इसकी चिन्ता नही थी। उन्होने साफ-साफ कह दिया कि जिस तरह एक सच्चे मुसलमान के लिए नमाज पढना जरूरी है, उसी तरह शिक्षा-प्रसार भी जरूरी है।

इसका परिणाम वही निकला जो उस जमाने मे निकल सकता था, कमीश्नर ने बार-बार जब इनके पिता को बुलाकर पूछना चाहा कि अब्दुल गफ्फार खाँ की क्या इच्छा है, वह खिलाफत का आन्दोलन छोडेगा या नही, तो उन्हें सच्ची बात कहनी पडी। लेकिन यह समझना भूल होगी कि इनके पिता ने डरकर कोई बात कही। डरना तो पठान जाति जानती ही नहीं। उनके पिता ने कहा, साहब बहादुर, आपके कहने से हम मौत के दरिया में कूद सकते हैं लेकिन अपना मजहब नही छोड सकते। जिस तरह हमे अपनी नमाज प्यारी है उसी तरह अपनी कौम को जगाना, उसमे तालीम की रोशनी भरना भी हमारा फर्ज है।

रेग्यूलेशन एक्ट' कहते थे। इस कानून की आड़ में अंग्रेज मनमाना व्यवहार करते थे, जिसे चाहे सजा दिलवाकर जेल भेज दिया करते थे। सीमान्त प्रदेश वाले इसे 'काला कानून' कहते थे। इसकी एक धारा ४० थी। इस धारा के तहत अंग्रेज किसी को भी पकड़ कर जमानत मागते थे। यदि जमानत न दी गई तो तीन साल की कैद तैयार रखी थी।

काले कानून की इसी धारा-४० के अन्तर्गत कमीश्नर ने अब्दुल गफ्फार खाँ को गिरफ्तार कर लिया। इसके बाद इनसे जमानत मांगी गई। अन्याय का विरोध करने पर ही जो व्यक्ति कटि-बद्ध हो गया हो, वह कोई भी अन्यायपूर्ण कार्य कैसे कर सकता था ! जमानत देने का मतलब था कि गिरफ्तारी जिस कारण से हुई है, वह काम अब भविष्य में नहीं किया जायेगा। लेकिन अब्दुल गफ्फार खाँ ने तो ऐसा कोई काम ही नहीं किया था जिसे वे दुबारा न करने का आश्वासन दें और जो कार्य वे कर रहे थे, उसे सदा करते रहेगे चाहे रास्ते में कितनी ही कठिनाइयाँ क्यो न आवें। इन्होंने जमानत देने से इन्कार कर दिया। परिणामस्वरूप इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उस जमाने में इस तरह के हजारो लोगों की तरह, जिन्हें अंग्रेजों ने अपने अत्याचार का शिकार बनाया, इनका मन भी कहता था—

गुनहगारो मे शामिल है, गुनाहों से नहीं वाकिफ।
सजा तो जानते है हम, खुदा जाने खता क्या है।

जेल की जिन्दगी

यह १६२१ का समय था—सारे देश में असहयोग की लहर फैली थी। अब्दुल गफ्फार खाँ को भी पेशावर की जेल में डाल दिया गया।

उस समय के कैदियों का हाल देखिए। जेल में पहुँचते ही कैदी को एक एकान्त कोठरी मे बन्द कर दिया जाता था। उसके पांवो मे बेड़ियां डाल दी जाती थी और गले में काठ की एक तख्ती लटका दी जाती थी जिस पर उस कैदी का अपराध और कैद की अवधि लिखी रहती थी। कोठरी में २० सेर अनाज रख दिया जाता कि कैदी पीसता रहे।

लेकिन अभी तक अब्दुल गफ्फार खा को कानूनन कैद की सजा नहीं दी गई थी। दस दिन तक जेल की गन्दी और अंधेरी कोठरी मे उन्हे रखा गया, सम्भवत इसलिए कि जेल की कठिनाइयो से घबराकर ये माफी माग लेगे। इनके ये १० दिन बडी मुसीबत मे बीते। कोठरी का दरवाजा दिन-रात मे केवल एक बार खुलता था जब उसकी सफाई के लिए कोई आता। खाने के लिए रोटिया भी सीखचो मे से ही दी जाती थीं। सबसे बडी मुसीबत यह थी कि कैदी दो-चार घण्टे आराम से सो नही सकता था। इसका कारण यह था कि प्रत्येक ३ घण्टे पर चौकीदार का पहरा बदल जाता था। जब नया चौकीदार आता तो ताले को जोर से खटखटाकर देखता कि कैदी के कमरे का ताला टूटा तो नही है। इस खटखटाहट से ही कैदी की नीद खुल जाती। फिर भी यदि किसी की नीद न खुले तो दूसरा इन्तजाम था। ताला खटखटाने के बाद चौकीदार कहता, बोल भाई ? चौकीदार के इस प्रश्न के उत्तर मे कैदी को बोलना जरूरी था। जब तक कैदी बोलता नहीं चौकीदार हटता नही, और यदि कैदी को बोलने मे देर हो जाती, तो उसे दूसरे दिन सजा मिलती थी।

इस तरह अब्दुल गफ्फार खाँ ने कैद के १० दिन मुसीबत से गुजारे। उनको थोडा आराम इसलिए मिल गया था कि इनका दारोगा, जो हिन्दू था, इन पर सहानुभूति रखता था। उसने पीसने के लिए इन्हे अनाज नही दिया !

दसवे दिन इन्हे डिप्टी कमीशनर के सामने पेश किया गया। वह अग्रेज था। उसने सिपाहियो से पूछा—इसका क्या अपराध है ?

छीनकर उस पर राज करने लगे और अब हमें हमारे ही देश में रहने नही देते–इसके लिए भी इजाजत की जरूरत पड़ती है !

इतना सुनना था कि डिप्टी कमीश्नर आग-बबूला हो गया। उसने तुरन्त कहा— ले जाओ इसे तीन साल की सजा देता हूँ।

अब्दुल गफ्फार खॉ किसी सामाजिक अपराध में कैद नही किये गये थे किन्तु इनके साथ भी वही बर्ताव किया गया जो अन्य साधारण कैदियो के साथ किया जाता है। इससे ये दु खी नही थे। जानते थे कि देश सेवा के मार्ग में एसी विपत्तियॉ आती ही हैं। जेल में इन्होने पहिला नियम यह बनाया कि जेल के नियमों का पालन किया जायेगा।

उन दिनों जेल का नियम था कि कोई कैदी अपने पास खाने–पीने की भी कोई चीज नही रख सकता था। एक दिन ऐसा हुआ कि उनके गॉव का एक व्यक्ति आया। वह भी उसी जेल में कैदी था। उसने किसी तरह थोड़ा-सा गुड़ मंगा रखा था, क्यो कि जेल का भोजन बहुत गन्दा मिलता था। सब्जी ऐसी होती थी कि खाई न जाय। उस कैदी ने चुपके से थोडा-सा गुड इनकी कोठरी के आगे रख दिया कि ये ले लेगे। इन्होने गुड उठा लिया लेकिन इस बात को पहरेदार ने देख लिया।

संयोग की बात कि उसी समय जेलर आ निकला। पहरेदार भी घबड़ाया। उसने गफ्फार खॉ से कहा—'गुड जल्दी से खा जाओ, जेलर साहब आ रहे है।' इन्हे भी चिन्ता हुई यदि जेलर देख ले तो?

किसी तरह इन्होंने गुड को छिपा लिया और जेलर ने इनकी तलाशी नही ली। इस तरह से एक बला तो टल गई किन्तु इन्होने निश्चय किया कि आगे से कोई ऐसा काम नही करेगे जो नियम के विरुद्ध हो।

पेशावर जेल में ही इनसे मिलने के लिए इनके बड़े भाई डाक्टर खान कुछ अन्य लोगो के साथ आए। उन लोगों ने पहले सरकार से प्रार्थना की थी कि अब्दुल गफ्फार खाँ को छोड़ दिया जाय। सरकार ने शर्त रखी थी कि यदि वह लोगो में घूमना-फिरना बन्द कर दे, चाहे अपने गॉव मे स्कूल चलाता रहे, तो छोड़ा जा सकता है। डाक्टर खान ने इनसे यह वात कही। यह भी समझाया कि एक बार सरकार की शत मान लेने में कोई बुराई नही है, लेकिन अब्दुल

गफ्फार खाँ अपने व्रत पर टिके रहे। उन्होंनें दो टूक उत्तर दिया—मैं इस शर्त को नही मान सकता !

दो महीने पेशावर की इस जेल मे बिताने के बाद इनको डेरा इस्माइल खाँ की जेल मे भेज दिया गया जहाँ राजनीतिक कैदियो को अलग से रखने की व्यवस्था थी।

डेरा इस्माइल खाँ की जेल में इन्हे दो व्यक्ति ऐसे मिले जो परस्पर बिल्कुल विपरीत स्वभाव के थे—एक डिप्टी जेलर गगाराम जो पक्का घूसखोर और बेईमान था, दूसरा एक मुसलमान दारोगा जो बहुत ही नेक व्यक्ति था। दारोगा को अब्दुल गफ्फार खां पर रहम आता था। वह जानता था कि इन्होने कोई अपराध नही किया है, केवल इसलिए कैद का कष्ट भोग रहे है कि कौम को ऊँचा उठाना चाहते है, लोगो मे नई रोशनी लाना चाहते है। इसलिए उसने एक दिन इनसे चक्की पीसने से मना कर दिया। बोला-'आपसे चक्की पिसवाना एक ऐसा पाप है जिसका उत्तर मै खुदा को नही दे सकता। इस जेल मे दूसरे कैदी है, वे चक्की पीसते है, लेकिन उन्होने जुर्म किया है जिसकी सजा भुगत रहे है। आप तो अपनी अच्छाई का फल भोग रहे है। आपसे चक्की पिसवा कर मै नरक मे नही जाना चाहता।'

अब्दुल गफ्फार खा ने कहा—लेकिन चक्की पीसना तो जेल का नियम है। मै कोई काम नियम के विरुद्ध नही कर सकता।

दारोगा पर इस बात का और भी गहरा असर पड़ा। उसनें चक्की वाले जमादार को समझा दिया कि इन्हें गेहूँ की जगह पिसा-पिसाया आटा दे दिया करो। जब अफसर आए तो गेहूँ पीसने लगे, यह कह देना !

इस बात की जॉच करने पर गंगाराम की पोल खुल गई किन्तु प्रश्न यह था कि एक कैदी की बात मानी जाय या डिप्टी जेलर की। अन्तत फैसला हुआ कि इन्हे डेरा गाजी खॉ की जेलमें भेज दिया जाय।

डेरा गाजी खॉ की जैल मे इन्हे अनेक तरह से सुविधा रही। पहली बात तो यह कि इसमे अधिकतर कैदी राजनीतिक थे। सुपरिन्टेन्डेट भी भला था। उसने ऐसी व्यवस्था कर रखी थी कि कैदी अपने हाथो ही गेहूँ साफ करते, उसका आटा पीसते और स्वय ही रोटी-सब्जी बनाते थे। इससे कैदियो को भोजन अच्छा मिलता था।

दूसरे, इनकी बेडिया भी यहा हटा दी गई जिससे चलने-फिरने मे इन्हे सुविधा हो गई।

तीसरा लाभ यह हुआ कि इन्हे अन्य राजनीतिक बन्दियों की सगति मे रहने का अवसर प्राप्त हुआ जिससे ये हिन्दुओ और सिखों के सम्पर्क मे आए और दोनो ने एक दूसरे को नजदीक से परखा-समझा। डेरा गाजी खा जेल के अनुभव के बारे मे बादशाह खान ने अपनी जीवनी मे लिखा है, "यह मेरे ऊपर भगवान की कृपा थी कि मुझे डेरा इस्माइल खा से डेरा गाजी खा की जेल मे भेज दिया गया था : यदि मै वही रखा जाता तो जीवित रहना असम्भव था। वहां मुझे इस तरह के नेक और सभ्य लोगो की सगति कहा मिलती, जिसका मैने लाभ उठाया —सबसे बड़ा लाभ मुझे यह हुआ कि मै पजाब के लोगो से परिचित हो गया और उनसे मेरे अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो गए।"

इस सम्पर्क का एक और भी प्रभाव इनके जीवन पर पडा। डेरा गाजी खां की जेल मे दो श्रेणिया थी–एक सी–क्लास और सरी स्पेशल–क्लास। सीमाप्रान्त मे कैदियो के लिए इस तरह का श्रेणी–विभाजन नही था–सबको एक-सा ही समझा जाता था। डेरा गाजी खा की जेल मे जब अन्य राजनीतिक बन्दियो को पता चला कि अब्दुल गफ्फार खां भी कोई साधारण कैदी नही है, बल्कि देश के लिए, अंग्रेजो की खिलाफत करने के कारण बन्दी बनाए गए है तो उन्होने अपनी आवाज बुलन्द की कि इन्हे भी स्पेशल क्लास मे रखना चाहिए। अखबारो में भी यह शोर गुल किया गया। अन्त मे सरकार को झुकना पड़ा और इन्हे स्पेशल–क्लास मे रखा गया।

राजनीतिक कैदी का स्थान पा लेने और स्पेशल-क्लास मे रखे जाने के कारण उन्हें अन्य सारी सुविधाएं भी प्राप्त हुई जो स्पेशल-क्लास के बन्दियो को दी जाती थी। इन्हे मे एक सुविधा थी उपयुक्त चिकित्सा की। डेरा इस्माइल खा की जेल मे गन्दे भोजन से इनके दात खराब हो गए थे-उनमे पायोरिया रोग लग गया था। इसकी चिकित्सा के लिए इन्हे लाहौर जेल भेज दिया गया।

लाहौर-जेल मे इनके राजनीतिक विचारों में और भी प्रौढता आई क्योकि यही इन्हे आगा सफदर और लाला लाजपतराय जैसे वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओ से विचार-विमर्श करने का अवसर मिला। ये कांग्रेसी नेता रौलट बिल का विरोध करने के कारण बन्दी बनाए गए थे। इस सम्पर्क से न केवल उन्होने सीमान्त प्रदेश की जागृति का सम्बन्ध सम्पूर्ण देश की आजादी से जोडा बल्कि धर्म के बारे मे भी उनके विचार और परिष्कृत हुए।

यहा डाक्टर के व्यवहार से भी अब्दुल गफ्फार खां बहुत प्रभावित हुए। दांत कुछ खराब हो चले थे। डाक्टर ने दो एक दांत निकाल दिये और दवा लिख दी कि ये लेते रहेगे। इन्होने डाक्टर को फीस देनी चाही। यह भी कहा कि 'मै अमीर घराने का हूँ और मुझे आपको फीस देनी ही चाहिए।' इस पर डाक्टर ने कहा-'यह ठीक है कि आप फीस दे सकते है लेकिन मेरा भी तो कुछ फर्ज है। आप देश और कौम की सेवा करने वाले है। इसीलिए आप यह सजा पा रहे है। ऐसी स्थिति मे मुझे आपसे फीस लेना शोभा नही देता। यदि मै आपकी तरह देश सेवा के लिए बलिदान और त्याग नही कर सकता तो इतनी इन्सानियत तो मुझमे है ही कि मै उन लोगों की सेवा करूँ जो मुल्क की खिदमत मे लगे है।'

'शान्ति-शान्ति' का पाठ किया करता था। सिखों की जमात में वह बडे गर्व से कहा करता था— 'सिर जावे तां जावे, मेरा सिखी धरम न जावे।' यह बात बहुत छोटी है किन्तु अब्दुल गफ्फार-खॉ की पैनी दृष्टि में इसके पीछे छिपा महत्त्वपूर्ण अर्थ स्पष्ट हो गया। वे कहते है, "हिन्दुओ या मुसलमानो की अपेक्षा सिखो मे धर्म भाव इस लिए अधिक है कि उनका धार्मिक ग्रन्थ उनकी मातृभाषा में है और इस कारण वे शब्दों के अर्थो का यथार्थ भाव ग्रहण कर सकते है।" बात भी ठीक है सस्कृत या अरबी मे धर्म-ग्रन्थो के होने से साधारण जनता उनमें कही बातो को समझ नही पाती। धार्मिक ग्रन्थो की रचना तो लोगो की बोलचाल की भाषा मे ही होनी चाहिए ताकि सभी समझ सके। डेरा गाजी खॉ की जेल मे हिन्दुओ और सिखो के बीच रहने से इन जातियो के बारे मे अनेक गलत धारणाओ को भी मिटाने मे सहायता मिली। उन दिनो अग्रेजो ने पठानो के बारे में ऐसी ऐसी बाते फैला रखी थी जिनसे हिन्दू लोग पठानो से दूर ही रहे, उन्हे जगली जानवर समझे। ऐसी ही बातो में एक यह थी कि पठानो को हिन्दुओ का गला काट कर खून पीने मे बडा स्वाद आता है। यह एक ऐसी बात थी जिससे न केवल हिन्दू लोग बिदकते ही थे, बल्कि अपने बच्चो तक को पठानो के पास नही जाने देते थे। जेल मे जब हिन्दुओ ने एक पठान अब्दुल गफ्फारखॉ को देखा कि 'यह तो बडा अच्छा आदमी है, दूसरो पर रहम करता है, किसी को सताता नही' तो उनके मन मे जमी यह बात दूर हुई और उन्होने इसका सही प्रचार अपने लोगो में किया। इस तरह जातीय एकता की भावना प्रबल हुई।

खड़गसिह का साहस

इन्ही कैदियों मे एक सरदार थे खड़गसिह। खडगसिह और अब्दुल गफ्फार खॉ इस जेल मे बहुत दिनो तक साथ रहे। जब सारे कैदी छोड दिये गए तब भी इन दोनो को कैद की सजा भुगतनी पड़ी। इसकी बडी दिलचस्प कहानी है।

खडगसिह सरदार थे और स्पेशल क्लास के राजनीतिक कैदी। स्पेशल क्लास के राजनीतिक कैदियो को छूट थी कि वे अपने कपड़े पहन सकते थे। सिख लोग पगड़ी बाधते ही है। खडगसिह भी पगड़ी बाधा करते थे। कुछ दूसरे राजनीतिक कैदी थे जो गांधी जी द्वारा

चलाए गए असहयोग आन्दोलन मे गिरफ्तार किये गए थे। वे अपने सिर पर गाँधी टोपी रखते थे।

एक दिन जेल विभाग का सबसे बडा अफसर जेल का निरीक्षण करने आया। उसका नाम था कर्नल वाड। वाड ने जब कैदियो के सिर पर काली पगडियाँ और गाँधी टोपी देखी तो आग-बबूला हो गया। इसका कारण यह था कि साधारण कैदियो को सिर नगा रखना पडता था। यद्यपि ये लोग राजनीतिक कैदी थे किन्तु अंग्रेज कर्नल वाड यह कैसे बरदाश्त कर सकता था कि भारतीय कैदी अपना सिर ढके रखे। उसके सामने सिर पर पगडी या टोपी रखना अपने को उच्च बताना था जो वह सह नही सकता था। फल यह हुआ कि वाड ने आदेश किया कि सभी कैदी टोपी और पगडियाँ उतार दे।

जेल के अधिकारियो ने वाड के आदेशानुसार सभी कैदियो को कार्यालय मे बुलाया—एक एक करके। वहाँ उनको टोपियाँ या पगडियाँ उतरवा ली गई।

इस घटना से सभी लोग क्षुब्ध हो उठे। सबने तय किया कि यदि यह हमारी पगडिया और टोपियाँ उतरवाते है तो कोई कपडा नही पहनेगे। उस बैठक मे अब्दुल गफ्फार खाँ भी थे। ये न तो पगडी रखते थे, न टोपी पहनते थे। उन्होने उन लोगो से कहा—यद्यपि मै न तो टोपी पहनता हूँ, न पगडी तो भी मै आप लोगो के साथ हूँ। कहिए तो मै भी आप लोगो के साथ अपने कपड़े उतार दूँ।

पेशावर का डिप्टी कमिश्नर विलसन उसके पास पहुँचा । उसने कैदियों से बातचीत करनी चाही । सबकी ओर से सरदार खड़गसिह बातचीत करने चले । अन्य कैदी पास ही चुपचाप बैठ गए ।

विलसन ने डराते हुए कहा— तुम लोग टोपी और पगड़ी क्यों पहनते हो ?

खड़गसिह ने बड़ी निर्भयता से कहा—"सरकार ने हमें अधिकार दिया है कि हम अपनी इच्छानुसार वस्त्र पहन सकते है क्योकि हम कोई चोर-डाकू नही है, हम राजनीतिक कैदी है । इस तरह जब हमें मनमाना वस्त्र पहनने का अधिकार है, तो यह हमारी मर्जी पर ह कि हम टोपी पहने, पगड़ी पहने या कुछ और । दूसरे दखल देने वाले कौन होते है ?"

विलसन थोड़ा और कठोर हो गया । उसने कहा--तुम लोग टोपी और पगड़ी नही पहन सकते ।

खड़गसिह ने उसी निर्भयता से पूछा—क्या टोपी और पगड़ी वस्त्रो में नही है ?

"नही"—विलसन ने रुखाई से कहा ।

बात बढ़ चली । विलसन अपनी बात पर अडा रहा कि टोपी और पगडी पहनने की इजाजत नही दी जा सकती और खड़गसिह ने साफ कह दिया कि यदि टोपी और पगड़ी की इजाजत नही है तो हम कोई और वस्त्र भी नही पहनेगे, केवल लंगोटी बांधेगे ।

विलसन का रुख और कठोर हुआ । उसे देखकर खड़गसिह ने पास ही बैठे अन्य कैदियों की ओर देखा । सभी के चेहरे सुर्ख हो रहे थे । इशारा किया धीरे से खड़गसिह ने और बैठे सिख एक साथ ही जोर से चिल्ला पड़े–'बोले सो निहाल-सत् सिरी अकाल' ।

वातावरण ऐसा हो गया मानो सिख अब विलसन पर टूट पड़ेगे । यह हाल जब विलसन ने देखा तो वह उल्टे पाँव अपने दफ्तर मे भागा । दफ्तर मे जाकर उसने आदेश लिखा कि सभी कैदियो को दण्ड दिया जाय ।

दूसरे ही दिन जेल का सुपरिन्टेण्डेण्ट आया । उसने कहा कि यदि कैदी कपड़े नही पहनते हैं तो उनकी सजा ६ महीने और बढ़ा दी जायेगी ।

यहा अंग्रेज अफसर ने फूट से भी काम लिया। उस समय जेल मे हिन्दू-मुस्लिम सिख तीनो ही धर्मों के कैदी थे। अधिकारियो ने मुसलमानो को बहका लिया। उन्होने कपडे पहन लिए। केवल एक मौलवी मुहम्मद इस्माईल गजनवी ने हिन्दू-सिखो का साथ दिया।

परिणाम यह हुआ कि उनकी कैद नौ महीने बढा दी गई।

यह झगडा चलता रहा। जब नौ महीने बीतने को आये तो अधिकारियो ने फिर कहा कि यदि अब भी कपडे नही पहिनते हो तो जेल की सजा नौ महीने और बढा दी जायेगी और इसी तरह बढती रहेगी। इसका प्रभाव यह हुआ कि हिन्दुओ ने भी अबकी बार कपड़े पहन लिए किन्तु सिख अपनी टेक पर अडे रहे। तीसरी बार एक खड़गसिंह को छोडकर शेष सभी सिखो ने भी कपडे पहन लिए। उनको रिहा करने के पूर्व किसी और जेल मे भेज दिया गया।

अब जेल मे खड़गसिंह और अब्दुल गफ्फार खां ही रह गए।

कुछ दिनो बाद कर्नल बाड पुन आया। उसने खड़गसिंह को चिढाने के लिए कहा—वेल, खड़गसिंह सिंह!

सरदार खड़गसिंह ने उसी लहजे मे उत्तर दिया—यस बाड!

बाड को यह आशा नही थी कि खड़गसिंह, जो एक कैदी था, उसे ऐसा उत्तर देगा। वह समझता था कि दूसरे कैदियो की तरह वह भी झुककर सलाम करेगा और सम्मान देगा। इस उत्तर और उत्तर के लहजे से वह जलकर राख हो गया। परिणामस्वरूप खड़गसिंह को एक काली कोठरी मे बन्द कर दिया गया और उनको दिया जाने वाला दूध भी बन्द कर दिया गया।

गफ्फार खाँ का जुलूस निकाला तो चारों ओर इनका और भी नाम हो जायेगा और इनका प्रभाव लोगों पर और भी बढ जायेगा।

इस स्थिति को टालने के लिए उन्होने अब्दुल गफ्फार खॉ को समय से कुछ पहले ही छोड़ दिया--वह भी इस तरह कि किसी को भी इनके गॉव पहुँचने के पहले खबर न लगे ताकि कोई जुलूस न निकाला जाय। हुआ इस तरह कि मियावाली के जेल से (इन्हे डेरागाजी खॉ से आखिरी दिनो मे मियावाली के जेल में भेज दिया गया था) पुलिस पेशावर ले गई। पेशावर से इन्हे चारसद्दा नामक जगह पर मोटर व तागे में लाया गया। वहॉ से पुलिस इन्हे लेकर चली और इनके गॉव उतमानजई मे स्कूल के पास छोड़ गई।

गॉव वाले इन्हे देखकर प्रसन्न तो हुए किन्तु सरकार की इस चाल से इन्हे कुछ निराशा भी हुई क्योकि वे अपने प्रिय नेता का मनचाहा सम्मान न कर सके।

तीन वर्ष जेल में बिताने के बाद जब अब्दुल गफ्फार खॉ अपने गाँव वापिस आये तो इन्हे सबसे बड़ा दुःख अपनी मा को न पाकर हुआ। इनकी माता का निधन पहले हो चुका था जब ये दॉत लगवा-कर दुबारा डेरागाजी खॉ की जेल मे आये थे। इन्हे इस बात की खबर तो जेल में ही लग गई थी, किन्तु घर आकर जब इन्हे मॉ के दर्शन नही हुए तो इनकी आँखे बरस पड़ी।

इस बीच पठानो में नई चेतना उभर चुकी थी। विद्रोह की भावना उनमें अच्छी तरह व्याप्त हो चुकी थी और इसका श्रेय इनके बड़े बेटे गनी को भी था जो नौ वर्ष की उम्र मे ही सभाओं में अच्छा भाषण दे देता था। जब कभी गनी भाषण करता तो अन्त में कहता— "ऐ लोगो, आप लोग देखिए, यह अंग्रेज सरकार कितना जुल्म करती है! आपलोग इस सरकार से पूछिए तो सही कि मेरे बाप ने क्या अपराध किया है कि उन्हे कैद मे डाल रखा है! आखिर उनका गुनाह क्या है? आप लोग ही बताइए, मदरसे खोलना गुनाह है? लोगो को प्यार और मुहब्बत की बाते समझाना गुनाह है? अपनी कौम को ऊँचा उठाना गुनाह है? यही तो मेरे पिता करते थे जिसके लिए उन्हे कैद मिली है।"

नौ वर्ष की उम्र ही क्या होती है! फिर कोई बालक जब अपना दर्द इस उम्र मे सबके सामने रखे तो उसके साथ सहानुभूति

होनी आवश्यक ही है। पर गनी के साथ लोगो की सहानुभूति ही नहीं हुई, उनके भाषणो का उन पर ऐसा प्रभाव पडता था कि उन्होने तय किया कि इस मासूम बच्चे का बाप जिस उद्देश्य के लिए, जिस महान् कार्य के लिए जेल गया है, उसे वे पूरा करेंगे। परिणामतः उनमे शिक्षा के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया। साथ ही उनमे राजनीतिक चेतना और पारस्परिक एकता के भाव भी उठे।

जेल से आने के बाद लोगो ने एक जलसा कर इनका सम्मान किया। उन्हे 'फख्रे अफगान' की उपाधि दी गई। उस समारोह में इन्होने एक छोटा-सा भाषण दिया जिसने पठानो को चौका दिया-उन्हे सोते से जगा दिया। आज भी पठान जाति मे उनका वह छोटा-सा भाषण जागृति और विश्वास के अमिट भाव भरने को पर्याप्त है; और पठान ही क्यो, कोई भी व्यक्ति, कोई भी समाज या जाति, यदि उसका अतीत उज्ज्वल रहा है, यदि उसका इतिहास गौरवमय रहा है, तो इनके उस भाषण से कभी भी सचेत हो सकती है।

अपने भाषण के दौरान इन्होंने कहानी कही कि 'भेड़ो के बीच एक शेर का बच्चा पलने लगा था। भेड़ो मे पैदा होते समय से ही रहने के कारण वह भी भेड़ो की तरह ही बोलता और डरपोक बन गया था। वह अपने को शेर नही, भेड़ ही समझता था। बड़े होकर भी उसका यही हाल रहा, सिर्फ वह अपने को दूसरी भेड़ो से कुछ बड़ा मानता था। एक दिन एक शेर ने उस रेवड़ पर हमला कर दिया। दो एक भेड़ो को तो शेर ने दबोच लिया बाकी भेड़ें भाग चलीं। भागने वाली भेड़ो मे शेर भी था। दूसरे शेर को यह देखकर आश्चर्य हुआ। उसने उस शेर को लपक कर पकड़ा। उसे नदी के किनारे ले गया। वहाँ पानी मे उसको उसका चेहरा दिखाया और कहा— देख तो सही तू अपने चेहरे को, भेड़ है या शेर ?

खुदाई खिदमतगार | 4

तीन वर्षों तक जेल की यन्त्रणाओं को सहने के बाद जब बादशाह खान कैद से बाहर आए थे, तो कुछ दिन उन्होंने अपने पुराने शिक्षा-कार्य को आगे बढ़ाने की कोशिश की। उनके लोगों में शिक्षा के प्रति जागरूकता पहले से अधिक उत्पन्न हो गई थी, लेकिन पारिवारिक परिस्थितियों के कारण यह कार्य कुछ दिनों के लिए रुक गया।

१९२६ में अपनी बड़ी बहन के आग्रह पर बादशाह खान हज के लिए रवाना हो गए। इस धार्मिक यात्रा में उन्होंने अनेक मुस्लिम देशों का भ्रमण किया, किन्तु उनके साथ दुर्भाग्य लगा ही रहा। इसी यात्रा के दौरान उनकी दूसरी पत्नी का देहावसान हो गया।

कुछ दिनों तक हज यात्रा के दौरान भ्रमण करने के पश्चात् वे कराची होते हुए अपने गांव लौट आये। इसके बाद उन्होंने अपनी भाषा में एक अखबार निकालना आरम्भ किया—'पश्तून'। 'पश्तून' का उद्देश्य यही था कि कौमी एकता कायम की जाय और पठानों में, जो एक बिखरी हुई जाति थी, नई जागृति उत्पन्न की जाय। अखबार से दो लाभ थे—पहला तो यह कि इसके माध्यम से बादशाह खान अपने विचार दूसरे लोगों तक पहुँचा सकते थे, दूसरा यह कि उनकी बात जानने के लिए पढ़ने-पढ़ाने की दिशा में जन-मानस और भी रुचि ले सकता था। 'पश्तून' का प्रचार काफी हुआ और जहां-जहां भी पठान जाति के लोग रहते थे, वहां इस अखबार को मंगाया जाता था।

इन बातो से अंग्रेज चिढते थे। अमानुल्लाह खाँ से वे इतना चिढ गए कि उन्हे अपना देश छोडकर इटली जाना पड़ा। इस काय मे कट्टर मुल्लाओ का भी हाथ था। लेकिन 'पश्तून' का प्रचार और भी होता गया।

उन्हीं दिनों अफगानिस्तान और अंग्रेजो में ठन गई। बादशाह खान ने अफगानिस्तान का पक्ष लिया क्योकि ये जानते थे कि अफगानिस्तान की भलाई मे ही पठान कौम को भलाई है और पठानो का पक्ष लेने के कारण ही अंग्रेज अफगानिस्तान के विरोधी बने थे। परिणामस्वरूप अफगानिस्तान की सहायता लेने के लिए बादशाह खान भारत आये। यहाँ वे अनेक नेताओ से मिले। मुस्लिम लीग के नेताओ से पहले मिले। इन्हे आशा थी कि मुसलमान होने के नाते मुस्लिम लीग उनका खुला और भरपूर साथ देगी।

बादशाह खान को मुस्लिम लीग से घोर निराशा हुई। इसका कारण था कि बादशाह खान उस समय तक मुस्लिम लीग को समझ नही पाए थे। वास्तविकता यह है कि मुस्लिम लीग की स्थापना मुसलमानो मे जागृति के लिए नही हुई थी। उसकी स्थापना के पीछे अंग्रेजो की शह थी ताकि कांग्रेस के मुकाबले में एक संस्था पनपती रहे। यह सच है कि कांग्रेस धार्मिक संस्था नही थी किन्तु यह भी सच है कि उसमे हिन्दुओ की संख्या अधिक थी। अंग्रेज डरते थे कि यदि भारत वालो मे एकता रही तो यह एकता उनके लिए घातक होगी। इसी कारण वे मुस्लिम लीग को प्रोत्साहन देते रहते थे।

अफगानिस्तान के बारे मे मुस्लिम लीग अंग्रेजो के साथ थी। इसका कारण यह था कि भारतीय मुसलमान सदा से पठानो को अपने से अलग मानते आये है। यही अंग्रेजो के शासन मे हुआ और यही हुआ पाकिस्तान के शासन मे।

इन सारी बातो का परिणाम यह हुआ कि बादशाह खान को अफगानिस्तान के लिए मुस्लिम लीग के नेताओं से कोई मदद नही मिली। इतना ही नही, मुस्लिम लीग के एक बड़े नेता मुहम्मद अली से नोक-झोक भी हो गई। मुहम्मद अली ने बादशाह खान से कह दिया—'हम पठानो की परवा नही करते।'

स्वाभिमानी बादशाह खान इसे कब सहन कर सकते थे। उन्होने किसी दूसरे के सहारे तो पख्तूनो के कल्याण का बीड़ा उठाया

नहीं था। वे यह भी जानते थे कि लीगी नेता अंग्रेजों के इशारे पर चलते हैं। इसीलिए बादशाह खान ने मुहम्मदअली को खरी-खरी सुना दी—'यदि आप लोग पठानों की कद्र नहीं करते, तो हम भी ऐसे नेताओं को नहीं पूछते हैं जो दूसरों के बहकावे में आकर अपना उल्लू सीधा करते है और अपनी ही कौम के साथ गद्दारी करते है।'

मुस्लिम लीग से तो बादशाह खान निराश हो चले किन्तु इस यात्रा से एक लाभ यह हुआ कि उनका परिचय जवाहरलाल नेहरू से हुआ। यह घटना १६२८ की है जब लखनऊ मे कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। उस समय तक बादशाह खान को कांग्रेस से मदद लेने या कांग्रेस मे मिलने का खयाल नहीं आया था। लेकिन परिस्थितियां ऐसी बनती जा रही थी कि अन्ततः उन्हे कांग्रेस के मंच पर आना पड़ा।

भारत मे कई जगह लोगों से मिलने और लखनऊ में कांग्रेस का अधिवेशन देखने के बाद बादशाह खान अपने गांव लौट गए। इसी बीच अफगानिस्तान की विजय हुई। इस खुशी मे हस्तनगर के लोगों ने एक सभा की। दो जुलूस निकाले गए और तय रहा कि दोनों जुलूस बादशाह खान के गांव उतमानजई मे मिलेंगे जहां सभा की जायेगी। इस सभा मे बहुत बड़ी संख्या मे लोगों ने भाग लिया।

दूर किया जाय। इस दृष्टि से जब हम तत्कालीन पख्तून या पठान जाति पर दृष्टि डालते है तो बादशाह खान के शब्दो मे ही "पठानो मे दलबन्दियाँ, आपस की शत्रुता, द्वेष व ईर्ष्या, कुरीतियाँ और बुरी प्रथाएं विद्यमान थी।" उन लोगो के बीच आये दिन मुकदमे-बाजी होती, झगडे होते; और इस प्रकार लोग जो कुछ कमाते थे, वह इन झगडे-फसादो मे स्वाहा हो जाता। इन बातो का प्रभाव यह पडा था कि आम जनता गरीब और दुःखी थी।

आर्थिक विवशताओ, सामाजिक कुरीतियों और गुलामी की विषमताओ से कराहती पठान जाति के उद्धार के लिए बादशाह खान तथा इनके सहयोगियो ने 'खुदाई खिदमतगारी' नामक सस्था की नीव डाली। खुदाई खिदमतगारी का अर्थ है भगवान् या खुदा की सेवा करना, लेकिन भगवान को तो किसी की सेवा की कोई आवश्यकता नही है। तो यह सस्था किसकी सेवा करे? वास्तविकता यह है कि दु.खी और पतित की सेवा ही भगवान् की सच्ची सेवा है। इसीलिए खुदाई खिदमतगार के लिए आवश्यक था कि वह दुखियो की सेवा करे, गिरे हुओ को ऊपर उठाए और राह भूले हुओं को सही राह दिखाये। इसी उद्देश्य को लेकर यह सस्था स्थापित की गई।

प्रत्येक खुदाई खिदमतगार को संस्था का सदस्य बनने के पहले कई बातो की प्रतिज्ञा लेनी पड़ती थी। सबसे पहली बात थी मानव मात्र की सेवा की। खुदाई खिदमतगार कहता था 'चूंकि खुदा को किसी की मदद की जरूरत नही है इसलिए मैं उनकी सेवा नि.स्वार्थ और बिना किसी बदले की भावना के करूंगा जिन्हे खुदा ने बनाया है।' दूसरी प्रतिज्ञा अहिसा और क्षमा की लेनी पडती थी। खुदाई खिदमतगार कहता था, 'मै खुदा के नाम पर प्रतिज्ञा करता हूँ कि किसी प्रकार की हिसा नही करूंगा, किसी को सताऊंगा नही, न किसी से अपने प्रति किये गए किसी अपकार का बदला लूंगा। मुझ पर चाहे कोई कितना ही अत्याचार करे, मैं उसे क्षमा कर दूंगा।' इसके अतिरिक्त संस्था का सदस्य बनने वाले को आपसी फूट, शत्रुता, दलबन्दी, मार-पीट से दूर रहने की भी शपथ लेनी पडती थी। उसे यह प्रतिज्ञा भी लेनी पडती थी कि वह बेकारी की जिन्दगी नही बिताएगा, शारीरिक मिहनत करके अपने लिए रोटी कमायेगा तथा समाज में प्रचलित कुरीतियो, अन्धविश्वासो तथा

बुराइयों को दूर करने में सच्चे मन से लगेगा और स्वयं का जीवन सादा और पवित्र रखेगा।

बादशाह खान जानते थे कि जनता की सेवा में लगने के लिए अपने व्यक्तिगत जीवन को निष्कलंक तथा सादा रखना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक नेता का जीवन आदर्श नही होगा, जनता की दृष्टि मे उसका जीवन सादगी, ईमानदारी और पवित्रता का उदाहरण नही बनेगा, तब तक जनता का वह विश्वास प्राप्त नही कर सकता। ऐसी स्थिति मे उसका उद्देश्य असफल रहेगा और जनता की सेवा का कार्य नही हो सकता।

यहाँ हम देखते है कि भारत मे गांधीजी के सिद्धान्तो और सीमान्त प्रदेश मे बादशाह खान के उसूलो मे कितनी समानता है। दोनो ने अहिंसा, क्षमा तथा सादा व पवित्र जीवन पर जोर दिया। इतना ही नही, दोनो का व्यक्तिगत जीवन इतना आदर्श रहा कि उनके इस त्यागमय एव पवित्र जीवन के प्रति स्वत मस्तक झुक जाता है। हम जानते है कि महात्मा गांधी ने भी जीवन भर गरीबो दलितो के उत्थान का कार्य किया। उन्होने स्वय अपने को एक सम्पन्न सामान्य नागरिक की स्थिति मे रखा। कपडो के नाम पर धोती-चद्दर से अधिक वस्त्र नही धारण किये। भोजन भी अत्यन्त सादा रखा। बादशाह खान ने भी अपना जीवन अत्यन्त सादा बना रखा है। अभी पिछले अक्टूबर मे जब वह भारत आये तो हम भारतवासी यह देखकर दग रह गए कि इतने बडे नेता ने अपने लिए केवल दो जोडी कपडे लिये थे—वह भी पाजामा-कुर्ता।

खुदाई खिदमतगार नामक संस्था की स्थापना पठानो के लिए अत्यन्त काम की सिद्ध हुई। इतना ही नही कि इससे पख्तूनो में जागृति फैलाने मे सहायता मिली, बल्कि इस संस्था ने आगे चलकर अपने राजनीतिक अधिकारो के लिए अंग्रेजो से संघर्ष किया तथा आजादी के बाद पख्तूनी स्वाधीनता के लिए वह आज भी पाकिस्तान से संघर्ष कर रही है।

के २२ वर्षो बाद जहाॅ भारत को प्रगति करनी चाहिए, वहाँ इसकी स्थिति और भी बदल गई है। आपसी कटुता, अविश्वास और गरीबी की आग मे यहाॅ के करोडो लोग तबाह हो रहे है। ऐसी स्थिति में एक नया संगठन एक नई सस्था स्थापित की जानी चाहिए जो लोगों को बुराइयो से उठाकर अच्छाई का रास्ता दिखाये। इसीलिए खुदाई खिदमतगार के समान ही एक सस्था का गठन भारत में किया गया है।

कांग्रेस में मिलना | 5

सन् १९२९-३० के वर्ष भारतीय स्वाधीनता संग्राम में अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। इन्हीं वर्षो मे कांग्रेस ने लाहौर के अधिवेशन मे पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया था, गांधीजी ने ऐतिहासिक दांडी यात्रा की थी और बादशाह खान अंग्रेजो और मुस्लिमो से पूर्णतया निराश होकर कांग्रेस मे मिले थे।

लेकिन कांग्रेस मे मिलने के पहले पठानो पर अंग्रेजो ने भयंकर जुल्म किये। लाहौर के कांग्रेस अधिवेशन मे बादशाह खान शरीक हुए थे। उनके साथ और भी पठान युवक आये थे। अभी तक वे लोग कांग्रेस मे मिले नही थे किन्तु इतना महसूस कर रहे थे कि जिस तरह खुदाई खिदमतगार पख्तूनिस्तान की आजादी तथा पठानों की भलाई के लिए कार्यक्षेत्र मे कूद पड़े है, उसी तरह कांग्रेस सारे देश की आजादी के लिए कटिबद्ध है। यह प्रेरणा बादशाह खान को नया साहस व स्फूर्ति देती थी। बादशाह खान लाहौर अधिवेशन मे दो बातो से अधिक प्रभावित हुए—पहली बात यह थी कि कांग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया और दूसरी बात थी कि इस अधिवेशन में उन्होंने देखा कि देश की आजादी के लिए पुरुष ही नहीं, महिलाएँ भी आई हुई थी। इन बातो से प्रभावित होकर पठान युवकों ने लाहौर मे ही अपनी एक बैठक की और निश्चय किया कि वे अपने प्रान्त मे जाकर इसी तरह जनता की सेवा मे लगेंगे।

मुहम्मद अली की कुछ आलोचना कर दी। इस पर मामला इतना बढ़ा कि यदि उस मच पर बादशाह खान और दूसरे पठान नही होते तो मार-पीट की नौबत आ जाती क्योंकि मुहम्मद अली भी उत्तेजित हो उठे थे।

बाद में बादशाह खान ने मुहम्मद अली से गाँधीजी की सहिष्णुता का उल्लेख करते हुए कहा—आप मुसलमानो के बड़े नेता है। यदि आप भी गाँधीजी की तरह धैर्य का आचरण करे तो सबके लिए अच्छी बात होगी। आपका सम्मान और भी बढ जायेगा।

इतना सुनना था कि मुहम्मद अली बौखला उठे। कहने लगे, तुम जंगली पठान, मुझे नसीहत देने आए हो कि मै तुमसे तहजीब और सभ्यता की बाते सीखूँ।

अपमान की यह कडवी घूँट बादशाह खान चुपचाप पी गए किन्तु उन्होने बदले मे एक शब्द भी नही कहा। उन्होने तो अहिसा और प्रतिशोध न लेने का व्रत ले रखा था। फिर यदि वह स्वय ही अपनी आलोचना सुनकर बौखला उठते या बदले में कड़ी बात कहते तो उनके आदर्श का महत्व ही क्या था। यही तो वे मुहम्मद अली को समझा रहे थे कि कोई हमे कड़वी बात कहे तो हमे धैर्य नही छोड़ना चाहिये।

इस घटना का प्रभाव यह पड़ा कि बादशाह खान ने इसके बाद कभी मुस्लिम लीग के खिलाफत आन्दोलन की बैठको में भाग नही लिया।

खुले विद्रोह की ओर

लाहौर से लौटने के बाद बादशाह खान ने अपने इलाके में जन-जागृति का कार्य तेजी से आरम्भ कर दिया। वे जगह-जगह दौरे लगाने लगे। जहाँ जाते वही सैकडो और हजारों की सख्या मे लोग खुदाई खिदमतगार बन जाते। आग की तरह उनका यह आन्दोलन सारे प्रान्त मे फैल गया। बादशाह खान के प्रयत्नो से जो आन्दोलन सीमा प्रान्त मे फैला उसके दो प्रभाव स्पष्ट लक्षित होने लगे—लोगों को अंग्रेजो का भय बिल्कुल नही रहा तथा उनमे आजादी के लिए असीम उत्साह उत्पन्न हो गया।

अंग्रेज सरकार की आँखे भी बादशाह खान पर अधिक रहने लगी। अब जहाँ-जहाँ ये जाते इनके पीछे खुफिया पुलिस के अफसर

ननान किये जाने। वास्तविकता यह थी कि अंग्रेजो को खतरा महसूस होने लगा था। वे जानते थे कि पठान ताकत मे कम नही हैं, उनके पास भी हथियार हैं। यदि उनमे कोई कमी है तो इतनी ही कि एकता नही है। बादशाह खान ने उनमे एकता भर दी थी। लगता था सारी पठान जाति एक ही बन गई है। कुछ महीनो तक यह कार्य चलता रहा और अग्रेजो का धीरज टूटता रहा। अंत मे जब उन्होने देखा कि बादशाह खान के दौरे तो बन्द होते नही और दिन प्रतिदिन पठानो मे जागृति बढती जा रही है, तो इसे रोकने के लिए एक दिन चीफ कमीश्नर ने उन्हे पत्र लिखकर मना कर दिया कि वे आन्दोलन बन्द कर दे।

इस पर बादशाह खान ने उत्तर दिया कि वे किसी राजनीतिक आन्दोलन का सचालन नही कर रहे है बल्कि सामाजिक सेवा का कार्य कर रहे हैं और असल मे यह कार्य सरकार को करना चाहिए था। इसलिए सरकार को इतना फर्ज तो निभाना ही चाहिए कि वह इस काम मे मदद करे, इसका विरोध न करे।

पर अंगेज कब चाहते थे कि भारतीयो के लिए सामाजिक सेवा का कार्य सचमुच ही किया जाय। चीफ कमीश्नर ने इन्हे पुन. मना करते हुए लिखा कि सामाजिक कार्य होते हुए भी तुम्हारे जलसों और भाषणों से पठानो मे एकता आ रही है। इसमे हमें खतरा दिखाई दे रहा है। हो सकता है सगठित होकर पठान कौम किसी दिन हमारे ही खिलाफ उठ खड़ी हो!

उसी दिन अंग्रेजों ने पेशावर में भी कुछ खुदाई खिदमतगारों को गिरफ्तार किया। इधर बादशाह खान की गिरफ्तारी की बात चारों ओर फैल गई थी। लोग उत्तेजित हो उठे। पेशावर के किस्सा खानी बाजार में इस दिन अर्थात् २३ अप्रैल १६३० को ऐसा उपद्रव हुआ जो स्वाधीनता सग्राम की एक अनूठी कहानी है।

आइए हम थोडा सा यह देख ले कि अंग्रेजों ने किस तरह किस्सा खानी बाजार मे और उतमान जई में जुल्म ढाए।

पेशावर शहर से कुछ दूर सैनिकों की छावनी थी। जब किस्सा खानी बाजार में लोगों की उत्तेजना की खबर अंग्रेज शासकों को लगी तो सेना को हुक्म मिला कि वह लोगों के विद्रोह को कुचल दे। गोरे सैनिक तो इसके लिए तैयार बैठे ही थे। पंजाब के जलियांवाला बाग मे उन्होने मासूम लोगों को घेर कर गोलियो से भून रखा था। आदेश मिलते ही पेशावर छावनी से सैनिको की दो टुकडियाँ हथियार बन्द होकर चलीं-एक टुकड़ी गोरों की थी, दूसरी गढवाली भारतीय सैनिकों की। शहर मे जब यह समाचार मिला कि बन्दूकधारी सिपाही आ रहे है तो लोगो मे उत्तेजना और बढ़ गई। हिन्दू, मुसलमान, पठान, सिख सभी एक हो गए। उन्होंने मिलकर—कन्धे से कन्धा मिलाकर—एक दीवाल-सी बना दी और रास्ता रोक लिया। गोरे तो यह चाहते थे हो कि भारतीय एक जगह ही भून डाले जायँ। फिर क्या था, उन्होंने गोलियाँ बरसानी शुरू की और लोगो को कुचलते हुए उनकी गाड़ियाँ आगे बढ़ चली। अनेक लोग शहीद हो गए।

मोटरकारों के आगे लोगो की दोवाल टूट गई—बहुत सारे कुचले गए। उन्हे कुचलते हुए कारे आगे बढी। लेकिन जोर फिर भी कम नही हुआ। इसी जोश में कुछ लोगों ने एक कार को रोक कर उसमे आग लगा दी। कार चारो ओर से बन्द थी। परिणामस्वरूप उसमें बैठे चार गोरे जल मरे। गोरो की कार में आग लगनी थी कि सभी अंग्रेज सैनिक पागल उठे। भारतीयों का यह साहस कि वे गोरों को आग मे भून डाले। दनादन चारों ओर गोलियो की बौछार शुरू हो गई, सैकड़ो मारे गए, लेकिन किसी ने उफ् न की। सीने पर गोलियाँ खा-खा कर आजादी के दीवाने मातृभूमि की गोद में सदा के लिए सो गए।

इधर भारतीय सैनिकों को भी देखिए। किस्सा ख्वानी बाजार की घटना शहर में चारों ओर फैल गई। सनसनी और उत्तेजना का वातावरण सभी जगह व्याप्त हो गया। ऐसा लगा कि सारा पेशावर खौल उठा है अपने शहीद भाइयों का बदला चुकाने के लिए। उधर अंग्रेजों ने छावनी से और हथियारबन्द सैनिक बुला लिए। इन्हीं टुकड़ियों में कुछ सैनिक गढ़वाली भी थे। गढ़वाली सैनिकों को चौक बाजार में तैनात किया गया। उन्हें हुक्म मिला-'गोली चलाओ।' गढ़वाली सैनिक देखते रहे। दुबारा हुक्म मिला—गोली चलाओ। लेकिन वे भारतीय थे, अपने ही भाइयों के खून का पाप अपने सिर पर नहीं लगा सकते थे, उनमें भी स्वाभिमान था, देशभक्ति थी। गढ़वाली सैनिकों ने इनकार कर दिया।

बादशाह खान को इसी काले कानून के अन्तर्गत ३ साल की कैद दे दी गई। उनके साथ और भी सैकड़ों लोग जेल में ठूंस दिये गए।

अत्याचार की यह कहानी यहीं नहीं समाप्त होती। उन दिनों लोगों में आतंक जमाने के लिए अंग्रेज इधर-उधर जाकर गाँवों को घेर लेते। सबको एक साथ बैठा देते और कहते कि तुम खुदाई खिदमतगार, हो इसीलिए तुम्हे जेल भेजेंगे। इस पर कोई यह कहता कि 'मैं खुदाई खिदमतगार नही हूँ' तो अंग्रेज कहते कि यदि तुम खुदाई खिदमतगार नही हो तो अपने अंगूठे का निशान इस रजिस्टर पर लगा दो। इस तरह अंगूठा-निशान लगाने पर व्यक्ति को छोड़ दिया जाता था।

लेकिन यह अपमान की बात थी। धीरे-धीरे लोगों में इसका विरोध फैलता गया। यह विरोध इतना फैला कि जो कोई अंगूठे का निशान लगाता, उसका अपमान गाँव वाले करते। एक औरत ने तो अपने पति को इसी लिए घर में नही घुसने दिया कि वह डरकर अपने अंगूठे का निशान लगा आया था। इसी तरह उतमानजई के ही एक व्यक्ति हाजी शाहनवाज ने कैद से छुटकारा पाने के लिए जमानत जमा करा दी। जब वे गाव पहुँचे तो लोगो ने लताड़ा--'तुम्हे शर्म नही आती, जिन अंग्रेजो ने हमारे घर जला दिये, हमे जानवरों की तरह बेरहमी से पीटा, हमारी सरे आम बेइज्जती की और जो आज भी हमारे प्रान्त के भाइयो को जोरो-जुल्म से दबा रहे है, तुम उनको ही जमानत देकर आ रहे हो! जहालत की इस जिन्दगी से मौत अच्छी है!' गाँव वालो की इस लताड़ का हाजी साहब पर इतना असर पडा कि उन्होने आत्महत्या कर ली!

ये घटनाएँ स्पष्ट करती है कि किस तरह लोगों की भावना अंग्रेजो के विरुद्ध हो गई थी। और इसका एक कारण अंग्रेजो की दमनकारी नीति भी थी। यदि अंग्रेज केवल खुदाई खिदमतगारों को ही पकड़ते तो यह विद्रोह अधिक नही उभरता, लेकिन उनके अत्याचारो और दमन ने उन लोगो को भी गोरो के विरुद्ध कर दिया जो खुदाई खिदमतगार नही थे। गोरो ने एक ओर तो पठानो पर जुल्म ढाए, दूसरी ओर वे न किसी को उस इलाके में जाने देते थे, न उस इलाके से किसी को बाहर ही निकलने देते थे, ताकि वहाँ की खबरे बाहर न जा सके और दुनियाँ उनके जुल्मो को जान न सके, उन पर परदा ही पडा रहे।

इन अत्याचारो का प्रभाव यह पड़ा कि खुदाई खिदमतगारों की संख्या बढ़ती गई। जिस समय बादशाह खान अपने गाँव मे कैद

किये गए थे, उस समय उनके गांव में केवल ५०० खुदाई खिदमतगार थे किन्तु तीन साल बाद जब ये जेल से छूटकर आये, तो आस-पास मिलाकर खुदाई खिदमतगारो की संख्या ४० हजार तक जा पहुंची थी !

पर अंग्रेज अपने जुल्मो से बाज नही आते थे। किस्सा खानी बाजार की घटना के कुछ महीनो बाद मरदान जिले के टक्कर नामक गांव मे अंग्रेजो ने बेहद जुल्म ढाए। वहाँ भी लोगो पर गोली–वर्षा की गई, मकानात जलाए गए। इसी तरह बन्नू जिले के एक गांव मे सभा मे बैठे लोगो पर अचानक गोलियां चलाई गई जिससे सैकडो शहीद हुए। कइयो को गिरफ्तार किया गया और उन्हे १४-१४ साल की सजा दी गई। इतना ही नही, बन्नू शहर की नाका बन्दी इस तरह की गई कि न तो कोई शहर से बाहर जाये, न भीतर आ सके। उस समय शहर वालों के लिए खाने-पीने तथा उनके मवेशियों के लिए चारा बाहर के गांवो से ही आता था। डिप्टी कमीश्नर की योजना थी कि इस तरह शहर को घेर देने से लोग और जानवर भूख-प्यास से अपने आप मर जायेगे, कोई यह नही कहेगा कि वे गोरो की गोलियो से मरे है। बाद मे कह दिया जायेगा कि किसी महामारी से शहर के निवासी मरे है।

जब यह तय हो गया कि मुस्लिम लीग से मदद ली जानी चाहिए तो सीमान्त प्रदेश के कुछ लोग भारत आए और उन्होने मुस्लिम लीग के नेताओ से वहाँ की सारी बाते बताईं। यह भी बताया कि बादशाह खान और दूसरे लोगों को गोरों ने कैद में डाल रखा है तथा उस प्रदेश में गोलियो के जोर से आतक फैला रखा है। इस कार्य के लिए पठान लोग शिमला, दिल्ली और लाहौर मे मुस्लिम लीग के नेताओं से मिले। इतना ही नही, ये लोग सारे भारत मे मुस्लिम लीग के नेताओं से मिलने और उन्हे अपनी ओर खीचने के लिए दौड़-धूप करते रहे, लेकिन परिणाम कुछ नही निकला। पख्तूनों की लडाई अंग्रेजों से थी और गोरो के पिछलग्गू मुस्लिम लीग के नेताओं मे इतना साहस नहीं था कि वे अपने ही बिरादरी के पख्तूनों की मदद के लिए अंग्रेजो से लोहा ले। इसका मुख्य कारण यह था कि मुस्लिम लीग को अंग्रेजो ने पाला ही इसलिए था कि वे हिन्दुओ के विरुद्ध खड़े होते रहे और अंग्रेज यह कह सके कि चूँकि भारत के निवासी आपस में लडते-झगड़ते है, इसलिए इस योग्य नही कि उन्हे स्वतत्र किया जा सके।

ये लोग इस तरह मुस्लिम लीग से निराश होकर वापिस लौट गए। जेल में जब पुनः बादशाह खान से मिलने का अवसर आया तो सारी बाते उनसे कही गईं। अब बादशाह खान ने सलाह दी कि उन लोगो को काग्रेसी नेताओ से सलाह माँगनी चाहिए। फलस्वरूप खुदाई खिदमतगार पुनः भारत आये और काग्रेस से मदद मागी। काग्रेसी नेताओं ने कहा कि यदि पख्तून कांग्रेस में मिल जायँ तो उनकी सहायता की जी सकती है काग्रेस मे मिलने का अर्थ था कि पख्तून केवल अपनी आजादी के लिए अंग्रेजों का विरोध न करे, बल्कि सारे देश की आजादी के लिए वे काग्रेस का साथ दे और काग्रेस की नीतियों का समर्थन करे। खुदाई खिदमतगारों को कांग्रेस का यह प्रस्ताव पसन्द आया। उन्होने घोषणा कर दी कि वे काग्रेस मे मिल गए है।

कांग्रेस का एक सिद्धान्त अहिसा का था। कांग्रेस में मिलने का मतलब था कि पठान भी अहिसक बने। अंग्रेजों को पहले विश्वास नही था कि खुदाई खिदमतगार कांग्रेस में मिल जायेगे। वे यह भी कहा करते थे कि यदि पठान अहिसक बन जायेगे तो और

भी खतरनाक होंगे और उन पर काबू पाना असम्भव हो जायेगा। इसीलिए जब अंग्रेजों ने सुना कि पठान लोग सामूहिक तौर पर कांग्रेस में मिल गए हैं तो उन्हें बहुत पछतावा हुआ। डिप्टी कमीशनर ने बादशाह खान को कहलाया कि वे जो सुविधाएँ चाहते हैं, उन्हें दे दी जायेगी, किन्तु कांग्रेस में न मिलें। बादशाह खान ने जेल में ही अनेक लोगों से बातचीत की। डिप्टी कमीशनर के प्रस्ताव पर विचार हुआ। कुछ मुस्लिम भी थे। उन लोगों ने राय दी कि अंग्रेजों की बात मानकर पख्तूनिस्तान में ही राजनीतिक सुविधाएँ लेकर बादशाह खान को कांग्रेस का साथ छोड़ देना चाहिए। लेकिन बादशाह खान मुस्लिम लीग की असलियत जान चुके थे। उन्होंने दृढ़ निश्चय से अंग्रेजों का प्रस्ताव ठुकरा दिया और कांग्रेस में मिलने की बात पक्की रखी। उन्होंने सरकार को स्पष्ट लिख दिया—'एक बार हमने कांग्रेस में मिलने का निश्चय किया है, वह टूट नहीं सकता, और दूसरी बात यह है कि अंग्रेज हम पर विश्वास नहीं करते, इसलिए हम भी उन पर विश्वास नहीं कर सकते।'

इस तरह कांग्रेस का विस्तार सीमा प्रान्त तक हो गया। पठानों को भी अहिंसा में विश्वास रखना पड़ा। इस विषय में बादशाह खान कहते हैं—'सीमाप्रान्त में पहले हिंसा की अनेक घटनाएँ होती थीं। अहिंसा का सन्देश वहाँ बाद में पहुँचा। हिंसा के बाद अंग्रेजों का दमन-चक्र चलता था, जिससे बहादुर लोग भी कायर हो गए थे। लेकिन जब अहिंसा का शुभागमन हुआ तो कायर से कायर पठान भी बहादुर बन गए। इससे पहले पठान लोग सिपाहियों और जेल से इतना डरते थे कि उनमें सिपाहियों से बात-चीत करने का भी साहस नहीं था, लेकिन अहिंसा के पाठ ने उनमें साहस, वीरता और भाईचारे की भावना को इस हद तक जन्म दिया कि उनमें भी हँसी-खुशी जेल जाना पसन्द करने लगे।"

दमन और पुनः गिरफ्तारी

6

खुदाई खिदमतगारों के कांग्रेस में मिल जाने के कारण पहली बात यह हुई कि सीमा प्रान्त मे होने वाली घटनाओ की जॉच के लिए एक समिति बनाई गई। समिति के नेता बिट्ठल भाई पटेल थे। अभी बादशाह खान जेल में ही थे। जब यह समिति सीमाप्रान्त में हुई गोली-वर्षा तथा अन्य अत्याचारो की जॉच के लिए चली तो उसे अटक ही रोक दिया गया। सरकार डरती थी कि यदि उसके जुल्मो की बात दुनिया जान जायेगी तो उसकी बदनामी होगी। परिणाम-स्वरूप समिति को सीमाप्रान्त में घुसने की स्वीकृति नही दी गई। इन मजबूरियों से समिति ने अपना कार्य रावलपिण्डी में जाकर शुरू किया। वही उसका कार्यालय खुला जहॉ से समाचार एकत्र किये गए। इन समाचारो के आधार पर समिति ने अंग्रेजों द्वारा सीमाप्रान्त में किए गए अत्याचारो का विस्तृत ब्यौरा तैयार किया और रिपोर्ट बनाई।

इस रिपोर्ट को जब कांग्रेस ने छपवाना चाहा तो सरकार ने रोक दिया। लेकिन कांग्रेस ने अमरीका और इंगलैण्ड मे इस रिपोर्ट को खूब प्रसारित किया। इससे जहॉ एक ओर अंग्रेजो के अत्याचारों के कारनामे सामने आये, वही दूसरी ओर खुदाई खिदमतगारो और बादशाह खान का नाम दुनिया भर में फैल गया।

यह सन् १९३० की ही बात है। असहयोग आन्दोलन के हजारों कांग्रेसी जेलो मे बन्द थे। भारत के वायसराय लार्ड इर्विन थे। २५ जनवरी १९३१ को गॉधीजी जेल से छोड़े गए और ४ मार्च को गॉधी-इर्विन समझौता हुआ। इस समझौते के अनुसार सरकार ने आश्वासन दिये कि—

१. केवल उन बन्दियो को छोड़कर जिन पर हिंसात्मक कार्यवाही का अपराध सिद्ध हो चुका है, शेष सभी राजनीतिक बन्दी रिहा कर दिये जायेगे।

२. राजनीतिक आन्दोलन को दबाने के लिए जो भी अध्यादेश लागू किये गए हैं, उन्हें सरकार वापिस ले लेगी और जो मुकदमे राजनीतिक लोगों पर चलाए गए हैं, वे भी उठा लिये जायेंगे।

३. आन्दोलन के कारण जिन लोगों की सम्पत्ति जब्त की गई है, वह वापिस दे दी जायेगी।

४ जो लोग भविष्य में शराब, अफीम तथा विदेशी माल के बहिष्कार के लिए शान्तिपूर्ण ढंग से 'पिकेटिंग' करेंगे, उन्हें बन्दी नहीं बनाया जायेगा।

५. असहयोग आन्दोलन में जिन लोगों ने सरकारी नौकरियाँ छोड़ दी हैं, उन पर उदारता के साथ विचार किया जायेगा।

६. जिनकी जमानतें अभी तक वसूल नहीं की गई हैं, वे वसूल नहीं की जावेंगी।

इस समझौते की प्रथम शर्त के अनुसार सभी राजनीतिक बन्दी जेलों से रिहा कर दिये गए। खुदाई खिदमतगार भी कांग्रेस में शामिल हो चुके थे, इसलिए उन्हें भी रिहा कर दिया गया, फिर भी गफ्फार खान को रिहा नहीं किया गया। इतना नहीं, गांधी-इर्विन पैक्ट के बावजूद सीमाप्रान्त में अंग्रेजों ने बेहद जुल्म ढाए। खुल्लम गोलियाँ चलाई गईं। मर्दों को बेरहमी से पीटा गया औरतों तक को गोलियों से उड़ाया गया।

है। वह कहता है कि या तो वहाँ वह ही रहेगा या अब्दुल गफ्फार खाँ ही रहेगे।

गाँधीजी ने जब यह सुना तो वे दिल्ली वायसराय इर्विन के पास गए। उन्होने कहा कि बादशाह खान को रिहा करना चाहिए क्योकि वह भी काग्रेस के सदस्य है।

अंग्रेजो के मन मे तो यह भावना भरी हुई थी कि पठान बड़े खूंखार होते है। इसलिए लार्ड इर्विन ने कहा—बादशाह खान एक पठान है। वे काग्रेस की अहिसा को स्वीकार नही कर सकते। कहिए अब आप क्या कहते है?

लेकिन गाँधीजी के कहने से बादशाह खान को रिहा कर दिया गया।

उन्ही दिनों मार्च १९३१ में कांग्रेस का अधिवेशन कराची में होने वाला था। बादशाह खान काग्रेस में मिल चुके थे, इसलिए इन्हे भी उसमें सम्मिलित होने का निमत्रण मिला। इसके पहले जेल से छूटने के बाद ये दूने उत्साह से अपने लोगो में क्रान्ति का शख फूंकने में लगे रहे।

कराची काग्रेस में इन्होने लगभग १०० खुदाई खिदमतगारों के साथ भाग लिया। यह पहला अवसर था जब ये नियमित रूप में कांग्रेस के किसी अधिवेशन मे भाग ले रहे थे। वहाँ इनके आदमियों ने लोगो पर अपना विशेष प्रभाव छोडा। इसके पहले बादशाह खान कांग्रेस कार्यकारिणी के सदस्य बनाये जा चुके थे। इस कारण कराची में इन्हे काग्रेस के बडे-बडे नेताओं के निकट सम्पर्क में आने का अवसर मिला। गाँधी जी ने यद्यपि इनको जेल से छुडवाया था और ये भी कांग्रेस में मिल चुके थे किन्तु अभी तक इन लोगो को साथ रह कर एक दूसरे से परिचित होने का अवसर नही मिला था। कराची मे इन्होंने गाँधी जी और जवाहर लाल नेहरू जैसे नेताओ का परिचय पाया। उनके साथ अनेक राष्ट्रीय समस्याओ पर विचार-विमर्श किया।

वहाँ से लौटकर ये पुन सीमाप्रान्त में जन-जागृति के कार्य मे लग गए किन्तु सरकार ने इनके दौरे पर रोक लगा दी। यह समाचार जब गाँधी जी को मिला तो उन्होने वायसराय विलिंगडन को (उस समय लार्ड इर्विन चले गये थे और उनकी जगह नए वायसराय लार्ड

विलिंगडन आ गए थे) लिखा कि 'अब्दुल गफ्फार खाँ कांग्रेसी है और यदि उन्हे गिरफ्तार किया गया तो सरकार के साथ जो समझौता हुआ है कि राजनीतिक नेताओं को कैद नही किया जायेगा, वह टूट जायेगा और हम फिर से आन्दोलन शुरू कर देगे।' गांधी जी ने वायसराय को यह भी लिखा कि यदि उन्हे अनुमति दी जाय तो वे स्वय जाकर सीमा प्रान्त की स्थिति देख आवे।

लेकिन गांधी जी को सीमा प्रान्त जाने की अनुमति सरकार कैसे देती! वह डरती थी कि एक अब्दुल गफ्फार खाँ ही ने इतना उपद्रव मचा रखा है कि पठान काबू मे नही आते, महात्मा गांधी जो भी उनमे गए तो तूफान हो मच जावेगा।

बाल बाल बचे

बहुत कुछ लिखा-पढ़ी के बाद सरकार इस बात पर राजी हो गई कि गांधी जी के बेटे देवदास सीमा प्रान्त जा सकते हैं। अब तय यह रहा कि देवदास पेशावर पहुँचेगे और वहाँ से बादशाह खान उन्हे अपने साथ लेकर सीमा प्रान्त का दौरा करेगे। नियत समय पर देवदास गांधी पेशावर पहुँच गए। उन्हे लेने के लिए बादशाह खान पहले से ही वहाँ पहुँचे हुए थे। पेशावर से यह दल एक बस मे आगे चला। बस अभी शाहीबाग से कुछ दूर ही गई थी कि बादशाह खान के एक मित्र मिल गए। उनके पास कार थी। उन्होने बादशाह खान, देवदास गांधी तथा एक अन्य खुर्शीद बहन को अपनी कार मे बैठा लिया। यहाँ उन लोगो को देर भी हो गई। इस कारण पहले वाली बस आगे चली गई। जब कार मे ये लोग चारसद्दा नामक स्थान पर पहुँचे तो उन्हे बताया गया कि जिस बस मे ये पहले आ रहे थे उस पर सरदरयाब के पुल के पास वाले जंगल मे गोली चलाई गई थी जिससे एक साथी घायल हो गया। उसे चारसद्दा के अस्पताल मे ही भर्ती कराया गया था जिसे इन लोगो ने जाकर देखा भी।

इस बात से होती है कि बस पर गोली चलाकर काजी ने जब उसे रोका तो उसने बस की तलाशी लेकर देखना चाहा कि अब्दुल गफ्फार खाँ उसमें है या नही। जब ये नही मिले तो डाकू बहुत निराश हुआ था।

बादशाह खान तो इस षड्यंत्र से बाल-बाल बच गए किन्तु काजी को अपने घिनौने कार्य का पूरा फल मिला। वह इस तरह कि इस घटना का समाचार चारों ओर फैल गया। लोगो ने जब यह सुना कि बादशाह खान को मारने के लिए काजी नियुक्त किया गया था और उसने अपनी ओर से पूरी कोशिश भी की, तो उत्तेजना फैल गई। यह तय रहा कि जहाँ कही काजी मिल जाय, उसे मार डाला जाय। फलत जब काजी को आफरीदियों ने देखा तो उसे पकड़ कर कत्ल कर डाला।

इस घटना से इतना स्पष्ट पता चलता है कि अंग्रेज बादशाह खान के कितने पीछे पड़े थे। सरकार यह नही चाहती थी कि बादशाह खान लोगों को उसके विरुद्ध करे। वह चाहती थी कि किसी तरह इन्हें पकड़ कर जेल मे डाल दे, किन्तु इन्होने कांग्रेस की सदस्यता स्वीकार कर ली थी और गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार इन्हे पकड़ा नही जा सकता था। इसलिए वायसराय ने बार-बार गाँधी जी को लिखा कि बादशाह खान जो कार्य सीमा प्रान्त मे कर रहे है, उससे सरकार को खतरा है और उनको कैद करना जरूरी हो गया है। लेकिन गाँधी जी इस बात के लिए सहमत नही थे। अन्त में जब गाँधी जी वायसराय के बहुत कहने से विवश हो गए तो उन्होंने बादशाह खान को अपने पास बुला लिया।

उन दिनो गाँधी जी बारदोली में थे। बादशाह खान वही पहुँचे। सारी बाते स्पष्टतया गाँधी जी को बादशाह खान ने समझाते हुए कह दिया कि अंग्रेजो ने जो अभियोग उन पर लगाए है उनकी असलियत देखने का सबसे अच्छा रास्ता यह है कि गाँधी जी स्वयं सीमा प्रान्त जाकर अपनी आँखो वहाँ का हाल देखे। इसके बाद वे और वायसराय मिलकर जो भी निर्णय करेगे, उसे वे मान लेंगे।

गाँधी जी ने सारी बाते जब वायसराय को लिख भेजी और यह भी लिखा कि उन्हे सीमा प्रान्त जाकर असलियत का पता लगाने की अनुमति मिलनी चाहिए तो वायसराय चतुराई से इस बात को टाल गया। उसने लिखा कि न तो गाँधी जी को सीमा प्रान्त जाने की जरूरत है न उन दोनो को वायसराय से ही मिलने की जरूरत है।

इससे स्पष्ट था कि सरकार असलियत पर परदा डाले रखना चाहती थी। गांधी जी ने समझ लिया कि बादशाह खान जो भी कहते है, अक्षरश: सत्य है।

इसके बाद बादशाह खान कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में भाग लेने के लिए शिमला गए। वहा पुन इनकी टक्कर मुस्लिम लीग और अंग्रेजो से हुई। मुस्लिम लीग के नेता इस बात से बहुत बुरा मान गए थे कि बादशाह खान कांग्रेस मे मिल गए है। उन दिनों मुस्लिम लीग के एक नेता फिरोज खां नून शिमला ही थे। उन्होंने देखा कि यह अच्छा मौका है बादशाह खान को कांग्रेस से तोडने का। उन्होने बादशाह खान से कहा—'आप लोग पठान है और पठान भी मुसलमान होते है, फिर भी आप लोगो ने मुस्लिम लीग मे आना नही पसन्द किया और कांग्रेस मे जा मिले जो हिन्दुओ की जमात है। खान साहब, आप अन्दाजा नही लगा सकते कि इससे हमारा कितना नुकसान हुआ है।'

फिरोज खाँ नून को इस बात में तो कोई एतराज नही था कि पठानों को आजादी मिले, लेकिन इसके लिए मुस्लिम लीग अंग्रेजों की खिलाफत करे, यह उनसे नही हो सकता था। उन्होंने उस समय तो बादशाह खान से कह दिया कि वे लोग (मुस्लिम लीग के नेता लोग) आपस मे विचार करके उन्हे सूचित कर देगे किन्तु न तो इस बात पर मुस्लिम लीग ने विचार किया और न फिरोज खाँ नून ने इतनी ही शिष्टता दिखाई कि एक पत्र लिख कर ही बादशाह खान को मुस्लिम लीग के विचारो या निर्णयो से सूचित कर दे।

शिमला में, जैसा पहले कहा है, कांग्रेस-कार्यकारिणी की बैठक होने वाली थी। इसका कारण यह था कि इंगलैण्ड में गोलमेज सम्मेलन होने वाला था और उसमे भाग लेने के लिए गांधी जी को वहाँ जाना था। वहाँ जाने के पहले कार्यकारिणी में यह विचार करना था कि इंगलैण्ड के नेताओ के सामने भारत की ओर से क्या प्रस्ताव रखे जायँ, क्या-क्या बाते उनकी मानी जायँ तथा क्या अपनी मागे उनके सामने रखी जायँ।

अभी कार्यकारिणी की बैठके चल ही रही थी कि बादशाह खान को मिलने के लिए स्वराष्ट्र सचिव एमरसन ने बुला लिया। पहले तो बादशाह खान ने मिलने से इन्कार कर दिया किन्तु बाद में ये मिलने चले गए। कुछ दिनो पहले इन्होने मेरठ में भाषण दिया था, उसी सम्बन्ध में एमरसन इनसे कुछ कहना चाहता था। एमरसन ने मिलते ही कहा—अब्दुल गफ्फार खाँ, तुमने मेरठ मे कहा है कि अंग्रेजो का रंग तो गोरा होता है किन्तु उनका मन काला होता है। याद रखो, यदि मैं इस बात का प्रचार इंगलैण्ड में करूँ कि तुम इस तरह लोगो को अंग्रेजो के खिलाफ बरगलाते हो, तो जो सुविधाएँ तुम्हे सरकार ने दे रखी है, सभी बन्द कर दी जावेगी।'

यह बात जितनी कडी नही थी, उससे अधिक कड़ा था एमरसन का रुख। बादशाह खान स्वाभिमानी तो परले दरजे के थे। उन्होने कहा—'जनाब, आप खुशी से मेरा भाषण इंगलैण्ड के अखबारो में प्रकाशित करा दे—लेकिन शर्त यह है कि आप वह सब कुछ प्रकाशित कराएँ जो मैने उस भाषण मे कहा था, क्योकि आप जो कुछ कह रहे है वह अधूरी बात है। मै आपको सही बात बता दूँ कि मेरठ के भाषण मे मैने कहा था कि 'पहले तो हम अंग्रेजो को

अपने से बढ़ कर मानते थे, उन पर लट्टू थे, अपने बच्चो से भी अधिक उन्हे चाहते थे, लेकिन अंग्रेजों ने हमे उतनी सुविधाएं भी नही दी जितनी वे स्वयं भारत को दे रहे थे और भारत इन्कार करता रहा। इसलिए लगता है कि गोरे अंग्रेजो का मन भीतर से काला है।'

उस समय तो एमरसन थोडा मुस्करा कर बात टाल गया किन्तु उसने नए सिरे से षड्यंत्र चालू कर दिये।

उसने एक अखबार मे यह छपवा दिया कि कांग्रेस और अब्दुल गफ्फार खा के बीच मतभेद हो गया है क्योकि सीमाप्रान्त की जाँच के बारे मे कांग्रेस-कार्यकारिणी ने बादशाह खान की बात नही मानी है, इस कारण वे कांग्रेस से त्यागपत्र दे देगे।

इस समाचार से पठानो मे खलबली मच गई। बहुत से पठानो ने कांग्रेस को शंका की नजर से देखना शुरू किया। मुस्लिम लीग के नेता चहक उठे कि 'अच्छा हुआ जो पठान कांग्रेस से अलग हो रहे है।' जो लोग पठानो और बादशाह खान के शुभचिन्तक थे, उन्होने उनको समझाना शुरू किया कि 'कांग्रेस से आप अलग न होइएगा, नही तो अंग्रेज हमें कुछ भी नही देगे।'

इधर बादशाह खान को हंसी आ रही थी। यह सारा बवण्डर एक झूठे समाचार से फैल गया था। धीरे-धीरे उन्होने सारी स्थिति स्पष्ट की और तब लोगो को तसल्ली हुई।

नहीं भड़की थी, किन्तु अंग्रेजों ने बेहद जुल्म ढाए। वहाँ अंग्रेजों ने इसलिए लोगो को सताया कि इस तरह बौखला कर जनता भड़क उठे और हिंसात्मक कार्य शुरू कर दे तो सरकार को उन्हे अच्छी तरह दबाने और इस तरह दबाकर सदा के लिए मिटा देने में सहूलियत रहेगी। लेकिन सरकार के दमन चक्र के बावजूद पठानो ने हिसा का मार्ग नही अपनाया। उन दिनो अग्रेजो ने जो जुल्म किये, उनका विस्तार से वर्णन किया जाय तो पूरी एक पुस्तक लिखी जा सकती है। यहाँ सक्षेपतः उनका विवरण दिया जा रहा है।

पठानो को बन्दूक-तलवार रखने का अधिकार था। सबसे पहले सरकार ने उनके हथियार छीन लिये ताकि वे बदले मे अग्रेजों को मार न सके। इसके बाद उन्हे बिल्कुल नगा करके पीटा जाता। इस तरह निर्मम पिटाई से जब खुदाई खिदमतगार बेहोश हो जाते तो उन्हे मलमूत्र से भरे हुए बड़े-बड़े नादो मे डाल दिया जाता था और डुबकियाँ लगवाई जाती थी।

सर्दी के दिन थे। सीमान्त प्रदेश में सर्दी पडती भी अधिक है—हाड़ कंपकपा देने वाली भयकर सर्दी। ऐसी कठिन सर्दी में गोरे खुदाई खिदमतगारो को पकडकर नगा कर देते, उन्हे ठण्डे पानी मे डाल देते, और उन पर कोडे बरसाते। इतना ही नही, खुदाई-खिदमतगारो को गोली से उडा देने में तो अग्रेजो को बेहद मजा आता था—जैसे वे किसी तीतर-बटेर का शिकार कर रहे हो।

यह तो उनके साथ व्यवहार किया जाता जो जेल मे नही थे। कैदियों को सताने मे भी अंग्रेजो ने कोई कसर नही रखी। वे सभी कैदी राजनीतिक थे और राजनीतिक कैदियों के साथ अच्छा व्यवहार करना सरकार का कर्त्तव्य था, किन्तु जो खुदाई खिदमत-गार जेल मे थे, उन्हे केवल एक रोटी दी जाती थी। रोटी भी कच्ची होती और वह भी किसी को दी जाती और किसी को नही दी जाती। सर्दी के दिनो मे भी जब कि दुहरी रजाई और गद्दे से भी जाडा नही जाय, कैदियो को एक कम्बल—वह भी फटा-पुराना दिया जाता। जो कैदी अच्छे घरो के और पढे-लिखे थे, उनको भी सबके समाने कोडो से पीटा जाता, उनसे चक्की पिसवाई जाती और तेल निकालने की घाणियो मे बैलो की जगह उन्हे जोता जाता।

इस तरह पठानो के साथ अंग्रेजो ने असभ्य, बर्बर तथा अमानवीय ऐसे व्यवहार किये जो ससार मे कही और किसी शासक

ने उस देश की आजादी के लिए संघर्ष करते लोगों पर नहीं किये हैं।

इतना होने पर भी पठानो में साहस बना रहा। खुदाई-खिदमतगार-आन्दोलन तीव्रता से बढ़ता ही गया। इसका एक कारण यह था कि यह आन्दोलन केवल राजनीतिक नही था। बादशाह खान के ही शब्दो मे "खुदाई खिदमतगार आन्दोलन पठानो का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और अध्यात्मिक आन्दोलन है। इस आन्दोलन के कारण उनमे प्यार, भाईचारे, एकता और प्रेम की भावना उत्पन्न हुई। इस आन्दोलन ने पठान जाति को दूसरा लाभ यह पहुँचाया कि 'अहिंसक होने के कारण इसने उन्हे आबाद और सुखी बना दिया।"

इस दमन के पूर्व ही बादशाह खान को सरकार ने गिरफ्तार कर लिया था। इनके साथ और भी कई व्यक्ति गिरफ्तार करके ले जाये गए। इन सबको लेकर एक विशेष गाडी दिल्ली से चली। इलाहबाद मे इनके बडे भाई डाक्टर खान साहब को उतार कर उन्हे नैनी जेल भेज दिया गया। बनारस मे इनके एक अन्य सहयोगी सअदुल्ला खाँ को उतार लिया गया। बिहार पहुँचने पर गया जेल में काजी अताउल्लाह को इनसे अलग कर दिया और सबसे अन्त मे इन्हे हजारी बाग जेल मे भेज दिया गया।

संघर्षों का जीवन | 7

वर्धा में रहने से बादशाह खान को गाँधीजी का सम्पर्क तो प्राप्त हुआ, किन्तु उनका इलाका सीमाप्रान्त दूर रह गया जहाँ वे जन-सेवा का कार्य करते रहे थे। एक दिन इन्होने तय किया कि बगाल के मुसलमानों को जागृत किया जाय क्योकि वे राजनीतिक दृष्टि से पिछडे हुए थे। इस विचार से उन्होने बगाल मे घूमना आरम्भ किया। सुहरावर्दी साहब भी पहले इनके साथ रहे किन्तु जब उन्होने देखा कि बादशाह खान का प्रभाव बगाल की मुस्लिम जनता पर पड़ने लगा है तो वे इनसे खिच गए। फिर भी ये प्रफुल्ल राय घोष के साथ बगाल के देहाती क्षेत्रो मे घूम-घूम कर जनता को आजादी का सन्देश देने लगे। धीरे-धीरे लोग इनकी सभा मे अधिकाधिक संख्या मे आने लगे। इससे सरकार के कान खड़े हो गए—बगालियो में चेतना फूँकने के लिए हिन्दू नेता ही बहुत थे, यदि इस पठान ने भी मुसलमानो मे एकता उत्पन्न कर दी तो अंग्रेज कैसे टिकेंगे ? परिणामस्वरूप इनके गिरफ्तारी की योजना बनने लगी।

इन्ही दिनो ये कॉग्रेस के अधिवेशन मे भाग लेने के लिए बम्बई आ गए। अधिवेशन की समाप्ति पर ये पुनः वर्धा चले गए। सरकार ने यही अवसर उन्हे गिरफ्तार करने का उचित समझा क्योंकि वे वर्धा से ८ दिसम्बर को पुन. बगाल के गरीब मुसलमानो की सेवा करने के लिए जाने वाले थे।

७ दिसम्बर १९३४ को जब ये गाँधीजी के साथ बातचीत कर रहे थे तो पुलिस इन्हे गिरफ्तार करने पहुँच गई। पास ही जमनालालजी बजाज के यहाँ इनके बच्चे और बडे भाई थे। गांधीजी ने पुलिस से कहा कि इन्हे गिरफ्तार कर ले जाने से पूर्व इनके बच्चे और बड़े भाई से मिला दिया जाय। ये पुलिस के साथ वहाँ गए। किसी को आशा नही थी कि बादशाह खान पुनः गिरफ्तार

कर लिये जायेंगे। अभी हजारीबाग जेल से छूटे इनको कुल ३ मह हो तो हुए थे।

विदाई का वह दृश्य अत्यन्त ही अनूठा था। बेटो की आंखो मे आँसू भरे थे, किन्तु बादशाह खान का चहरा एक अलौकिक तेज से व्याप्त था। हां, इनके मन मे एक टीस कौंध उठती थी, 'बंगाल के गरीब मुसलमानो को वचन दिये है, वे कैसे पूरे होंगे।' इन्हे थोड़े दिनो मे ही वहां के गरीबो से मुहब्बत हो गई थी—एक अजीब आकर्षण उनमे था इनके लिए !

७ दिसम्बर को इन्हे गिरफ्तार किया गया था और १५ दिसम्बर को इन्हे दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुना दी गई। हजारीबाग जेल से छूटने के बाद इन्होने क्या अपराध किया, यह सरकार ही जानती थी। ऊपरी कारण यह बताया गया कि बम्बई मे इन्होने आपत्तिजनक भाषण दिया था।

पहले इन्हे बम्बई-जेल मे ही रखा गया किन्तु २६ दिसम्बर को इन्हे साबरमती जेल मे भेज दिया गया। वहां इनके रहने-सहने की व्यवस्था इतनी खराब थी कि बादशाह खान का स्वास्थ्य गिरने लगा। साबरमती जेल का अंग्रेज सुपरिन्टेण्डेण्ट कड़े स्वभाव का व्यक्ति था। उसने प्रतिबन्ध लगा रखे थे कि बादशाह खान न तो किसी से मिल सकते थे न कहीं टहल सकते थे। न खाने की कोई ठीक व्यवस्था थी, न सोने की। फर्श पर इन्हे सोना पड़ता।

सकती है, तो उन्हें नासिक या यरवदा जेल में रखा जाय। पटेल ने सरकार से यह भी कहा कि वादशाह खान वीमार चल रहे है और उनकी वीमारी को देखते हुए सजा घटाकर उन्हे छोड़ दिया जाना चाहिए।

लेकिन सरकार क्यों सुनने लगी थी इन तर्कों को। उसने सोचा कि यदि साधारण वीमारी के कारण बादशाह खान को छोड़ दिया जाता है, वह भी काग्रेसी नेताओ के कहने से, तो और भी बहुत सारे राजनीतिक कैदियों को छोडना पड़ेगा। हाँ, सरकार ने इतना अवश्य किया कि गाँधी जी के वहुत प्रयत्न करने पर वादशाह खान को ए-श्रेणी दे दी जिससे उनको काफी सुविधा हो गई।

पर इस सुविधा के साथ ही एक ऐसी विपत्ति इनके साथ लगा दी गई जिससे छुटकारा पाना कठिन हो रहा था। वादशाह खान को ए-श्रेणी मिल जाने के वाद यह अधिकार था कि ये अपने साथ अपना रसोइया अलग रख सकते थे।इन्होने एक पठान या पंजावी रसोइये की माँग की थी और वहाँ की सरकार ने एक ऐसा रसोइया इनके लिए भेज दिया था जिसको टी-वी थी। सरकार चाहती थी कि इस तरह यदि वादशाह खान को भी रोग लग जाय तो छुटकारा मिले।

सावरमती जेल से जव वादशाह खान को वरेली भेजा गया तो भी यह रसोइया उनके साथ गया। किसी तरह इन्होने अधिकारियो से कह कर उससे पिण्ड छुड़ाया। सारी गर्मियाँ वरेली की जेल में विताने के वाद जव वरसात का मौसम आया तो इन्हे अल्मोड़ा भेज दिया गया। वहाँ ये वरसात के मारे परेशान थे। कभी-कभी कई दिनों तक पानी रुके ही नही और इनका वाहर निकलना भी कठिन हो जाता था।

इस वीच इनकी दो वर्ष की अवधि समाप्त होने को आई। ये कैद से मुक्त हुए किन्तु इन पर लगा प्रतिवन्ध अभी हटाया नही गया था। ये अव भी पंजाव और सीमा प्रान्त मे नही जा सकते थे। परिणामस्वरूप ये पुन. गाँधीजी के पास वर्धा आ गए। वहाँ से इन्होने गाँधीजी के साथ देश का दौरा किया। मुस्लिम लीग ने जो साम्प्रदायिक कटुता फैला रखी थी, उसका इन दोनों ने भरसक निवारण करना चाहा।

सन् ३६ के नवम्बर में सीमा प्रान्त की स्थानीय परिषद् ने सरकार से अनुरोध किया कि अब्दुल गफ्फार खा पर लगाया गया प्रतिबन्ध उठा लिया जाय और उन्हे पंजाब तथा सीमा प्रदेश मे आने की अनुमति दी जाय। लोगो को विश्वास था कि सरकार परिषद् की यह माग मान लेगी और निर्वासित बादशाह खान पुन. अपने लोगो से आ मिलेगे, किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि यह प्रतिबंध एक साल के लिए और बढा दिया गया—यानी दिसम्बर १९३७ तक के लिए।

भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन की तीव्रता के कारण अंग्रेजों ने यह अनुभव कर लिया था कि प्रशासन मे भारतीयो को कुछ अधिकार देना ही पडेगा। इस आधार पर 'गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया एक्ट—१९३५' लागू किया गया जिसके अनुसार बम्बई, सयुक्तप्रान्त, बिहार, उडीसा, मध्यप्रान्त तथा मद्रास मे गाधीजी की अनुमति मे कांग्रेस ने चुनाव लडकर अंग्रेजी हुकूमत के नीचे ही मन्त्रिमण्डल बनाया, इन्हीं तथ्यो के प्रकाश मे सरकार ने सीमाप्रान्त मे भी जन-नेताओ का मंत्रिमण्डल बनाने की योजना लागू की। वहाँ बादशाह खान के बडे भाई डा० खान का बहुमत था किन्तु अंग्रेजो ने उन्हे मन्त्रिमण्डल बनाने का अवसर न देकर अब्दुल कय्यूम को मन्त्रिमण्डल बनाने का आदेश दिया। कय्यूम का मन्त्रिमण्डल अधिक दिनो तक चला नही—२ महीने में ही डा० खान के समर्थको ने उसे उखाड़ फेंका। अब डाक्टर खान ने कांग्रेस और खुदाई-खिदमतगारो की मदद से वहाँ मन्त्रिमण्डल बनाया और सरकार से पुन आग्रह किया कि बादशाह खान पर लगा प्रतिबन्ध उठाया जाना चाहिए। अब की बार सरकार ने यह बात मान ली और इस तरह ६ वर्ष तक सीमाप्रान्त से बाहर रहने के बाद बादशाह खान ने १९३९ में वहाँ पुन प्रवेश किया।

गया था। अब्दुल गफ्फार खां तथा महात्मा गाँधी ने असीम धैर्य से वहाँ शान्ति स्थापित की।

इसी बीच सितम्बर १९३९ में द्वितीय महायुद्ध छिडा जिसमें इंगलैड भी कूद पड़ा। यहाँ वायसराय ने भारतीयो से रुपए तथा रंगरूट मांगे। कांग्रेस कार्यकारिणी वायसराय के प्रस्ताव से सहमत हो गई और इस आशय का एक प्रस्ताव स्वीकृत करना चाहा कि यदि अंग्रेज यह वादा करे कि युद्ध की समाप्ति पर देश को आजाद कर देगे तो धन-जन से उनकी मदद की जायेगी। महात्मा गाँधी ने इस प्रस्ताव का विरोध किया क्योकि युद्ध में शरीक होने का अर्थ था हिसा करना। अहिसक होने के नाते महात्मा गाँधी इसे स्वीकार नही कर सकते थे। उन्होने कांग्रेस कार्यकारिणी से त्यागपत्र दे दिया। साथ ही बादशाह खान ने भी गाँधीजी के विचारों से पूर्ण सहमति प्रगट करते हुए कांग्रेस कार्यकारिणी छोड़ दी।

इसके बाद सन् १९४२ का वर्ष आता है जब कांग्रेस का अधिवेशन बम्बई मे हो रहा था। सभी नेताओं ने एक स्वर से दो नारे दिए—अंग्रेजो से कहा गया—'भारत छोड़ो' और भारतीयों को सन्देश दिया गया—'करो या मरो।' इसके पररिणामस्वरूप वही सभी नेता गिरफ्तार कर लिए गए। सारे देश मे हिसात्मक कार्यवाइयाँ शुरू हो गईं।

सीमा प्रान्त में आन्दोलन का नेतृत्व बादशाह खान के हाथों में था। इनके संचालन मे आन्दोलन तीव्र गति से चालू हुआ किन्तु इन्हे कैद नही किया गया—बार-बार पुलिस इन्हे पकड़ती और पेशावर ले जाकर छोड़ देती। हाँ, खुदाई खिदमतगारो पर बेहद जुल्म ढाए गए—वह भी मुसलमान अधिकारियो के हाथो। उन्हे बरहमी से पीटा गया—लाठिया इस तरह बरसाई गईं कि एक का तो घटनास्थल पर ही प्राणान्त हो गया। ऐसे ही एक कुत्सित मुसलमान थे पेशावर के डिप्टी कमीश्नर इस्कन्दर मिर्जा जो बाद में पाकिस्तान के राष्ट्रपति भी बने थे। इन्होने इस हद तक नीचता की कि खुदाई-खिदमतगारो के शिविर में विष मिला भोजन भिजवा दिया। इससे शिविर कैद मे सैकड़ो खुदाई खिदमतगार मौत के घाट उतर गए।

अक्टूबर १९४२ मे जब ये अपने एक जत्थे के साथ मरदान के डिस्ट्रिक्ट कोर्ट पर धरना देने चले तो इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। गिरफ्तारी के बाद इन्हे इतना पीटा गया कि इनकी दो पसलियाँ टूट गईं और सारे कपडे खून से लथपथ हो गए। फिर भी किसी ने इनके घावो पर मरहम पट्टी तक की जरूरत नही समझी। पर यह कोई बडा जुल्म नही था—अग्रेजो के इशारे पर मुसलमान अधिकारी ही इन पठानो पर ये जुल्म करते थे, यहाँ तक कि एक खुदाई खिदमतगार को तो जेल मे ही गोलियो से उड़ा दिया गया।

१९४४ मे ये जेल से रिहा हुए। देश की स्थिति अंग्रेजों के लिए प्रतिकूल होती जा रही थी और वे समझ रहे थे कि उन्हे यहाँ से जाना पडेगा। इन्ही दिनो पुन चुनाव लडने की तैयारियाँ हो रही थी। मुस्लिम लीग को अग्रेजो ने खूब भडका रखा था और खुले आम उसका साथ अंग्रेज और अधिकारी दे रहे थे। कलकत्ता में कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक के बाद जब ये सीमान्त प्रदेश गए तो यह देखकर इन्हे बडा दुःख हुआ कि यह चुनाव जातीयता और धर्म के नाम पर लडा जा रहा था, भारत और पाकिस्तान के नाम पर, मस्जिद और मन्दिर के नाम पर। उन्हे यह देख कर गहरी ठेस पहुँची कि मुस्लिम लीगी लोगो ने पूछते थे—आप अपना वोट किसे देना चाहते हैं–मस्जिद को या मन्दिर को ? हिन्दू को या मुसलमान को ?

प्रकार हुई कि कुछ मुसलमानों ने मिल कर एक सिख को मार डाला और उसकी विधवा से एक मुसलमान ने बलात् विवाह कर लिया। डाक्टर खान ने उन गुण्डा मुसलमानो से कहा कि औरत को उसके घर पहुँचा दो। इस बात को लेकर मुस्लिम लीगियो ने केवल डाक्टर खान के खिलाफ ही नही अपितु वहाँ की सारी हिन्दू जनता के खिलाफ भी जेहाद बोल दिया। इस घटना को आधार बना कर इधर तो डाक्टर खान को मत्रिमण्डल से हटाने के कुचक्र चलाए गए, उधर साम्प्रदायिक मार-काट शुरू कर दी गई।

बादशाह खान के प्रयत्नो से जब पठान मुस्लिम लीग की चाल मे नही आए तो अंग्रेजो ने एक और बढ़िया तरकीब की उन्हे आपस मे ही लड़ा मारने की की। उन्होने खुरशीद नामक एक लीगी को वहाँ भेजा जो कहता फिरता था कि 'पठानो में कुछ काग्रेसी घुस पड़े है। इन्हे मरवाने के लिए हमें चन्दा एकत्र करना चाहिए और १०-१५ हजार रुपए किसी को देकर इन्हे खत्म करा देना चाहिए।' इसमें अंग्रेजों की चाल यह थी कि यदि एक भी खुदाई खिदमतगार नेता मारा गया तो लोग मुस्लिम लीग के नेताओ को भी बदले में समाप्त करने लगेगे। इस तरह पठान-मुसलमान आपस में ही लड़ पड़ेगे। किन्तु खुरशीद और अंग्रेजो की चाल जब लोगों ने जान ली तो वे सतर्क हो गए और यह षड्यन्त्र भी विफल रहा।

इसके बाद समय आता है कि भारत का विभाजन हुआ। देश को आजाद करके पूर्व अंग्रेजो की शह पर मुस्लिम लीग पाकिस्तान के लिए अड़ी रही और उसे सफलता भी मिली। बादशाह खान को मुस्लिम लीग पर विश्वास नही था। इसलिए वह चाहते थे कि पख्तूनिस्तान एक स्वायत्त शासन राज्य बने। इस माग पर वह अड़े रहे, पर वायसराय ने बलात् उन पर मत-सग्रह थोप दिया। मत संग्रह का अर्थ था कि पख्तूनिस्तान के लोग बहुमत ने तय करे कि वे पाकिस्तान में मिलना चाहते है या स्वायत्त शासन मे रह कर अपना एक अलग राज्य बनाना चाहते है। सभी तरह की बेइमानियों का सहारा लेने के बाद अन्त मे अंग्रेजो और मुस्लिम लीग की मन चाही हो गई। बादशाह खान ने इसका बहुत विरोध किया किन्तु अन्त मे बहुमत से—यद्यपि यह बहुमत जाली था और लोगो को डरा धमकाकर,

लालच देकर और मतो मे फेर बदल कर किया था—तय रहा कि पख्तूनिस्तान पाकिस्तान में मिलेगा ।

भारत आजाद हुआ—देश के दो टुकडे हो गए—भारत और पाकिस्तान। सभी राजनीतिक कैदी शासन की यत्रणा के भय से मुक्त हो गए। दोनो ही देशो मे जिन लोगो ने अंग्रेजो के शासनकाल मे असीम कष्ट भोगे थे, उन्हे अब शासन-सचालन का अवसर मिला। किन्तु मुस्लिम लीगी इस बात को भुला नही सके कि अब्दुल गफ्फार खाँ ने उनका विरोध किया था, पाकिस्तान मे मिलने की बात न मानकर अलग राज्य बनाना चाहा था। इसका बदला दिया उन्होने बादशाह खान को कैद मे सड़ा कर और पख्तूनिस्तान के हजारो पठानो को मौत के घाट उतार कर !

स्वय बादशाह खान कहते है कि जुल्म तो दोनो ने किए-अंग्रेजो ने भी और पाकिस्तान ने भी, किन्तु जितना जुल्म पाकिस्तान ने मुसलमान होते हुए पठानो पर किया, उतना जुल्म अंग्रेजो ने नही किया।

पख्तूनिस्तान की मांग

पाकिस्तान बन जाने के बाद भी मुस्लिम लीग से सिद्धान्तत. विरोध होने के कारण बादशाह खान स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान की माग पर सघर्ष करते रहे। परिणामस्वरूप उन्हें आजादी के लगभग १० महीनो बाद १५ जून १९४८ को गिरफ्तार कर लिया गया। उनके साथ ही पाकिस्तान सरकार ने हजारो खुदाई खिदमतगारो को भी जेल भेज दिया।

उनकी दाढी-मूँछे उखाड़ी गई तथा उन ी औरतों के सामने अश्लील ढंग से उन्हे अपमानित किया।

यह सब तो एक गॉव मे हुआ। इसके अतिरिक्त लगभग २ वर्षो तक पख्तूनिस्तान के गॉवो मे पाकिस्तानी वायु सेना ने बम-वर्षा करके उनके घरो को उजाड डाला, खेती को चौपट किया और हजारों बेकसूर लोगो को मौत के घाट उतारा। यह सब इसलिए किया गया ताकि पठान जाति ही नष्ट हो जाय।

बादशाह खान अभी जेल में ही थे। इधर पाकिस्तान के प्रधान मत्री लियाकत अली खॉ थे। उन्होने जेल में बादशाह खान से बार-बार कहलाया कि वे मुस्लिम लीग में मिल जायं, लेकिन दृढव्रती बादशाह खान अपने सिद्धान्तो से तिल भर नही डिगे।

बादशाह खान तीन वर्ष तक पाकिस्तानी जेल मे रहने के बाद जब रिहा किए गए तो पुनः ६ महीने के लिए गिरफ्तार कर लिए गए। बीमारी इनकी बढ़ती गई और इसका प्रचार जब देश-विदेशों में हुआ और सभी ने एक स्वर से पाकिस्तान को इस सेनानी को यंत्रणा देने के लिए कोसा तो १६५४ में इन्हे जेल से रिहा करके नजरबन्द कर दिया गया, इलाज के नाम पर। इसके कुछ दिनो बाद ही फिर इन्हे १६ जुलाई १६५५ को गिरफ्तार कर लिया गया। यह मुकदमा २४ जनवरी १६५७ तक चला और फैसले मे लेवल एक दिन की सजा और १४ हजार रुपए जुर्माना हुआ। यह भी कहा गया कि जुर्माना अदा न करने पर जायदाद नीलाम कर ली जाय। इस तरह १४ हजार रुपयो के लिए बादशाह खान की सारी जायदाद पाकिस्तान सरकार ने जब्त कर ली।

इसके बाद १६५८ मे इन्हे पुन. गिरफ्तार किया गया और बुढापे के कारण गिरते स्वास्थ्य को देखकर इन्हे साल भर बाद रिहा कर दिया गया। उन पर प्रतिबन्ध लगा दिया कि वे १६६६ तक किसी भी सस्था का सदस्य नही बनेगे और न किसी चुनाव में भाग लेगे। पर ये अयूब खॉ की सरकार का विरोध तथा स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान की माग करते रहे जिसके परिणामस्वरूप इन्हे १६६१ मे ही गिरफ्तार कर लिया गया। जेल मे इनका स्वास्थ्य बराबर बिगडता गया। अन्त मे पाकिस्तान सरकार भयभीत हो गई कि कही इनका देहान्त जेल मे ही न हो जाय। फिर भी वह छोडने को तैयार नही थी। जब उनकी हालत बहुत बिगड़ गई तो इस डर से कि

इनकी मृत्यु से बगावत हो सकती है, पाकिस्तान ने ३० जनवरी १९६४ को इन्हे रिहा किया। देश मे इनकी चिकित्सा का समुचित प्रबंध न होने के कारण लोगो ने इन्हे इंगलैण्ड जाने की सलाह दी। पाकिस्तान ने पहले तो इजाजत नही दी किन्तु मजबूर होकर उसे इजाजत देनी पड़ी और ये इलाज के लिए इंगलैण्ड गए जहाँ दो महीने रहे।

बादशाह खान पाकिस्तान के जुल्मो को भुला नही सकते थे, भुलाते भी कैसे! उनकी दृढ धारणा है कि अंग्रेजो ने जो अत्याचार किये, उनसे कही बढकर पाकिस्तान ने उन पर और उनके हजारो-लाखो पठानो पर किये। परिणामस्वरूप इन्होने निश्चय किया कि वे इंगलैण्ड से पाकिस्तान न जाकर अफगानिस्तान जायेंगे जहा से वे पाकिस्तान सरकार से बचे रहते हुए पख्तूनिस्तान के लिए आवाज बुलन्द करेंगे।

पाकिस्तान ने भरसक रोड़े अटकाए कि बादशाह खान को अफगानिस्तान जाने की अनुमति न मिले और वे उसी के शिकंजो मे आ फसे किन्तु उसकी कोशिशे बेकार गई और अन्तत. वे दिसम्बर १९६४ मे काबुल जा ही पहुँचे।

शान्ति का मसीहा

तब से यह शान्ति का मसीहा काबुल ही है। काबुल से ही बादशाह खान पिछले १ अक्टूबर १९६९ को भारत आए। यहाँ उन्हे अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव एवं सहयोग के लिए १ लाख रुपए का नेहरू पुरस्कार दिया गया। हमारे देश मे बादशाह खान ८ फरवरी १९७० तक रहे। इन ४ महीनों की अवधि में उन्होने सारे देश का दौरा कर लोगों को शान्ति और एकता का सन्देश दिया। जहाँ भी गए, उन्होंने याद दिलाया कि यदि देश प्रगति करना चाहता है, यदि यहाँ के करोड़ों लोग खुशहाली चाहते है तो साम्प्रदायिक कटुता को दूर कर गांधीजी के बताए अहिंसा और त्याग के मार्ग को अपनाना ही होगा।

तृतीय खण्ड

लेखकों की दृष्टि में बादशाह खान

१. श्री रतन लाल बंसल

२. श्री अक्षय कुमार जैन

३. श्री सिद्धराज ढड्ढा

४. श्री जुगुल किशोर चतुर्वेदी

५. डा. देशराज भंगी

६. श्रीमती कौशल्या रानी

७. श्री ओम प्रकाश अग्रवाल

८. श्री मोहनलाल वासवानी

९, श्री केशवराम

१०. श्री प्रेमचन्द जैन

११. श्री राजेन्द्र माथुर

१२. श्री सत्यनारायण पारीक

१३. श्री मूलचन्द पारीक

वज्रसंकल्पी नेता 1

—श्री रतन लाल बंसल

लगभग एक वर्ष हुआ, अन्तर्राष्ट्रीय बन्दी सहायक समिति ने सीमा प्रान्त के प्रसिद्ध नेता खान अब्दुल गफ्फार खॉ को विश्व का सर्वाधिक पीडित बन्दी घोषित किया था। वास्तव में संसार में बहुत थोड़े ही व्यक्ति होंगे जिनको अपने राजनीतिक विचारो के कारण अपनी आयु का इतना बड़ा भाग जेल में व्यतीत करना पड़ा हो। सन् १९१९ से १९४७ तक बादशाह खान को तत्कालीन ब्रिटिश सरकार का विरोधी होने के कारण बार-बार जेल जाना पड़ा। १९४७ में पाकिस्तान बनने के बाद से वे लगभग जेल मे ही रहे है। यदि बादशाह खान के जीवन के प्रारम्भ के चौदह वर्ष पृथक कर दे तो अभी तक उन्होने प्रत्येक दो दिनो मे एक दिन जेलखाने मे बिताया है। अब पाकिस्तान सरकार ने उनको जेल से निकाल कर उनके गॉव में ही नजरबन्द कर दिया है। अनेक रोगो से ग्रस्त ७४ वर्षीय वृद्ध बादशाह खान से आज भी पाकिस्तान की फौजी सरकार कितनी भयभीत है !

पाकिस्तान के निर्माण से आज तक अनेक सरकारे वहां बनीं है और वे सभी बादशाह खान पर यह आरोप लगाती रही है कि वे हृदय से पाकिस्तान के शत्रु है। वास्तविकता यह है कि पाकिस्तान के निर्माण का निश्चय होते ही बादशाह खान अतीत को भूलकर मन से पाकिस्तान की सेवा के लिए आतुर रहे। हां, इतना अवश्य है कि वे पाकिस्तान के जन-साधारण की सेवा के इच्छुक है, शासकों के नही। सम्भवत. यही उनका अपराध है।

जब पाकिस्तान बनने का निश्चय हो चुका और बन्नू मे सीमा प्रान्तीय काग्रेस कमेटी अपनी भावी कायविधि पर विचार करने के लिए एकत्रित हुई, तब अनेक पठान कार्यकर्ता इस मत के थे कि आजाद कबायली इलाके मे जाकर हमें पाकिस्तान के विरुद्ध सशस्त्र सघर्ष तब तक जारी रखना चाहिए, जब तक पाकिस्तान का

प्रभुत्व पठान प्रदेश मे समाप्त न हो जाए। बादशाह खान ने उस समय भी इस प्रकार के विचारो का विरोध किया था और कहा था कि यद्यपि हम पाकिस्तान की स्थापना के विरोधी रहे है, किन्तु हमे उसकी स्वाधीनता का स्वागत करना है। इसके साथ ही हमें सरकारी पदो से दूर रहते हुए जनता की सेवा का कार्य जारी रखना है। इस पृष्ठभूमि में श्री जिन्ना ने इनको भोजन पर निमन्त्रित किया। इसके साथ ही श्री जिन्ना ने यह भी स्वीकार किया कि सीमाप्रान्त की यात्रा करते समय वे बादशाह खान के साथ रहेगे। लगभग ऐसे ही उद्गार उन्होने पाकिस्तान की पार्लियामेन्ट के अधिवेशन में भी प्रकट किए थे और उनके शब्दो का इतना प्रभाव पडा था कि अपने स्वभाव के विरुद्ध इस प्रसिद्ध लीग विरोधी खुदाई खिदमतगारो के केन्द्र मे जाएंगे और उनके प्रत्येक सहयोग का स्वागत करेंगे। यह घटना जनवरी १९४८ की है।

पाकिस्तान के शासको के मन मे कोई सन्देह न हो, इसीलिए बादशाह खान महात्मा गांधी के बलिदान के अवसर पर भारत नही आए, यद्यपि गांधीजी की इस प्रकार की मृत्यु से उनके हृदय को कितना बडा आघात लगा होगा, इसका अनुमान ही किया जा सकता है।

बादशाह खान और श्री जिन्ना में उस समय जो सौहार्द हो सका था, यदि वह कायम रहता तो निश्चय ही यह पाकिस्तान के लिए बडे सौभाग्य की बात होती। किन्तु सीमाप्रान्त मे उस समय जो अंग्रेज अधिकारी और लीगी नेता थे, उनकी तो नीद ही इस समाचार को पाकर हराम हो गई। सीमाप्रान्त के तत्कालीन अंग्रेज गवर्नर ने तुरन्त अपना एक सन्देशवाहक विमान द्वारा कराची भेजकर श्री जिन्ना से कहलवाया कि वे खुदाई खिदमतगारों का निमंत्रण कदापि स्वीकार न करें। जब श्री जिन्ना पेशावर पहुँचे तो उनसे जो भी लीगी नेता मिलने गया, उसीने यह कहा कि खुदाई खिदमतगार आपको अपने केन्द्र में ले जाकर कत्ल कर देना चाहते हैं। परिणाम-स्वरूप श्री जिन्ना ने इस बहाने से कि वे किसी गैर सरकारी कार्य-क्रम में भाग नहीं लेंगे, खुदाई खिदमतगारो का निमंत्रण अस्वीकृत कर दिया।

अंग्रेजों के विरोध का कारण

सीमाप्रान्त के तत्कालीन अंग्रेज गवर्नर सर उण्डास ने यह खेल केवल इसलिए खेला था कि बादशाह खान ने पाकिस्तान की पार्लियामेन्ट में दिए गए अपने प्रथम भाषण में ही अंग्रेजों को ऊंचे पदों पर रखने का विरोध किया था और इसे पाकिस्तान के लिए खतरनाक बताया था। उस समय पाकिस्तान में, विशेषतः सीमाप्रान्त में अंग्रेज अफसरो की भरमार थी और उनके हृदय में बादशाह खान की यह बात शूल की भांति चुभ गई थी। बादशाह खान और श्री जिन्ना के बीच यदि सौहार्द स्थापित रहता तो जनता पर अपने भारी प्रभाव के कारण सीमाप्रान्त के शासन की बागडोर बादशाह खान के विश्वस्त व्यक्तियो के हाथों में होती, जिसका प्रभाव अंग्रेज अफसरो और पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर पडना निश्चित था। सीमाप्रान्त के तत्कालीन मुस्लिम लीगी नेताओं के (जिनमें अधिक सख्या जमीदारों और जागीरदारों की थी), स्वार्थो को भी इससे चोट पहुँचनी निश्चित थी, अतः श्री जिन्ना को भड़काकर और भय दिखाकर इस समझौते को संघर्ष के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

जिन्ना से भेंट और झड़प

श्री जिन्ना ने खुदाई खिदमतगारो का निमंत्रण तो अस्वीकार कर दिया, किन्तु उन्होने इस दल का एक प्रतिनिधि बना कर जिन्ना के पास भेजा और तब बादशाह खान और जिन्ना के बीच अच्छी खासी झडप हो गई। ६ दिसम्बर १९५६ को पाकिस्तान के उच्च न्यायालय मे दिए गए अपने बयान में बादशाह खान ने अपनी इसे भेट का ब्यौरा देते हुए कहा, 'मै उन से मिला और हम दो घटे तक बातचीत करते रहे। मैने अनुभव किया कि उनके साथियों ने उनके मन में विष भर दिया है। उन्होने मुझसे मुस्लिम लीग मे सम्मिलित होने को कहा। मैने पूछा कि वे ऐसा क्यों चाहते है? मैने उन्हे बताया कि हिन्दू यही करोड़ों रुपए की सम्पत्ति छोड़ गए है और यह सम्पत्ति मुस्लिम लोगियो ने लूट ली है। न्यायतः यह सम्पत्ति राष्ट्र की है, किन्तु कोई भी मुस्लिम लीगी नेता एक पाई भी सरकार को देने के लिए तैयार नही है। मैने कायदे आजम से कहा कि किसी एक भी

ऐसे महत्वपूर्ण मुस्लिम लीगी नेता का नाम बताइए, जिसने लूटमार में हिस्सा न लिया हो।

'इन वार्तालाप के अन्त में भी जब कायदे आजम ने लीग में सम्मिलित होने का अत्यधिक अनुरोध किया तो मैं अपने मित्रों से परामर्श करने को सहमत हो गया। बाद में मेरे दल ने अपनी बैठक में एक प्रस्ताव स्वीकृत किया, जिस में कहा गया था कि हम स्वाधीनता तथा लोकतन्त्र के लिए सदा संघर्ष करते रहे हैं, पर हम अपना संगठन तोड़ने पर सहमत नहीं हो सकते।'

'कहा जाता है कि सीमाप्रान्त से प्रस्थान करते समय कायदे आजम ने हमारे दल को कुचलने के सम्पूर्ण अधिकार सर उण्डास को दे दिए थे।'

दमन का घटाटोप

उपरोक्त वार्तालाप के पश्चात् ही बादशाह खान और उनके साथियों का अपना भविष्य स्पष्ट दिखने लगा। खान के अनेक साथी उनको छोड़कर मुस्लिम लीग में जा मिले। मजे की बात यह थी कि मुस्लिम लीग में सम्मिलित होने वाले इन साथियों में अनेक वे व्यक्ति थे जिन्होंने आजाद कबायली इलाके में जाकर पाकिस्तान के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह करने का सुझाव दिया था। कुछ साथी इसी प्रकार भारत आ गए और तभी से वे भारत में ही बसे हुए हैं। इसके विपरीत अनेक व्यक्ति बादशाह खान के और भी निकट आ गये और निर्भयता से अपने प्यारे नेता के कार्यक्रमों में भाग लेने लगे।

इसके पश्चात् ही सम्पूर्ण सीमा प्रान्त में भारी तादाद में गिरफ्तारिया की गईं। बादशाह खान के बड़े भाई, पुत्र, भतीजे और दामाद तथा उनके अनेक साथी कार्यकर्ता पकड़ लिए गए। खुदाई खिदमतगार संगठन के साधारण सदस्यों पर जो भीषण अत्याचार किये गये, उनकी कोई सीमा ही नही। बादशाह खान का अपना गाँव जिस जिले में है, उसी जिले के बाबड़ा गांव में खुदाई-खिदमतगारों के एक शान्त प्रदर्शन पर गोलियां चलाकर सैकड़ों व्यक्तियों को भून डाला गया। अनेक व्यक्ति गिरफ्तार करने के बाद भीषण रूप से पीटे गए और नितान्त नंगा करके उनके जूलूस निकाले गए। घरों की तलाशी लेते समय महिलाओं को भी अपमानित किया गया।

सन् १९५१ में बादशाह खान जब अपने इस दंड की अवधि पूरी कर चुके तो उन्हे बगाल रेगुलेशन ऐक्ट के मातहत वही जेल में पुनः तीन वर्ष की सजा सुना दी गई। तत्पश्चात् जनवरी १९५४ में उन्हे इस प्रतिबन्ध के साथ मुक्त किया गया कि वे पजाब के अतिरिक्त अन्य किसी प्रदेश मे भी नही जा सकते।

कश्मीर समस्या

बादशाह खान से जेल में जब एक दिन नवाब ममदांत ने भेंट की तो उन्होने कश्मीर की समस्या सुलझाने के लिए अपनी सेवाएं प्रस्तुत करते हुए एक बड़ी उपयोगी योजना उनके सामने रक्खी। नबाब साहब ने वायदा किया कि इस सम्बन्ध मे पाकिस्तान सरकार विचार करेगी और बादशाह खान को उसके निर्णय की सूचना दी जायेगी।

किन्तु इसके पश्चात् नबाब साहब की कोई प्रतिक्रिया बादशाह खान तक नही पहुंची। वास्तव मे पाकिस्तान सरकार में जो लोग थे, वे नही चाहते थे कि बादशाह खान को किसी प्रकार का महत्व दिया जाए। काश्मीर की अपेक्षा उन्हे अपनी कुर्सियों की चिन्ता अधिक थी और बादशाह खान के कथनानुसार "दिवंगत नवावजादा लियाकतअली ने पाक ऐसेम्बली के दो सदस्यों से कहा था कि कायदे आजम की मृत्यु के पश्चात् वे कोई ऐसा नेता नहीं चाहते जो जनता के हृदय और मस्तिष्क पर अधिकार कर ले।" यही था पाकिस्तान का सरकारी रुख।

अभूतपूर्व स्वागत

सन् १९५५ मे बादशाह के ऊपर से सीमा प्रान्त मे प्रविष्ट न होने का प्रतिबन्ध हटा लिया गया। १७ जुलाई को लगभग सात वर्ष बाद जब बादशाह खान ने सीमा प्रान्त मे प्रवेश किया तो जैसे सम्पूर्ण पठान प्रदेश की जनता उनके स्वागत के लिए उमड पडी। विशेष बात यह थी कि पीरमशन की शरीफ और बादशाह गुल जैसे उनके प्रमुख विरोधी पठान नेता भी इस स्वागत समारोह मे सबसे आगे थे। अटक नदी के पुल से ठेठ पेशावर तक लम्बे जुलूस के साथ बादशाह खान ने अपनी यह यात्रा की और उससे यह सिद्ध हो गया कि पाकिस्तान सरकार द्वारा किए गए दमन और मिथ्या प्रचार से उनकी लोकप्रियता घटी नही है, बल्कि बढी है। बादशाह खान के इस अभूतपूर्व स्वागत को देखकर पाकिस्तान के सत्ताधारियो ने एक बार पुन. उनसे समझौता करने का यत्न किया। किन्तु यह तभी सम्भव हो सकता था जब दोनो पक्षो मे कोई एक अपनी परिस्थिति मे आमूल परिवर्तन कर देता।

एक यूनिट का विरोध

करते रहेंगे जब तक जनता का बहुमत एक यूनिट योजना को स्वीकार नही कर लेता।

पाकिस्तान के सत्ताधारी बादशाह खान की इस दृढता पर बेहद झुंझलाए किन्तु वे उनको पुनः जेल भी नही भेजना चाहते थे। अन्त में उन्होने बादशाह खान के बडे भाई डा० खान साहब पर डोरे डालने शुरू किए। वे जानते थे कि बादशाह खान अपने बड़े भाई का अत्यधिक आदर करते है और यदि डा० साहब को अपनी ओर मिला लिया जाय तो बादशाह खान अपने आप चुप हो जायेंगे।

सत्ताधारी अपनी चाल में इस सीमा तक सफल रहे कि उन्होंने डॉ० साहब को पश्चिमी पाकिस्तान के प्रधान मन्त्रित्व का लालच देकर अपनी ओर मिला लिया, किन्तु बादशाह खान पर इसका किंचित् भी प्रभाव नही पडा। बादशाह खान ने 'एन्टी यूनिट फ्रन्ट' की स्थापना की और सम्पूर्ण पठान प्रदेश का दौरा किया। परिणाम यह हुआ कि सीमाप्रान्त का प्रत्येक गाव यूनिट विरोधी नारो से गूंजने लगा।

पख्तूनिस्तान की माँग

एक यूनिट की स्थापना के विरोध के साथ ही बादशाह खान पख्तूनिस्तान की स्थापना के लिए भी बराबर प्रचार करते रहे, जिसकी माँग उन्होने पाकिस्तान को पार्लियामेंट मे दिए गये अपने प्रथम भाषण में की थी। अपनी इस माँग के अन्तर्गत बादशाह खान केवल यह चाहते थे कि सम्पूर्ण पठान प्रदेश को एक प्रान्त के रूप में स्वीकार कर लिया जाए, जो पाकिस्तान का ही एक अंग बन कर रहेगा। पाकिस्तान के सत्ताधारी इस माँग की स्वीकृति में अपनी मृत्यु देखते थे, अत वे इस पर विचार करने तक के लिए तैयार नही थे। अत बादशाह खान का पाकिस्तान सरकार से विरोध बढ़ता ही गया, उस सरकार से, जिसके प्रधान मन्त्री उनके सगे बड़े भाई थे और जिनका वे पिता के समान आदर करते रहे थे।

अन्त में उन्हे डॉ० खान साहब की सरकार ने पुन. गिरफ्तार कर लिया और छ सात महीने जेल मे रखने के पश्चात् अदालत उठने तक की सजा तथा चौदह हजार रु० का जुर्माना किया गया। बादशाह खान पर इसका भी कोई प्रभाव नही पडा और २४ जनवरी १९५७ को जैसे ही वे जेल से रिहा हुए, उन्होने पाकिस्तान नेशनल

पार्टी में आने को सम्मिलित करके इस सरकार विरोधी संयुक्त मोर्चे को सबल बनाने का उद्योग प्रारम्भ कर दिया। पाकिस्तान की जन-विरोधी सरकार इस दृढ़ जन-नेता पर किसी भी प्रकार विजय प्राप्त नहीं कर सकी।

इसी बीच पाकिस्तान की सरकार में निरन्तर उलट फेर होते रहे और जिसके हाथ में भी लाठी आ गई, उसी ने सत्ता की भैंस पर अपना अधिकार जमा लिया। अंत में जनरल अयूब खान का फौजी शासन आया, तो बड़े-बड़े विरोधी नेताओं के देवता कूच कर गए। किन्तु बादशाह खान अपनी जगह अडिग रहे और अयूब सरकार ने बादशाह खान को पुनः जेल में डाल दिया। कहा जाता है कि बादशाह खान अब इतने दुर्बल हो गए हैं कि नमाज के लिए खड़े होने में भी असमर्थ हैं। अनुमान है कि अयूब सरकार उनको इसी लिए छोड़ने को विवश हुई है कि यदि कहीं जेल में बादशाह खान को कुछ हो जाता तो पाकिस्तान की तानाशाही को अति भयानक स्थिति का सामना करना पड़ता।

मानवीय अधिकारों के लिए लगभग आधी शताब्दी तक यातनाएं सहन करने वाला यह दृढ़ तपस्वी, वीर नेता अधिक से अधिक दिनों तक जीवित रहे, लाखों-करोड़ों व्यक्तियों की यह हार्दिक कामना ही, सम्भव है, बादशाह खान के स्वास्थ्य के लिए कुछ मंगल-दायक सिद्ध हो !

साम्प्रदायिकता की आंधी और सीमान्त गांधी

2

—श्री अक्षयकुमार जैन

गाँधी जन्म शताब्दी के पुनीत अवसर पर दूसरे गाँधी का भारत आगमन एक सुखद एवं महत्वपूर्ण घटना है। बादशाह खान का गाँधीजी के साथ निकट का संबध रहा। भारत की स्वाधीनता के लिए बादशाह ने गाँधी जी के आदोलनों में सक्रिय भाग लिया था, इसलिए उन्हे अपने मध्य पा कर भारत की जनता का प्रसन्नता अनुभव करना स्वाभाविक है।

बादशाह खान ने अपनी आत्मकथा मे लिखा है कि उन की पैदाइश किस तारीख को हुई यह उन्हे पता नही, लेकिन उनकी माँ जिस तरह बतलाती थी उस से वे अस्सी वर्ष के हुए। उन का घर पश्चिमी सीमाप्रान्त के उतमानजई गाँव मे है। प्रेम से लोग उन्हे 'बाच्चा खान' कहते है और इस प्रेम का कारण है बहादुर पख्तून जाति के लिए उन का बलिदान। शुरू मे उन्होने शिक्षा के अभाव में फैले मनोमालिन्य, दलबंदो आदि कुरीतियो को दूर करने के लिए अपने आप को लगाया और अनेक स्थानो पर विद्या और ज्ञान के मदिरो की स्थापना की। रूढिवाद को समाप्त करने के लिए सामाजिक चेतना जगायी और अपने आप को 'खुदाई खिदमतगार' सिद्ध कर दिया।

बादशाह खान भी गाँधीजी की ही तरह देश विभाजन के विरुद्ध थे। विभाजन से पूर्व सीमाप्रान्त मे जनमत सग्रह लिया गया था, उस में जनता के सामने केवल दो विकल्प रखे गये थे. (१) वहाँ के लोग भारत में मिलना चाहते है या (२) पाकिस्तान मे। बादशाह खान और उनके बड़े भाई मरहूम डा० खान साहब चाहते थे कि एक विकल्प यह भी रखा जाय कि पख्तून स्वतत्र रहे, लेकिन यह नही माना गया। इसके लिए मुस्लिम लीग तो तैयार होती ही क्यो, क्योकि इससे उसका स्वार्थ चकनाचूर हो जाता, काग्रेस ने भी घुटने टेक दिये। तब स्वतत्रचेता पठानो ने उस जनमत सग्रह का बहिष्कार कर

दिया। उसका परिणाम यह निकला कि अंग्रेजो और मुस्लिम लीग की दुरभिसंधि से सीमाप्रान्त पाकिस्तान का अंग बन गया।

बादशाह खान ने उसके लिए कांग्रेस को माफ नही किया, किन्तु सच्चे खुदाई खिदमतगार की तरह उन्होने अपने मन मे कोई क्रोध अथवा घृणा नही रखी। उन्हे आज भी पहले की ही तरह भारत से लगाव है।

बादशाह खान ने अपने जीवन के १५ वर्ष अंग्रेजी सरकार की जेलो मे बिताये और आजादी के बाद जिस की प्राप्ति के लिए शेर की मानिंद पठानो ने गाय की तरह व्यवहार किया था यानी गांधीजी के अहिंसक सत्याग्रह मे अपना पूरा सहयोग दिया था, पठानो के एक मात्र नेता बादशाह खान को पाकिस्तान की जेलो मे १५ वर्ष गुजारने पड़े। अब कुछ वर्षो से वे अफगानिस्तान की राजधानी काबुल के पास रह रहे हैं।

उन्हें इस वर्ष का नेहरू शांति पुरस्कार भी प्रदान किया जायगा, वर्षो से भारत की जनता और नेता उन के स्वागत के आकांक्षी थे।

कैसी विडंबना है कि ऐसे बहादुर और धर्मप्राण व्यक्ति को पाकिस्तान ने कोई महत्व नही दिया और न इज्जत ही दी, यहां तक कि भारत आने के लिए उन्हे काबुल से बेरुत जाना पड़ा क्योंकि पाकिस्तान नही चाहता कि उस के क्षेत्र पर से बादशाह खान उड़ान करें।

भारत का जन-जन उन के स्वागत के लिए आंखें बिछा रहा है, उनमे हम भी शामिल है—बादशाह खान को हमारा सलाम।

सोमनाथ गांधी धार्मिक व्यक्ति है परन्तु साम्प्रदायिक नही। गांधीजी की तरह हिन्दू-मुस्लिम प्रेम और एकता मे उनकी श्रद्धा है। उनका विश्वास है कि अंग्रेजो के कारण ही दोनो जातियो मे विद्वेष की भावना जगी थी।

सच्चा की बात

दिखलाया। एक जाति ने दूसरी जाति के प्रति अपना रोष ही व्यक्त नही किया वलिक लूट-मार, अग्निकाड आदि का बोलबाला रहा।

गुजरात की राजधानी अहमदाबाद और कुछ अन्य वड़े नगरों में सांप्रदायिक दगे हुए जिनमे वहुत से निर्दोष और नि ीह व्यक्तियों के प्राण गये और धन की भारी हानि हुई। इन पक्तियो के लिखे जानें के समय अहमदाबाद के कल-कारखाने तथा दफ्तर खुल गये है और शांति स्थापित हो गयी है, इस शांति स्थापना के लिए श्री मुरार जी देसाई एवं श्री इन्दुलाल याज्ञिक के अनशन का महत्व तो है ही, प्रधान मंत्री श्रीमती इ दिरा गाधी, स्वराष्ट्र मत्री श्री चव्हाण तथा श्री जयप्रकाश नारायण की गुजरात यात्रा का भी योगदान है। आशा की जाती है कि शीघ्र ही पूरी तरह शाति स्थापित हो जायगी और सारा कारोबार पहले की तरह चलने लगेगा।

प्रस्ताव और संकल्प निरर्थक

किन्तु लगता है कि एकता परिषद् के प्रस्ताव केन्द्रीय तथा प्रातीय सरकारो के साप्रदायिकता विरोधी सकल्प निरर्थक सिद्ध हुए है। आजादी के २२ साल वाद भी यदि साप्रदायिकता का जहर समाप्त नही हो पाया तो इसे दुर्भाग्य ही माना जायगा। यह जानते हुए भी कि इससे अपना ही नुकसान होता है, विकास के कार्यक्रम अवरुद्ध हो जाते है और धन और जन की हानि होती है, विभिन्न सप्रदायों के लोग जरा-जरा सी वात पर एक दूसरे का रक्त वहाने के लिए तत्पर दिखायी दे तो यही कहा जायगा कि साप्रदायिकता का रोग दूर नही हुआ और राष्ट्र-प्रेम की सच्ची अनुभूति उनमे नही जगायी जा सकी।

गुजरात मे जिस ढग से सांप्रदायिकता ने मानवता के रक्त से होली खेली वह हिन्दू और मुसलमान दोनो के लिए लज्जा की वात है। इससे न तो किसी जाति-विशेष को लाभ पहुँचा और न देश को, अलवत्ता देश के दुश्मनो को भारत के खिलाफ प्रचार करने का मौका मिल गया।

दंगो की शुरुआत जगन्नाथ मंदिर पर उपसर्ग से हुई और उस मे पुलिस की गाडी से किन्हों ठेलो के टकराने से कुरान और रामायण की पुस्तके जमीन पर गिर जाना भी वातावरण को विगाड़ने मे सहायक हुआ, हालाकि कहा यह जाता है कि जो भी हो, वास्तविक

तथ्यों की जांच के लिए सरकार ने निश्चय किया है, किन्तु मुख्य बात यह है कि साम्प्रदायिकता को समूल नष्ट करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ होना पड़ेगा।

प्रस्ताव पास कर देने मात्र से न तो यह रोग दूर होगा न डंडे के जोर से ही इसे मिटाया जा सकता है। इसके लिए दोनो जातियो मे जागृति पैदा करनी होगी और एक ऐसा वातावरण बनाना होगा कि इस देश के लोग चाहे वे किसी भी धर्म मे विश्वास क्यो न रखते हो एक देशवासी के रूप मे सत्य, अहिंसा और मानवता के प्रति प्रेम करें और सभी धर्मों का आदर सत्कार किया जाय। इसके लिए विद्वेष की खाई को पाटना होगा और कानून एवं व्यवस्था को इतना जागरूक बनाना होगा कि किसी को यह साहस न हो कि वह देश की शांति-व्यवस्था को भंग कर सके, कसूर चाहे बहुसंख्यक का हो या अल्प संख्यक का, दोषी व्यक्ति को कठोर दंड का भागी होना पड़ेगा।

गांधी के देश में, उन की जन्म भूमि मे और उन के जन्म शताब्दी वर्ष मे उन के ही, सिद्धांतो की अवहेलना ही यह घोर लज्जा की बात है, इनके लिए न मुसलमानो को माफ किया जा सकता है और न हिन्दुओं को।

मानवता के पुजारी | 3

—श्री सिद्धराज ढड्ढा

गाँधीजी और बादशाह खान के नाम अध्यात्म की दृष्टि से सर्वोपरि माने जायेगे। ये दोनो महापुरुष सत प्रकृति के, भक्त-हृदय और निष्काम वृत्ति वाले है। दोनो सच्चे मायने में "खुदा के बन्दे" या ईश्वर के सेवक है। बादशाह खान के तो अपने संगठन का नाम ही "खुदाई खिदमतगार" है। इन्ही कारणो से खान साहब ही एक ऐसे अखिल भारतीय नेता थे, जो गाधीजी की मौजूदगी मे ही दूसरे 'गाधी' के नाम से प्रख्यात हुए।

उत्कट देशभक्त

गाधीजी की तरह ही वे भी उत्कट देशभक्त है पर उन्ही की तरह इनकी देश-भक्ति भी सकुचित या आक्रमणशील नही है। खान अब्दुल गफ्फार खॉ के दिल में अपनी पठान जाति और मुल्क के बारे मे असीम प्रेम है। वास्तव मे उन्होने अपनी भोली और बहादुर कौम की दयनीय दशा से द्रवित होकर ही आजीवन सेवा का व्रत लिया। अ ग्रेजो को लगा कि पठान जैसी बहादुर और नीतिमान कौम अगर सगठित और एकता के सूत्र मे बँधी हुई रही तो उनके साम्राज्य को खतरा पैदा होगा। इसलिए उन्होने राजनैतिक दॉवपेच और सत्ता के जरिये पठान जाति और पख्तून प्रदेश को टुकड़ों-टुकड़ो मे बॉट दिया और उन्हे उदार शिक्षा से भी वचित रखा। खान साहब के लिए अपनी कौम की यह स्थिति असह्य हो उठी। अपनी आत्मकथा मे उन्होने अपनी वेदना को प्रकट करते हुए लिखा है—"इतिहास के बड़े से बड़े जालिम भी हमारे मुल्क और हमारी जाति को दबाकर रखने के लिए इससे ज्यादा बरबाद करने वाले उपाय काम मे नही ला सकते थे···अ ग्रेजो के नीचे और बाद में पाकिस्तानी नीति के अन्तर्गत, लाखो पठानो को, जो एक संगठित कौम के तौर पर एशिया का एक शक्तिशाली राष्ट्र बन सकते थे

और मानव जाति की बडी से बडी सेवा कर सकते थे, दुनिया के इतिहास मे स्थान और अस्तित्व से वचित रखा गया। मेरी एक मात्र लड़ाई आज इस जुल्म और इस अन्याय के प्रति है" और फिर अन्तर की पुकार के रूप मे वे पूछते हैं—'इस कौम ने ऐसा क्या अपराध किया है? उसे इतिहास के पन्नो से क्यो मिटाया जा रहा है? उदार, सौम्य और सभ्य स्त्री-पुरुषो की एक कौम को जानबूझ कर क्यो खतम किया जा रहा है?'

जीवन का ध्येय

खान साहब की कोमल, न्याय-प्रिय और महान् आत्मा अपनी कौम के प्रति होने वाले इस अन्याय को बर्दाश्त नही कर सकी। इस अन्याय और अपमान से पठान जाति को मुक्त करना उनके जीवन का ध्येय बन गया। वे लिखते है—'मेरे मन की एक बडी साध है। मैं इन सौम्य, बहादुर और देशभक्त लोगो को विदेशियो के जुल्म से बचाना चाहता हूँ जिन्होने इन्हे लज्जित और अपमानित किया है। मैं उनके लिए एक आजाद दुनिया का निर्माण करना चाहता हूँ जहाँ वे शाति से रह सके, जहाँ वे हँस सके। मैं उस जमीन को चूमना चाहता हूँ जहाँ वहशी अजनबियो द्वारा उजाडे जाने के पहिले किसी वक्त उनके घर खडे थे। मै झाडू लेकर उनके गली-कूचो और घरो को अपने हाथ से साफ करना चाहता हूँ। मै उनके दामन से खून के दाग धोना चाहता हूँ। मै दुनिया को यह दिखाना चाहता हूँ कि पहाडियो मे रहने वाले ये लोग कितने खूबसूरत है और फिर यह घोषणा करना चाहता हूँ कि अगर आप इनसे ज्यादा सौम्य, ज्यादा सभ्य और ज्यादा सुसंस्कृत लोग बता सकते हो तो बताइये!" कितना अदम्य जाति-प्रेम, कितना भावनापूर्ण हृदय, कितनी कवित्वपूर्ण कल्पना और अन्याय के प्रति विद्रोह!

अदा करते और ईश्वर तथा मानवजाति की सेवा के लिए दुनिया के राष्ट्रों में अपना उचित स्थान लेते देखना चाहता हूँ।'

चरम लक्ष्य

इस प्रकार 'ईश्वर और मानव जाति की सेवा' ही खान साहब के सपनो का चरम लक्ष्य है। पठानो को वे एक संगठित और सुदृढ़ कौम बनी हुई इसलिए देखना चाहते है कि वे लोग मानवमात्र की और उनके जरिये ईश्वर की सेवा का अपना कर्त्तव्य पूरा कर सके। इन भोले और बेगुनाह लोगो को मनुष्यता के अपने इस कर्त्तव्य से वंचित रखना सचमुच बहुत बड़ा अन्याय था। इसी अन्याय का मुकाबला करने में खान साहब ने अपने जीवन का सर्वोत्तम भाग पहले अंग्रेजों की और फिर पाकिस्तान की जेलो मे बिताया और आज अस्सी वर्ष की उम्र में भी वे पठानों को एक सभ्य और संगठित राष्ट्र बनाने के स्वप्न को साकार करने मे लगे है।

o

खान अब्दुल गफ्फार खाँ संबंधी संस्मरण

4

श्री युगल किशोर चतुर्वेदी

इस समय यह तो ठीक ठीक स्मरण हो नहीं रहा है कि मैंने सर्व प्रथम सीमान्त गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ के सबंध में कब सुना था, परन्तु ऐसा ध्यान में आता है कि सन् १९३० के पहले ही आपके द्वारा सीमा प्रान्त में चलाये गये अहिंसात्मक आन्दोलन तथा वहाँ के निवासियों की कांग्रेस और कांग्रेस के नेताओं के प्रति आदर और श्रद्धा के भाव उत्पन्न हो चुके थे तथा वहाँ की जनता भी आपके कार्यों से बहुत कुछ परिचित हो चुकी थी। उन दिनों समाचार-पत्रों में यह प्रकाशित हुआ था कि जब पंजाब के कुछ खादीधारी कांग्रेसजन पेशावर से लाहौर की ओर आ रहे थे, तो मार्ग में कुछ पठानों ने उनकी कार को लूटने खसोटने के उद्देश्य से रोक लिया था, परन्तु जब उन्होंने कार में बैठे हुए व्यक्तियों को खादी पहने देखा, तो उन्होंने परस्पर में पश्तो भाषा में कुछ कहा और कार को आगे बढ़ जाने का संकेत कर दिया।

विशेष निमंत्रण पर कुछ दिनों के लिए सेवाग्राम आश्रम में आकर रहने लगे, तब तो आपकी ख्याति अत्यधिक बढ़ गई थी।

खान अब्दुल गफ्फार खाँ ही नही, आपके अनुयायी खुदाई खिदमतगारो के अन्दर भी राष्ट्रीयता की भावना कूट-कूट कर भरी थी। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मुझे सन् १९३७ में दिल्ली के अन्दर आयोजित तत्कालीन काग्रेस विधायकों के सम्मेलन से मिला था। इस सम्मेलन मे उक्त विधायकों को अपने-अपने प्रान्तों में कांग्रेस की रीति-नीति के अनुसार शासन-संचालन करने के लिए विधान निर्धारित किया गया था। अत उसमें अखिल भारतीय स्तर के प्रायः सभी नेता, अधिकांश कार्यकर्ता तथा भारी सख्या मे दर्शक उपस्थित हुए थे।

इस अवसर पर जब नेताओं के भाषण होने लगे, तो वहाँ किस भाषा में बोला जाय, यह प्रश्न उठ खडा हुआ। अधिकाश लोग हिन्दी में चाहते थे और कुछ अंग्रेजी में भी। इस विवाद के दौरान महामना मालवीयजी ने भाषण देना आरम्भ किया तो आपने श्रोताओं से पूछा कि वह हिन्दी मे बोलेगे या अंग्रेजी में, उस समय एक ओर से जब कुछ लोग 'इंगलिश-इंगलिश' चिल्लाने लगे, तो दूसरी ओर से लगभग २०-२५ लालकुर्ती दल के सदस्य एक साथ उठ खड़े हुए और बड़ी बुलन्द आवाज में बोले, 'पंडत साहब, हम अंग्रेजी में सुनना नही चाहते, आप हिन्दी बोलिये, हम हिन्दी समझता है।" उस समय हम हिन्दी के हिमायती उन पश्तो भाषी पठानों के अंग्रेजी विरोधी और हिन्दी के पक्ष मे भावों को देखकर दंग रह गये। यह सब खान अब्दुल गफ्फार खाँ की शिक्षाओं का ही प्रभाव था, जो गाँधीजी की भाँति मातृभूमि के समान ही मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषा का समर्थन करते रहे है।

तदनन्तर और कुछ अवसरो पर भी सीमान्त गाँधी के दर्शनों तथा भाषणो का लाभ तो मिलता रहा था, परन्तु पूरा एक सप्ताह ऐसा भी मिला जब आप के साथ ही खाना-पीना और आपकी बात-चीतों में सम्मिलित होने का सुयोग भी सुलभ हो गया था।

सन् १९४२ के जुलाई मास के प्रथम सप्ताह में वर्धा में सेठ जमनालाल बजाज की अतिथिशाला-बजाजबाड़ी में काँग्रेस कार्यकारिणी समिति की बैठक हुई थी। उसमें पारित प्रस्ताव के

अनुसार ८ अगस्त सन् १९४२ को बम्बई मे आयोजित कांग्रेस महासमिति की बैठक में 'भारत छोड़ो' तथा 'करो या मरो' का नारा सर्वत्र गूंज उठा था।

उन्ही दिनो इन पक्तियो का लेखक भी भरतपुर राज्यप्रजा-परिषद् के प्रतिनिधि के रूप मे वहाँ एकत्रित नेताओ–विशेषत. अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् के तत्कालीन अध्यक्ष पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा महात्मा गांधी को भरतपुर राज्य की स्थिति से अवगत कराके अपने यहाँ आन्दोलन आरम्भ करने की अनुमति प्राप्त करने गया था। संयोग की बात है, कि श्री हरिभाऊ जी उपाध्याय दा साहिब भी उन दिनो वही महिला आश्रम मे रहते हुए स्वर्गीय सेठ जमनालाल जी बजाज की जीवनी लिखने का कार्य कर रहे थे। अत रात्रि को सोने के लिए तो मै वही चला गया था, बाकी दिन भर बजाजवाडी अथवा सेवाग्राम आश्रम मे अधिकाश समय व्यतीत करता था।

क्योकि मेरी भोजन–व्यवस्था भी बजाजवाडी मे कार्यकारिणी के सदस्यो के साथ ही रक्खी थी, अत मुझे उन सभी के साथ, जिनमे बादशाह खान के अतिरिक्त स्वर्गीय मौलाना आजाद, पडित जवाहर-लाल नेहरू, डॉ० पट्टाभि सीतारमैया, श्रीमती सरोजनी नायडू, पडित गोविन्द बल्लभ पन्त तथा बा० पुरुषोत्तम दास जी टंडन का मुझे अभी तक स्मरण है, भोजन करना पड़ता था।

उन दिनो भी खान साहब हल्के नीले रग लिये हुए मोटी खादी का कुर्ता और पाजामा ही पहनते थे, जिनको वहाँ स्वयं ही नित्यप्रति धोया करते थे। उस समय का मुझे यह भी स्मरण है कि मौलाना आजाद और श्रीमती सरोजनी नायडू तो पृथक-पृथक मेज कुर्सियो पर बैठ कर भोजन करते थे, शेष सभी सदस्य, जिनमे खान साहब भी होते थे, नीचे जमीन पर बिछे आसनो पर बैठकर भोजन करते थे।

तब भोजन के समय यह चर्चा चली कि इस प्रस्ताव की सरकार पर क्या प्रतिक्रिया होगी, क्या वह बम्बई मे महासमिति की उस बैठक को होने देगी, जिसका उल्लेख उक्त प्रस्ताव के अन्त में किया गया है, अथवा उससे पहले ही वह कार्यकारिणी के सदस्यों अथवा कांग्रेस के अन्य प्रमुख नेताओ की धर-पकड़ आरम्भ कर देगी।

इसी संदर्भ मे हो रही बातचीत के दौरान बादशाह खान ने भी विनोद के लहजे में ही कहा कि "आप लोग तो अपने अपने सूबों के पास ही है, यहाँ से चलकर झट अपने घरो में जा घुसोगे, लेकिन मुझे अपने घर तक पहुँचने मे कई सूबो मे होकर गुजरना पड़ेगा, इससे न मालूम मुझे कही रास्ते में ही गिरफ्तार कर ले और मै अब घर पर पहुँच ही न सकूँ।" इस पर सभी सदस्यो ने हँसते हुए आपके प्रति गहरी सहानुभूति प्रकट की।

अन्त में सन् १९४२ के आन्दोलन के सिलसिले में सभी नेता जेल चले गये थे और सन् १९४५ में ही वहाँ से उनको मुक्ति मिली थी। अत फिर कुछ वर्षो तक उन नेताओ के दर्शन दुर्लभ हो रहे थे, जिसके फलस्वरूप बादशाह खान को अन्तिम बार तब देख पाया था, जब सन् १९४७ मे देश का दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन करने, पाकिस्तान का पृथक् राष्ट्र बनाने और पख्तूनिस्तान का उसमे विलीनीकरण करने के ब्रिटिश सरकार के निर्णय को कॉग्रेस कार्यसमिति ने भी आपके तथा महात्मा गॉधी के डबल विरोध के बावजूद, स्वीकार कर लिया था। इससे आप उन दिनो अत्यन्त खिन्न थे और भारत की उस जनता से, जिसको स्वतन्त्रता दिलाने मे आपने भगीरथ प्रयत्न किया था, सदा सर्वदा के लिए दूर हो जाने से यहाँ के प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थानो को देखने की दृष्टि से आगरा तथा फतेहपुर-सीकरी पधारे थे। उस समय स्थानीय राजामण्डी स्टेशन के समीप स्थित दिल्ली दरवाजा पर आपका बड़ा ही भव्य और शानदार स्वागत किया गया था।

उन दिनो मै भी भरतपुर राज्य से निष्कासित होने के कारण आगरा ही रहता था, अत उस समय आपके अग्रज डॉ० खान साहब भरतपुर नरेश के निमन्त्रण पर वहाँ पधारे थे, तो आपने महाराज से कहकर तत्कालीन प्रजा परिषद् के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओ

को बुलाया था, तब आपसे मिलने तथा संगठन सम्बन्धी बातचीत करने का अवसर मिला था।

बस उसके उपरान्त आपके सीमाप्रान्त चले जाने और वहाँ १५ वर्ष तक पाकिस्तान सरकार की जेल मे यातनाये भोगने और फिर कुछ वर्ष तक काबुल रहने के कारण अब भारत के स्वतन्त्र होने के २२ वर्ष बाद आप इस देश मे पधारने और यहाँ की जनता को अपने देवतुल्य दर्शन देने एव गांधी जी के प्रेम, शान्ति और भातृभाव का सन्देश सुनाने मे समर्थ हो पाये है।

अब कुछ ही दिनो मे आप भारत से प्रस्थान करने के पश्चात् यहाँ कब पधार कर हमारा मार्गदर्शन कर सकेंगे, कुछ कहा नही जा सकता।

बादशाह खान और पख्तूनिस्तान

5

—डा० देशराज भंगी

खान अब्दुल गफ्फार खाँ, जो श्रद्धा से बाच्चा खान या खान-बादशाह कहे जाते है, आजकल जलालाबाद (अफगानिस्तान) में देश-निर्वासन के दिन काट रहे है। परन्तु वे चुप नही बैठे हुए है। वे आजाद कबायली पठानो को खुदाई खिदमतगार ढंग से एक महान् शक्ति में संगठित कर रहे है। इन पठानो की कुल संख्या कोई पचास लाख होगी।

गांधीजी का महान् अनुयायी तथा भारत मा का महान् सपूत ललचायी दृष्टि से मा की गोद मे आने के लिए भारत सरकार की तरफ देख रहा है। शास्त्रीजी उनसे मिलने के लिए ताशकन्द से काबुल जाने वाले थे और वे शायद उन्हें भारत आने के लिए मना लेते, कि मृत्यु के निर्दयी हाथों ने हमारे अनुपम वीर को छीन लिया।

१९२९ में जनता की सेवा करने के लिए उन्होने 'खुदाई खिदमतगार' आन्दोलन की नीव रखी थी। चार मास भी नही हुए थे कि इस आन्दोलन को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया और बादशाह खान गिरफ्तार कर लिए गए। ज्यों-ज्यो दमन बढता गया, त्यो-त्यो यह आन्दोलन तेज होता गया। बादशाह खान के कैद से छूटने के बाद खुदाई खिदमतगारो की सख्या पॉच सौ से बढकर पचास हजार हो गई। तब उन्होने पख्तूनिस्तान की सहायता के लिए काग्रेस से अपील की। काग्रेस इस शर्त पर मान गई कि वह काग्रेस में सम्मिलित हो जाये, तदनुसार १९३० में खान बादशाह पचास हजार साथियो सहित काग्रेस में सम्मिलित हो गए और लगातार सतरह वर्ष तिरगे के नीचे स्वतंत्रता-सग्राम में जूझते रहे। गाधीजी की अहिसा की भावना इस आश्चर्यजनक ढग से खुदाई-

खिदमतगारो के दिलो मे उन्होने भर दी कि खूंखार लड़ाके पठान अहिंसा के अनुपम सैनिक बन गए। चारसद्दा की दुर्घटना मे पाच सौ अहिंसक खुदाई खिदमतगारो ने अपनी छातियाँ जालिम अंग्रेज की दनदनाती गोलियो के सामने खोल दी। अप्रैल, १९४२ मे टोकियो रेडियो से इस सम्बन्ध मे श्री रासबिहारी बोस ने कहा था—"हिन्दुस्तानी सदैव चारसद्दा के महाबलिदान के लिए खान बादशाह के व्यक्तित्व के सामने मौन वदना में सिर झुकाए रहेगे।"

१९४७ मे आजादी आई। कांग्रेस ने माउंटबैटन की चाल में आकर देश-विभाजन मान लिया। गाधीजी की भावनाओ की भी उपेक्षा कर दी गई। गाधीजी का दिल खान बादशाह की दुर्दशा पर रोता रहा, लेकिन कांग्रेस ने खान बादशाह को पाकिस्तानी भेडियो के सामने डाल दिया। यह मित्र-द्रोह की सीमा थी। सम्भवत: इसी मित्र-द्रोह का दण्ड कांग्रेस को आज मिल रहा है।

काबुल मे भेट

दो अप्रैल, १९६७ को गांधी शताब्दी कमेटी का प्रतिनिधि-मंडल, जिसमे मै भी सम्मिलित था, खान बादशाह से मिलने और उनसे गाधीजी की पुण्य स्मृतियां टेप रिकार्ड करने के निमित्त काबुल रवाना हुआ। सवेरे नौ बजे पालम हवाई अड्डे मे हम इडियन एयर लाइन्स के विमान मे काबुल चल दिए। बारह बजे दोपहर हम काबुल जा उतरे। वहाँ इतनी ठड थी कि गर्म कपडो में भी हम ठिठुर रहे थे। हमारे राजदूत जनरल थापर और अन्य कर्मचारियो ने हमारा हार्दिक स्वागत किया।

जब मैं उनके पाँव छूने के लिए झुका तो उन्होने मुझे उठा कर अपने गले से लगा लिया।

हिन्दुस्तान मेरा मुल्क है

खान बादशाह नम्रता, प्रेम और सेवा की जीती-जागती मूर्ति है। इतनी मिठास, इतनी मधुर वाणी, इतना भोलापन और इतनी सहनशीलता! ईश्वर पर विश्वास की चमकती किरणे उनके रोम-रोम में से निकलती है। मेरा सौभाग्य था कि मुझे कुछ निजी सेवा का अवसर मिला। खान बादशाह की टागो में कुछ रीढ का दर्द रहता है। पाकिस्तानी कारागार में शायद उन्हे विष दिया गया था जिसका कुछ प्रभाव अब तक बाकी है। उन्होंने स्वेच्छा से मेरी चिकित्सा स्वीकार की। प्रतिदिन घन्टे भर तक मुझे उनकी मालिश करने और वार्तालाप करने का सौभाग्य मिलता रहा। वार्तालाप में उन्होंने कहा—"हम पख्तून लोग आर्य है और हमें आर्य होने का गर्व है। हिन्दुस्तान मेरा मुल्क है और हिन्दुस्तानी मेरे भाई। हम एक देश के लोग है। हम एक राष्ट्र के थे और आज भी है।"

फिर बोले—"हमने हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता के लिए बहुत कष्ट उठाए है, बहुत बलिदान दिये है। हिन्दुस्तान पर हमारा ऋण है और यह ऋण चुकाना हिन्दुस्तानियो का कर्तव्य है। १९३० मे जब हम कांग्रेस मे सम्मिलित हुए तो कांग्रेस ने पख्तूनिस्तान की स ा-यता का वचन दिया था। १९४७ मे स्वतन्त्रता आई। हिन्दुस्तान को तो आजादी मिल गई, लेकिन हमारी आजादो कहाँ गई? काग्रेस ने हमारे साथ मित्र-द्रोह किया, हमें पाकिस्तानी भेड़ियों के सामने डाल दिया। गाधाजी ने उस समय हमें यह वचन दिया था कि यदि पाकिस्तान ने पठानों के साथ अन्याय किया और खुदाई-खिदमतगारो को तंग किया तो हिन्द सरकार आपकी सहायता को आएगी, भले ही पाकिस्तान के साथ युद्ध करना पड़े, परन्तु यह अन्याय कदापि सहन नही किया जायगा। हम पर पाकिस्तानी दानवो ने अग्रेजो से दस गुना ज्यादा अत्याचार किया है। आज हम सहायता माँग रहे है। परन्तु भारत सरकार मौन है। अब वह सारे वचन कहाँ गए?"

फिर अपने स्वर में पूर्ण गम्भीरता लाते हुए बोले—"आजाद कबायली पख्तूनिस्तान प्राप्त करने के लिए पाकिस्तान के विरुद्ध

युद्ध करने को तैयार है । हिन्द सरकार हमे विश्वास दिलाए कि युद्ध की इस अवस्था मे वह हमारी उसी प्रकार सहायता करेगी जिस प्रकार चीन ने उत्तरी कोरिया की की थी । आज हमे शस्त्रो और ट्रेनिंग प्राप्त अफसरो की आवश्यकता है । हिन्द सरकार को अपनी बीस वर्षीय भूल का पश्चात्ताप करना चाहिए और हमारी पूर्ण रूप से सहायता करके गाधीजी का वचन पालना चाहिए । यदि गाधीजी आज जीवित होते तो निसदेह वह हमारी सहायता करते । परन्तु यह हमारा दुर्भाग्य है कि गाधीजी आज नही है और शेष सभी ने हमे भुला दिया है ।"

खान बादशाह अहिसा के देवता है । गाधीजी के पद-चिन्हो पर चलते हुए तीस वर्ष उन्होने कारागार मे व्यतीत किये थे । पन्द्रह वर्ष अंग्रेजो की जेलो और पन्द्रह वर्ष पाकिस्तान की जेलो मे । पिछले तीन वर्षो से वे आजाद पठानो को खुदाई खिदमतगार के ढग पर सगठित कर रहे है । आज भी उनकी यह मनोकामना है कि संयुक्त राष्ट्र सघ उन्हे शान्ति पूर्वक पख्तूनिस्तान दिला दे, नही तो विवश होकर पठान दूसरे साधन बरतने से न रुकेगे, क्योकि पठानो के सब्र का प्याला भर चुका है । इसी अवस्था को सामने रखकर वे हिन्द सरकार से सहायता मांगते हैं । खान बादशाह गाधीजी की तरह अहिसा के उपासक है, साथ ही वे यथार्थवादी भी है । क्या कश्मीर की रक्षा के लिए गाधीजी ने सेना के प्रयोग के लिए हिन्द सरकार को अपना आशीर्वाद नही दिया था ?

नस्तान के लिए अफगानिस्तान का तनख्वाहदार एजेंट था। मैं पूछत
हूँ, यह आजाद पख्तूनिस्तान है कहाँ जिसके नाम पर हिन्दुस्तान
जिरगे बनते हैं ?

भारत माता के पुण्य मस्तक पर लगा मित्र-द्रोह का कलं
हमें मिटाना है। खान बादशाह का कहना है—"हिन्दुस्तान का भ
इसी मे अधिक लाभ है, क्योंकि पख्तूनिस्तान स्थापित होने
पश्चात् कश्मीर सदैव के लिए पाकिस्तानी लुटेरों के आक्रमणों
सुरक्षित हो जायगा।" खान बादशाह जिन्दाबाद।

●

पाकिस्तान और खान अब्दुल गफ्फार खाँ

6

—श्रीमती कौशल्या रानी

खान अब्दुल गफ्फार खाँ गाधी जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य मे भारत आये और अब कोई सवा चार महीने बाद वापस जा रहे है, चार फरवरी को नयी दिल्ली के कोटला मैदान मे उनका विदाई जलसा हुआ। भारत के उनके इस दौरे के प्रति पाकिस्तान मे शुरू-शुरू मे जो प्रतिक्रिया थी, वह उनके लौटते समय एकदम बदल गयी है। दौरे की तिथि निश्चित हो जाने के बाद एक बार खबर आई थी कि खान अब्दुल गफ्फार खाँ के बडे बेटे खान अब्दुल वली खाँ को इस नीयत से काबुल भेजा गया कि वह अपने पिता को भारत जाने से रोके। जब याह्या खाँ सरकार ने पश्चिम पाकिस्तान के एक यूनिट को भग कर के पठानिस्तान बनाना स्वीकार कर लिया है, तो खाँ साहब को भारत जाने या अफगानिस्तान मे निर्वासित रहने की आवश्यकता नही रह गयी।

लेकिन पठान नेता खान अब्दुल गफ्फार खाँ अपने निश्चय पर अटिग रहे और भारत आये। उन्होंने यहाँ आते ही यह बात स्पष्ट कर दी कि वह पाकिस्तान के नागरिक है और उन्होंने पाकिस्तान के विरुद्ध एक शब्द तक नही कहा। लेकिन पाकिस्तान के भारत-विरोधी तत्वो और अखबारो ने उनके यहाँ आने पर काफी हो-हल्ला मचाया। कराची के दैनिक 'जग' ने तो यहाँ तक लिखा कि उन्हें पाकिस्तान से वापस काबुल जाने की इजाजत न दी जाय और उन से पाकिस्तानी नागरिकता छीन ली जाय।

गलत है। भारत में जो मुसललान है वे अपने को भारत के नागरिक माने। लेकिन बाद में उन्होने रबात सम्मेलन में भारत के अपमान का कारण अहमदाबाद के साप्रदायिक दंगों को बताया, तो पाकिस्तान के भारत विरोधी तत्व बहुत खुश हुए और उन्होने बादशाह खान का विरोध छोड कर तारीफ करना शुरू कर दिया।

उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त मुस्लिम लीग के भूतपूव अध्यक्ष और भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्री मियाँ जफर शाह का लाहौर के 'पाकिस्तान टाइम्स' में एक बयान छपा था, जिसमें कहा गया था कि बादशाह खान ने भारत मे दिये गये अपने वक्तव्यो से सिद्ध कर दिखाया है कि वह एक अद्वितीय साहस वाले वीर पुरुष हैं। जो लोग खान अब्दुल गफ्फार खॉ को पाकिस्तानी नागरिकता से वंचित कर देने की मॉग कर रहे थे उनकी कड़ी आलोचना करते हुए मियॉ जफर शाह ने कहा, 'इस्लाम और पाकिस्तान के ये नेता ऐसी बाते इसलिए कर रहे है कि अगर खान अब्दुल गफ्फार खॉ वतन लौट आते है, तो जनता मे उनका जो असर है, उसके कारण पाकिस्तान की भावी राजनीति में इन तथाकथित नेताओ की दाल नही गलेगी।'

सिन्ध संयुक्त मोर्चे के प्रसिद्ध नेता श्री जी. एम. सैयद और बलूची नेता खान अब्दुल खाँ ने अलग-अलग बयानो में खान अब्दुल गफ्फार खाँ के पाकिस्तान लौटने की खबर का हार्दिक स्वागत किया और आशा व्यक्त की कि वह पाकिस्तान की राजनीति में प्रमुख भूमिका अदा करेगे।

'पाकिस्तान टाइम्स' ने राजनीति के प्रसिद्ध समीक्षक श्री मुहम्मद सईद खाँ का एक लेख प्रकाशित किया है, जिसमे अहमदाबाद के दगों के सिलसिले मे खान अब्दुल गफ्फार खॉ की प्रशसा की गई है।

बादशाह खान

7

—श्री ओमप्रकाश अग्रवाल

सीमांत गांधी—खान अब्दुल गफ्फार खाँ—लगभग ८० वर्ष पूर्व उतमानजई गांव मे जन्मे और युवावस्था से ही मानवता के अनन्य सेवक और निरंतर निर्भीक सामाजिक कार्यकर्ता बने रहे। वे अविकसित जातियो और निर्धनो के प्रति परम्परागत सवेदनशील हैं। प्रारंभिक जीवन से ही आप अपनी पख्तून जाति को विद्या और ज्ञान के अभाव मे पारस्परिक दलबंदी, ईर्ष्या-द्वेष, व्यक्तिगत स्वार्थ तथा अनेक सामाजिक कुरीतियो एव बुरी प्रथाओ मे ग्रस्त देख कर चिंतित हो उठे। अतः सामाजिक शांति के लिए और कट्टरपंथी अंधविश्वासों तथा अंग्रेजो की शोषणात्मक स्थिति से उन्हे मुक्त कराने के लिए उन्होने सन् १९१०-१९२१ के मध्य मुख्यतः शिक्षा प्रसार की दृष्टि से अनेक स्कूल और कालेजो की स्थापना करायी और इस प्रकार से अंग्रेजो की काली सूची मे 'शत्रु' की सज्ञा से आविर्भूत होकर अनेक बार जेल-यातनाएं भोगी। उन्होने 'अंजुमन-इसलाह' नामक एक संस्था भी बनायी।

सन् १९२९ मे बिना स्वार्थ के मानवमात्र की सेवा करने के उद्देश्य से खुदाई खिदमतगार के नाम से एक और संस्था गठित की, जिसका आधार सत्य, अहिंसा और सादा-सरल जीवन था। सामाजिक जागृति के अपने इस अभियान मे और अधिक तेजी लाने के लिए उन्होंने बापू की हरिजन-पत्रिका की भांति 'पख्तून' नामक पत्र भी १९२८ मे प्रकाशित किया, जिस पर अंग्रेजी हुकूमत ने और बाद में समयानुसार पाकिस्तानी सरकार ने कई बार रोक लगायी। आप उन दिनो क्रान्तिकारी समाचारपत्रो का प्रचार-प्रसार भी, जिन में जमींदार, अलहलाल, कामरेड तथा अब्दुल कलाम आजाद का 'अलहिलाल' आदि मुख्य थे, प्राणो को अपनी हथेली पर रख कर गांव-गांव घूम कर स्वतंत्र रूप से करते थे। यही पत्र उन दिनों वास्तव मे सामाजिक और राजनीतिक क्रान्तियों का जन्म देने वाले थे। निर्भीक नैतिक साहस

और निःस्वार्थ जातीय सेवा ने उन्हे जनसाधारण मे बादशाह खान—पठानो का बादशाह—की उपाधि दी थी ।

सिद्धांतों में पूर्ण निष्ठा

आदर्श प्राप्ति के लिए ही नही, आदर्श की सुस्थापना के लिए भी उन्होने अपना व्यक्तिगत एव व्यावहारिक जीवन गाँधीजी की ही तरह आदर्शमय बनाया । तीस वर्ष की लम्बी अवधि में (१५ वर्ष ब्रिटिश द्वारा बनायी गयी जेलो मे और १५ वर्ष पाकिस्तानियो की जेलो मे बिता कर) सदा एक आदर्श कैदी की भूमिका निभायी । शिक्षा-प्रचार एव सामाजिक गतिविधियो के दडस्वरूप प्रारभिक जेल यातनाएँ—दुर्गंधमय, निर्जन वातावरण, धूल और जुंओ से भरे कम्बल, भूख-प्यास के लिए बदबूदार गला-सड़ा भोजन, हाथ-पैर की तंग बेड़ियाँ, अजीब कपड़ो की वेशभषा में न पहचाना जा सकने वाला व्यक्तित्व, श्रमवर्द्धक दुरूह कार्य, नीद हराम कर देने वाली तीन-तीन बार पहरेदारों की गुर्राहट भरी चीख, तुच्छ व्यक्तियों की सम्मान एव व्यक्तित्व के विरुद्ध अनौचित्यपूर्ण प्रताडनाएँ—भी आप को अपने आदर्श से न डिगा सकी । शक्ति एवं अर्थ सपन्न होते हुए भी वे सदा शत्रु के प्रति नम्र रहे है । उन्होने कठोरता, अमानवीयता के बदले अपने मन मे क्षमा का भाव ही रखा; अपराधजन्य कैदियों के साथ होने पर भी वे विचलित नही हुए । वे उनके नित्य के पारस्परिक सघर्षो का निराकरण भी करते थे और साथ ही उन में अच्छे सस्कार पड़े, इसके लिए भी प्रयत्नशील रहे ।

बादशाह खाँ असाधारण धैर्यवान है । जब गिरफ्तारी के लिए आदेश मिलता वे तुरत निस्संकोच भावा से विना कारण की खोज-बीन के ही सबधित अधिकारी के साथ चल पडते । दूसरे विवाह के अवसर पर आपको एक सप्ताह तक विना जाँच के ही हवालात में बद होना पड़ा । आपने जेल के किसी भी नियम को कभी भंग नहीं किया । जब कभी नियम-विरुद्ध कोई अधिकारी आपकी सरलता, प्रेम एव त्याग-भावना से प्रभावित होकर कोई सुविधा (एकान्तवास से हटकर टहलने, गेहूँ के स्थान पर पिसा हुआ आटा भेज देने या बाहर का भोजन भेज देने, मनपसन्द नौकर रखने आदि की सुविधा) मुहैया करना चाहता तो आप बडी आत्मीयता और नम्रता के साथ, उसे अस्वीकार कर देते थे । उन्हे भय था कि ऐसा करने से उनके

पवित्र उद्देश्य मे किसी को सदेह न हो जाए और उस द्रवित अधिकारी की नौकरी खतरे मे न पड जाय। वे विशेष रूप से अ ग्रेजों द्वारा दिए जाने वाले प्रलोभनो से ('यदि दौरे बद कर दो तो जेल से मुक्त कर दिये जाओगे या सजा की अवधि कम कर दी जायगी) सदैव सतर्क रहते थे। गाव पर गोलियो की बौछार, लूटपाट, सामूहिक जुर्माने, साथियो की धर-पकड बादशाह खाँ को बर्दाश्त है किंतु कर्तव्य च्युत होना नही।

भारतीय कांग्रेस से सबध

काग्रेस की राजनीतिक गतिविधियो से बादशाह खान अप्रत्यक्ष रूप से बहुत पहले ही अवगत हो गए थे। सन् १९१९ के रौलट एक्ट के विरुद्ध आयोजित उतमान जई की विशाल जनसभा तथा खिलाफत कमेटियो मे सक्रिय कार्य करने के कारण वे कई बार जेल भी जा चुके थे। सन् १९२० को कलकत्ता और नागपुर के काग्रेस-सम्मेलनो की अपीलो ने उनको एक दर्शक के रूप मे अधिक प्रभावित किया। सन् १९२८ मे जब काग्रेस का सम्मेलन लखनऊ मे हुआ तब सर्वप्रथम बादशाह खान की मुलाकात गांधीजी और नेहरू से हुई और तभी से उनकी राजनीतिक गतिविधि तेज हो गयी। सन् १९३० मे अवसरवादी सहयोगियो की भीरुता के कारण ही उनका प्रत्यक्ष रूप से काग्रेस से सबंध जुडा। धीरे-धीरे वे काग्रेस मे इतने लोकप्रिय हो गये कि सन् १९३४ के बबई अधिवेशन मे उन्हे अध्यक्ष पद पर बैठाने की अथक कोशिशें की गयी किन्तु उन्होंने एक सिपाही और खुदाई खिदमदगार की हैसियत से ही बने रहने की इच्छा जाहिर करके औरो के आग्रह को टाल दिया। वे इसी अवसर पर बडी मुश्किल से अखिल भारतीय स्वदेशी प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के लिए राजी हुए थे। सीमा प्रान्त मे उनके प्रवेश की निषेधाज्ञा के दौरान उन्होंने अधिकतर वर्धा और कलकत्ता में काग्रेस की शक्ति बढाने में महत्वपूर्ण योग दिया।

का भाव जगाया और उन्हें शोषण तथा अन्याय के विरुद्ध सत्याग्रह करने के लिए उत्प्रेरित किया। अंग्रेजों के घोर दमन-चक्र, अत्याचार व अन्याय ने भी उनके संगठन—खुदाई खिदमतगार–को अहिंसा की आस्था से विमुख नही होने दिया। इस संगठन का आधारभूत उद्देश्य हिंसा न करना तथा किसी प्रकार का प्रतिशोध या बदला न लेना, अत्याचार व जुल्म करने वाले को भी क्षमा कर देना तथा मानवमात्र की सेवा-भलाई और बन्धुत्व का प्रचार करना था।

सन् १६३६ मे काग्रेस कार्यकारिणी ने इस शर्त पर कि युद्ध के बाद अंग्रेज भारत को स्वतत्र कर देगे तो वह उनकी सहायता युद्ध में करने को तत्पर है—अहिसावादी सीमान्त गाँधी ने इस समिति से त्यागपत्र दे दिया, क्योंकि उनकी दृष्टि में युद्ध में अंग्रेजो की सहायता करना हिसा को बढावा देना था। निस्संदेह वे स्वतंत्रता से भी बड़ी चीज अहिसा को ही मानते हैं।

पाकिस्तानी जेल से मुक्त होने पर भी वे अभी तक अहिसात्मक सघर्ष में ही विश्वास करते है। पख्तूनो से उन्होने कहा है, 'यदि सुलह-सफाई, समझौते और भाईचारे से हमारी समस्या का समाधान नही होता, तो आपसे मै कहता हूँ कि मेरा तो अहिसा पर विश्वास है, मै तो हिसा को पख्तूनो और सारे ससार के लि ; ध्वस और विनाश का कारण समझता हूँ, क्योकि अहिसा प्रेम है और हिसा घृणा। इसलिए मेरी तो प्रत्येक समय यही चेष्टा रहेगी कि हर बात शातिपूर्ण हो। सन् १६४२ में जब 'भारत छोडो' आन्दोलन के दौरान भारत मे चारो ओर हिसात्मक उपद्रवों की बाढ़ आयी उस समय सीमाप्रान्त मे अग्रेजो की उत्तेजना दिलाने पर भी हिसा की एक भी वारदात नही हुई।

बादशाह खान की विचारधारा | 8

—श्री मोहन लाल वासवानी

बादशाह खान सभी को यही शिक्षा देते है कि खुदा के नाम पर बिना किसी प्रतिफल के जन साधारण की सेवा करो। उनका अटल विश्वास है कि सच्ची बन्दगी है निष्काम सेवा, यही सच्चा मजहब है। जो इन्सान देश की सेवा या गरीबो की सेवा किसी प्रतिफल को ध्यान मे रखकर करना चाहता है, उसकी सेवा कभी भी सफल नही होगी। सेवा के साथ सचाई, धैर्य और कुर्बानी होनी चाहिए। इन्सान मे अगर ये गुण है तो वह अपने कार्य मे अवश्य ही सफल होगा चाहे उसका कितना भी विरोध क्यो न हो। दुनिया मे सफलता बिना विरोध के प्राप्त नही होती है।

बादशाह खान समझते है कि शक्ति इन्सान के दिमाग को असन्तुलित कर देती है। नैपोलियन और नादिरशाह भी जब शक्तिशाली हुए तो उनका स्वय पर से नियन्त्रण हट गया और वे घमण्डी बन गये। हजरत साहब और खलीफा साहब की नम्र और सादी जिन्दगी एक महान जिन्दगी है।

महिलाओ के अधिकार

पैगम्बर या अवतार पैदा किये है जिन सभी ने एक ही राह बताई है, क्योकि सब ऋषि और पैगम्बर खुदा की ओर से आये है । धर्मो की बातों में लडना बेकार है । उदाहरण के लिये जेल के बाहर एक बहुत बड़ा तालाब हो और उस तालाब में से जेल के अन्दर अलग-अलग नलों द्वारा पानी आता हो तो इस बात के लिये लड़ना कि अमुक नल का पानी अच्छा है, लेकिन अमुक नल का पानी खराब है, सरासर बेवकूफी है । धर्म के नाम लड़ाई किन्ही स्वार्थी लोगो की उत्पत्ति है । धर्म दुनिया मे प्रेम और विश्वास उत्पन्न करने के लिये है । सच्चे धर्म को पहचान भी इसी में है । जो धर्म लोगो को प्रेम और भाईचारा सिखाता है, बही सच्चा धर्म है । जो धर्म झगड़े पैदा करता है, वह सच्चा धर्म नही है । तुम खुदाई खिदमतगारा को धर्म की बातो मे बहुत सोच विचार से काम करना है; क्योकि हमने अपने ऊपर सारी सृष्टि की सेवा करने की जिम्मेदारी ली है ।"

हिन्दू-मुस्लिम एकता

एकता के बारे में बादशाह खान के विचार उनके एक भाषण में से लिये गये एक अंश में से प्रकट है, "कितने समय से हम हिन्दू-मुस्लिम एकता के बारे में बाते करते रहे है, लेकिन यह ध्यान रखना चाहिए कि यह समस्या सिर्फ लोगो को मीटिग मे बताने या अखबारों में लिखने से हल न होगी । अगर हल होती तो इससे पहले एकता आ जाती । मैने जो एकता सन् १९२१ मे देखी वह सन् १९३१ मे नही देखता हूँ और जो एकता सन् १९३१ मे थी, वह आज सन् १९४१ में नही रही है । हम एक दूसरे से बहुत दूर होते जा रहे है । एकता की राह मे बहुत रोडे है, जिनको अभी हमने दूर नही किया है । हिन्दू-मुसलमान कई सादियो से एक साथ रहते आये है, लेकिन अभी तक एक दूसरे के धर्म की जानकारो नही रखी है । एकता कही से लानी नही है, लेकिन अपने हृदय मे उत्पन्न करनी है । इसलिये अगर एक दूसरे के धर्म से परिचित न होगे तो दिल मे एकता की भावना नही आयेगी । अगर देश मे एकता लानी है तो एक दूसरे के धर्म का अभ्यास करना चाहिए ।"

बादशाह खान की मित्रता

"आप सबको मालूम होना चाहिये कि मेरी मित्रता मे सिवा गम और तकलीफ के कुछ भी नही है । मै जिस राह का

मुसाफिर हूँ, वह कांटों से भरी हुई है। मेरा मित्र सिर्फ वही हो सकता है जो अपने देश और कौम के लिये अपनी जान खाक में मिलाने के लिये भी तैयार हो। उस राह मे अध्यक्षता जर्नल, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और असेम्बली की मेम्बरी नही है और न ही मन्त्रि-मण्डल है लेकिन सिर्फ कुर्बानी है। मुसीबत और बेचैनी को सहन करना पड़ेगा। देना है, लेकिन लेना बिल्कुल नही है, जब तक हमारा बदकिस्मत देश पूरी तरह आजाद न हुआ है और सरकार के अधिकार हमारे हाथो मे न आये है। इसलिये मेरी मित्रता करने से पहले गौर कीजिये। सिर्फ खुदाई खिदमतगार का फार्म भरने से और लाल पोशाक पहनने से कोई मेरा मित्र नही बन सकता। जो व्यक्ति पार्टीबाजी, दुश्मनी और द्वेष से दूर नही रह सकते और अच्छा चरित्र और अच्छी आदतें और ईमानदारी उत्पन्न नही कर सकते, उनसे मैं स्पष्ट कहूँगा कि मै तुम्हे अपना मित्र बनाने के लिये तैयार नही हूँ। जो व्यक्ति मेरी मित्रता चाहता है, वह पहले मेरे पास आकर विचारो का आदान-प्रदान करे और खुदाई खिदमतगारो के सिद्धान्तो को समझे। अगर वह उन सिद्धान्तो पर चलने के लिये तैयार है तो वह मेरी मित्रता के लिये तैयार हो और अमल करे। लेकिन फिर भी मैं उसे तभी मित्र बनाऊँगा जब उसके अन्य दोस्तो और रिश्तेदारों से जाँच करूंगा कि किसी को उसने सताया तो नही है और बिना किसी लालच के जन साधारण की सेवा करता है या नही और खुदाई खिदमतगार के सिद्धान्तो को मानने वाला है या नही। उस जाँच के बाद ही मै उसे अपना मित्र बनाऊँगा।"

मन्त्रिमण्डल

मण्डल को स्वीकार न करेंगे। ऐसे मन्त्रिमण्डलों से क्या लाभ होगा कि हम नाम मात्र को मन्त्री बन जायँ और किसी भी कर्मचारी का वेतन बढाने और घटाने का अधिकार न हो और देश के विकास के लिये कानून भी न बना सके। सो उस खोखले मन्त्रिमण्डल से लोगों को क्या लाभ ?

एक बार प्रेस रिपोर्टरों ने बादशाह खान से पूछा, "आप किस किस्म का मन्त्रिमण्डल बनाना चाहते है ?" बादशाह खान ने उन्हे बताया कि "मै चाहता हूँ कि भारत की गरीबी को ध्यान मे रखकर ऐसा मन्त्रिमण्डल कायम किया जाय जो बिल्कुल सादा और फकीराना हो और जन साधारण के विकास का ध्यान रखे।" सीमा प्रान्त के लोग चाहते थे कि काग्रेस का शासन हो, क्योंकि रिश्वत का बाजार गर्म था और लोगो को तन ढकने के लिये कपड़ा और खाने के लिए पूरा भोजन भी उपलब्ध न था। अत. उन्होने बादशाह खान से कहा कि काग्रेस मन्त्रिमण्डल दुबारा सीमा प्रान्त में बने, जिससे वे जन साधारण की सेवा करे। बादशाह खान ने उन्हें बताया कि हम खुदाई खिदमतगार है और हमे धैर्य से काम लेना है, अतः अगर कोई पार्टी, जिसका पार्लियामेन्टरी प्रोग्राम मे विश्वास है और समझती है कि वह मन्त्रिमण्डल बनाकर जनसाधारण की सेवा कर सकती है, तो हम खुदाई खिदमतगार उनकी राह में रुकावट नही डालेगे। हम इन्हे अवसर देते है और देखते है कि ये किस हद तक जन साधारण की सेवा कर सकते है। अगर वे जनता की सेवा न कर सके तो हम खुदाई खिदमतगारो का उन्हें साथ न होगा और मन्त्रिमण्डल की जिम्मेदारी लेने के लिए तैयार न होंगे।"

इन्कलाब

इस बात को अच्छी तरह समझ लो कि इन्कलाब आने वाला है, लेकिन वह हमसे इसका मूल्य माँगेगा। मालूम है इन्कलाब का मूल्य क्या है ? उसका मूल्य है देश के नवयुवकों की जान की कुर्बानियाँ। यह इन्कलाब सारे देश की प्रफुल्लता और आराम को तबाह कर देगा। हम कितना भी बचने की कोशिश करे मगर इन्कलाब अवश्य हमसे कुर्बानी लेगा। होशियार और समझदार आदमी इन्कलाब का लाभ लेते है। जो इन्कलाब का मूल्य चुकायेगा वही उसका लाभ प्राप्त करेगा। लेकिन गाफिल और सोई हुई कौम

इन्कलाब का मूल्य भी चुकाती है और उसका दामन भी खाली रह जाता है। इसलिये हमे चाहिये कि गफलत से जाग कर आने वाले इन्कलाब का लाभ लेने की तैयारी करे। ऐसा न हो कि हमारा देश भी बर्बाद हो, खून भी बहे और फिर भी हमारी झोली खाली रह जाय।

आप सोचते होगे कि 'इन्कलाब—जिन्दाबाद' का नारा लगाने मे इन्कलाब आ जायगा। इन्कलाब कोई साधारण बात नही है, लेकिन एक खतरनाक बाढ के समान है और जो उसकी राह मे रुकावट बनेगा वह इस प्रकार बह जायगा जैसे तिनके बह जाते है। इसलिए इन्कलाब के लिये हमे तैयार रहना चाहिए। हम चालीस करोड होते हुए भी गुलाम है। इसका कारण यह है कि हममे वे विशेषताएं उपलब्ध नही हैं जो एक स्वतन्त्र कौम में होनी चाहिए। जब तक हममे स्वतन्त्रता के लिये सच्ची लगन न होगी तब तक स्वतन्त्रता प्राप्ति मुश्किल है। मै खुदा से सदैव यही दुआ मांगता हूं कि वह मेरी कौम को सद्बुद्धि दे।"

नफरत

किन्तु प्रेम से दूर होती है। इसलिये नफरत प्रेम से और बुराई भलाई से ही खत्म की जा सकती है।"

'गुस्सा एक नशा है और इन्सान उस नशे में क्या से क्या कर बैठता है और ऐसे काम करता है जिसके कारण सारी जिन्दगी परेशान रहता है। यह याद रखना चाहिये कि दूसरे को गिराने से इन्सान स्वयं उत्थान नही कर सकता है।"

"यदि कोई व्यक्ति उत्थान करना चाहता है तो उसे अपने हृदय में मित्रता और प्रेम उत्पन्न करना चाहिये।"

नेता में विश्वास

'आपको प्रकृति के कानूनों से बेखबर नही रहना चाहिये। प्रकृति पतझड के बाद बहार लाती है। जब किसी जाति का पतन होता है तो खुदा उसके उत्थान के लिये उस जाति मे ऐसा इन्सान पैदा करता है जो धीरे धीरे उनमें जागृति और मिलाप का जीवन लाता है। ऐसे आन्दोलन का सरकार सदैव विरोध करती हैं।'

'ऐसी सस्थाए इन्कलाबी होती है। दुनिया में यह देखा गया है कि राष्ट्रीय और इन्कलाबी आन्दोलन सफलता की मंजिल पर तभी पहुँचता है जब जातियाँ अपने नेताओं में पूर्ण विश्वास व्यक्त करती है। जिन जातियो को एकता वाली जिन्दगी की विशेषता की जानकारी नही है और जो संस्थाओ मे सम्मिलित होकर कुर्बानी करने के लिये तैयार नही है वे कृतघ्न है। कृतघ्न व्यक्ति से और कोई ज्यादा दोषी नही हो सकता है। पतित कौम का जो उत्थान करता है, वह सब खुदा की मेहरबानी से करता है। जो इन्सान अपनी स्वतन्त्रता के लिये कुछ नही करता है वह इस दुनिया में गुलामी और जलालत भरी जिन्दगी बितायेगा, लेकिन दूसरी दुनिया मे भी दड के योग्य होगा।"

महान् बादशाह खान | 9

—श्री केशवराम

राजनैतिक नेता या सामाजिक कार्यकर्त्ता की महानता इसी से जानी जा सकती है कि वह अपने निजी जीवन मे छोटे—छोटे कार्यकर्त्ताओ के साथ, नौकरो एव अपने आदमियो के साथ कैसा व्यवहार करता है। इस पैमाने पर बादशाह खान तो हर निगाह से 'महान्' सिद्ध हुए है। एक पत्रकार की निगाह से मैंने सरहदी गांधी के मानवीय चरित्र का अध्ययन किया है। उनकी भव्यता के दर्शन करने का सौभाग्य मुझे अनेक बार मिला है।

नवम्बर, १९३९ मे सरहदी गांधी व खान समद खान ने बलूचिस्तान का दौरा किया था। तब बादशाह खान के लिये जिन्दगी का पहला अवसर था बलूचिस्तान का दौरा करने का, इसलिए उनका वह दौरा तूफानी भी था। पत्रकार के नाते इस दौरे मे मै सवेरे से रात तक इनके ही साथ रहा था।

कार्रवाही समद खान के विरुद्ध

एक दृश्य यह भी था

बादशाह खान को सिबी से जेकोबाबाद जाना था। यह यात्रा उन्होने रेल से की थी। वे सदैव तीसरे दर्जे के डिब्बे में बैठकर सफर करते रहे हैं। तीसरे दर्जे में भी वे ऊपर की बर्थ पर आराम करना पसन्द करते है। सिबी से वे रात के बारह बजे रेल में बैठ थे और पाँच घंटे का सफर था। इस सफर में उन्हे पाँच घटे का आराम नसीब हुआ था।

सरहदी गाँधी अपने साथ कोई सामान या वजन लेकर चलते नही है। एक स्लेटी रंग का खादी का लम्बा कुर्त्ता और स्लेटी रंग का ही खादी का पजामा (यही खुदाई खिदमतगार की वर्दी है) और एक टावेल। इसलिये बादशाह खान के आराम के लिये मैने अपना बिस्तरा ऊपर की बर्थ पर बिछा दिया था और अनुरोध किया था कि वे अब आराम कर ले।

जब रेल जेकोबाबाद (सिध) स्टेशन पर प्रवेश करने लगी तो मैने धीमी आवाज में उन्हे जगाया। उन्होने कहा, "शरीर टूट रहा है...एक दो मिनिट और आराम करने दो।" तब तक गाडी स्टेशन पर आकर रुक गई। काग्रेसी नेतागण, सर्वश्री चौइथरा मगिडवानी, माधवदास खुराना, मेहमद अमीन खोसो आदि डिब्बे तक आ गये थे और सरहदी गाँधी जिन्दाबाद के नारे लगाने लगे थे। मैने खान साहब से कहा कि कार्यकर्त्तागण आपका इन्तजार कर रहे है। कृपया उठिये गाडी जल्दी छूट जाएगी। हो-ल्ला सुनकर खान साहब ऊपर की बर्थ पर से नीचे कूद पड़े। पर मैने देखा बाहर जाकर हार पहिनने के बजाय वे बिस्तरे को लपेट रहे थे। मैंने कहा, आप चलिये मै बिस्तर समेट लूँगा। पर वे नही माने। मैने फिर जोर से कहा—यह बिस्तरा मेरा ही है—मै ही इसे लपेटूँगा। इस पर आज्ञा भरे स्वरों मे बादशाह खान ने कहा—मै ही इस बिस्तरे पर सोया हूँ—इसलिये इसे लपेटना मेरा फर्ज है। इस तरह जब तक उन्होने व्यवस्थित रूप से लपेट नही लिया तब तक वे प्लेट फार्म की ओर अपनी पीठ किये खड़े रहे।

एक न एक दिन रास्ते पर आयेगे

बादशाह खान सही माने मे अहिसक साधु हैं। शिकायत, रोष व प्रतिहिसा की भावना उनमे लेश मात्र नही है। इस माने में वे

सही रूप में गांधीवादी साबित हुए हैं। उनकी इस शक्ति के दर्शन मुझे जमाली कबीले के मुख्यालय इस्तामहमद नगर मे हुए। १ दिसम्बर १६३६ का दिन था। दोपहर बारह बजे बादशाह खान आम सभा मे बोल रहे थे। तूफानी दौरे से उनका शरीर थका हुआ था और इसलिये एक कुर्सी पर वे बैठे हुए थे। श्रोतागण बैठे हुए थे और तन्मयता से भाषण सुन रहे थे। कुछ देर बाद जमाल जाति के कबाइलियो का एक सशस्त्र दल वहाँ आ पहुँचा। जो सामने दिखा उसको वे कुल्हाडियो से घायल करने लगे। जगलियो के समान ही जमाली कबीले के लोगो ने सभा पर हमला बोला था। सभा मे सर्वश्री चोइथराम गिडवानी, मोहम्मद अमीन खोसो एव अन्य काग्रेसी कार्यकर्त्ता भाषण सुनने वालो मे थे। सभी घायल हो गये थे और सभा का मैदान खून से भर गया था। पर हमलावरो ने बादशाह खान पर एक भी हाथ नही उठाया। बादशाह खान शात चित्त से दृढ होकर अपने स्थान पर बैठे रहे। उनकी भव्यता से सभी चकित थे और एक भी हमलावर की हिम्मत नही हुई कि वह उन पर हाथ उठाये।

जमाली सरदार बादशाह खान के आजादी के आन्दोलन से चिढे हुए थे। अपनी ताकत को बताने के लिये उन्होने इस सभा में हमला बोला था। अगर इस हमले मे बादशाह खान को कुछ चोट आती तो संभव था कि पख्तूनो व जमाली कबीले मे खूनी लड़ाई छिड़ जाती।

यह तो एक घटना थी। बादशाह खान के स्वभाव व अहिंसा की शक्ति का परिचय इसके बाद की चर्चा में मिलेगा।

बादशाह खान की हमसे अपेक्षा | 10

—श्री प्रेमचन्द जैन

हमारे देश की आजादी-आन्दोलन के महान् सेनानी सीमान्त गांधी बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खां गांधी-जन्म शताब्दी समारोह के निमित्त से इस समय हमारे देश मे है और विभिन्न राज्यो की यात्रा कर रहे है। वे अपनी बात सरल और बोलचाल की भाषा में कहते है जो लोगो को झट हृदयगम हो जाती है। विनोवा जी का कहना है कि इस सक्रमणकाल मे बादशाह खान का भारत मे आगमन एक प्रकार से गांधीजी का ही अवतरण महसूस होता है। अब तक बादशाह खान अनेक भाषण दे चुके है, प्रेस सम्मेलनो को सम्बोधित कर चुके है और इस देश की अनेक समस्याओ के बारे मे बहुत कुछ कह चुके है। उनमे देशवासियो से उनकी क्या अपेक्षाएं है, उसकी झलक देखने को मिलती है। उनकी भारत-यात्रा को समझने मे हमे काफी सहायता मिलेगी यदि हम अब तक के उनके कुछ वक्तव्यो और भाषणो के महत्वपूर्ण अंशो पर दृष्टिपात कर ले।

नेताओ और राजनैतिक दलो से

इस समय देश का शासन ऐसे लोगो के हाथो में होना चाहिए, जो स्वार्थ के बजाय राष्ट्र-हित की भावना रखते हो। ऐसे लोग चन्द सालो मे देश का कायापलट कर सकते है, जबकि गांधीजी के सिद्धान्तो पर अमल किये बिना केवल उनसे सहानुभूति प्रकट करने वाले सौ साल मे भी वही के वही रहेगे।

भारतीय नेताओं ने आजादी के बाद गाँधीजी के आदर्शो और सिद्धान्तो को भुला दिया है। सरकारी फिजूल खर्ची और शराबखोरी आज भी बेरोकटोक जारी है जिसको गाँधीजी तहेदिल से नफरत करते थे।

मतदाताओं से

मै पूछता हूँ कि यह मुल्क तुम्हारा है। यह हुकूमत तुम्हारी है। फिर भी तुम्हारी हालत ऐसी क्यों है? समझ लो कि यह तमाम कसूर और गुनाह तुम्हारा है। जम्हूरियत (लोकतन्त्र) मे लोग अपनी हुकूमत कायम करते है। मै पूछता हूँ, तुमने अपने यहाँ ऐसी हुकूमत क्यो कायम की है? असल में यह हुकूमत तो गरीबों की है, होनी चाहिए, क्योकि वोट गरीबो के ज्यादा है, लेकिन कुछ खुदगरज लोगो ने धर्म, जाति और जबान के नाम पर गरीबों के बीच फूट डाल रखी है। जो भी झगडे होते है, उनमें मरता तो गरीब ही है। खुदा हमे जो देश देता है, वह मुट्ठी भर लोगों का नही होता, यहाँ रहने वाले हर आदमी का होता है। न देश और न हुकूमत ही कुछ गिने-चुने लोगो के लिए है। देश तो सबके लिए है। इसलिए देश के सभी गरीबों को चाहिए कि वे साथ मिलकर बैठें और अपने आपसी झगड़ो को छोड़ दे।

मै कहता हूँ कि आप आदिवासी, हरिजन, बौद्ध, मुसलमान, ईसाई, हिन्दू सभी मिलकर एक हो जाइए। जो वोट माँगने आते है, उन्हे वोट के लिए वोट मत दीजिए। न जाति के नाम पर और न पार्टी के नाम पर। आप उनसे पूछिये कि वे आपकी क्या सेवा करेगे? आप उनकी चिकनी-चुपड़ी बातो मे न आइए। ईमानदार, दयानतदार और बेगरज लोगो को ही अपने वोट दीजिए। देश की आम जनता की सेवा के लिए गरीबो की हालत को सुधारने वाले लोगो को ही चुनिए। ऐसे लोगो का चुनाव ही आपको बचा सकता है।

विद्यार्थियों से

मुल्क की तरक्की मे तालीम पाने वाले छात्र बड़ी मदद पहुँचा सकते हैं। आजकल मै देखता हूँ, कुछ लोग कहते है कि विद्यार्थी राजनीति मे भाग न ले। मैंने इस मसले पर काफी गौर किया है,

बहुत सोचा है। मैं इस मत का हूँ कि विद्यार्थी राजनीति में भाग ले। जब हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई चल रही थी, तब की बात सोचिए। क्या उन दिनो हमने नही कहा था कि विद्यार्थी पढाई छोड़ दे और राजनीति मे भाग ले? ऐसी हालत मे मेरी समझ में नहीं आता कि आज लोग क्यो यह कहते हैं कि विद्यार्थी राजनीति में भाग न ले—यह बात समझ मे नही आती। एक बात है, आपका यह मुल्क आजाद है। २२ वर्ष हो चुके हैं, मगर देहात मे गरीबी अब भी है और ज्यादा है। उसे दूर करना है। इसलिए मैं कहता हूँ कि आप देश की सेवा मे लग जाओ। ज्यादा वक्त नही दे सकते तो छुट्टियों मे देहात मे जाओ, गरीब जनता को समझाओ, उसको जगाओ, उसे वोट की कीमत बताओ और देश को झगडो से बचाओ।

अगर युवा पीढी की शक्ति का सही ढग से इस्तेमाल हो, तो गांधीजी के सपने का भारत बनाया जा सकता है और आज जो दुःख तथा बुराइयाँ हैं, उन्हे दूर किया जा सकता है।

महिलाओं से

अपने मुल्क में मैं जब-जब मर्द और औरतो से, भाई और बहनो से बात करता हूँ, तो हमेशा यही कहता हूँ कि मुझे अगर अब किसी से ज्यादा उम्मीद है, सेवा करने की, कौम की खिदमत करने की, तो वह बहनों से, औरतो से है, क्योंकि उनमे अभी तक खुदगर्जी नहीं आयी है। पुरुषो के मुकाबले उनमें कम खुदगर्जी है। हिन्दुस्तान मे ही नहीं, हमारे मुल्क मे भी औरतो की सेवा बेगरज होती है।

आप बहनो से मुझे उम्मीद है कि आप लोग हिन्दुओं मे, मुसलमानों मे, देहातों मे, कारखानों में जाएँ, उनको सच्चा धर्म क्या है, बताएँ, इन्सानियत क्या है, बताएँ। आप बहनों को मुसलमान औरतों के पास भी जाना चाहिए। आपको तो ज्यादा काम मुसलमानों मे करना चाहिए। और जहाँ भी झगडा होता है, वहा जाना चाहिए। लोगों को समझाना चाहिए।

मुसलमानों और हिन्दुओं से

भारतीय मुसलमानो को साम्प्रदायिक सौहार्द के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। भारत हिन्दू और मुसलमान, दोनों का देश है। कुछ लोग अपने उद्देश्यो की सिद्धि के लिए धर्म के नाम पर गरीब और सीधे-सादे लोगों का शोषण कर रहे है। उनका एक मात्र उद्देश्य गरीब जनता का ध्यान उनकी समस्याओं से हटाना है। साम्प्रदायिक दंगो के समय सबसे अधिक क्षति गरीब हिन्दुओं और मुसलमानो को पहुँची है। सच पूछिए तो ये झगड़े हिन्दू-मुसलमानो के नही, अमीर और गरीब के झगड़े है।

खुदा का कानून यह है कि "तुम काम करो, मैं तुम्हारी मदद करूँगा।" खुदा का कानून यह नही है कि तुम काम न करो, हाथ पर हाथ धरे बैठे रहो और वह तुम्हारी मदद करे। यह कैसे हो सकता है कि हम न तो हल चलाये, न दाना ज़मीन में डाले, न पानी दे और उम्मीद रखे कि गल्ला पैदा हो जायेगा।

इस्लाम दुनिया में अमन के लिए आया था। आप पढ़ कही भी, जहाँ-जहाँ कुरान में आया है उसमे शर्त है, ईमान। बगैर अमन के ईमान नही है।

मैने दो राष्ट्र के सिद्धान्त में कभी विश्वास नही किया और न कभी करूँगा। किसी राष्ट्र का आधार धर्म कैसे हो सकता है? मै अफगानिस्तान में तथा बाहर भी सबसे यही कहता रहा हूँ कि इस्लाम आदमी के बाद आया है। बहुत से झगड़े धर्म को राष्ट्र के साथ मिला देने से पैदा होते है।

मस्जिदो और मन्दिरो में आकर प्रार्थना करने वाले भूल गए हैं कि धर्म क्या है? क्या लोगो की हत्या करना, उनके घर जला देना और कन्याओ का अपहरण करना धर्म है? धर्म का अर्थ है प्रेम, अहिंसा और मानव-सेवा।

हमे गंभीरता से विचार करना चाहिए कि हिन्दुओं और मुसलमानों में, ब्राह्मणो और गैर-ब्राह्मणों में तथा शिया और सुन्नियो मे क्यो झगडा होता रहता है? यह फसाद वे लोग पैदा करते है जो नही चाहते कि गरीब लोग अपनी गरीबी के कारणो के बारे मे कभी सोचे।

गाँधीजी के बताये मार्ग पर चलें

मेरी गरज यह है कि गाँधीजी ने अपनी मौत तक जो तालीम आपको दी थी और जिसे आपने इतना जल्द भुला दिया है, मैं आपको उसकी याद दिलाऊँ। मुझे इसका सख्त अफसोस है कि हम लोग गाँधीजी को बहुत जल्द भूल गये। मुल्क की आजादी गाँधीजी को बदोलत मिली, उन्ही की बदोलत यह हुकूमत मिली। उनके हम पर बहुत एहसानात है। हम उन्ही को इतनी जल्दी भूल गये। इसमें हमने गाँधीजी का कोई नुकसान नही किया, अपना ही नुकसान किया है। अगर आप गौर करेगे, तो देखेगे कि हिन्दुस्तान की शान वह नही है जो गाँधीजी के जमाने मे, उनकी मौजूदगी मे थी।

महात्मा गाँधी की मूर्तियो की स्थापना करने से कोई लाभ नही है, क्योकि हिन्दुस्तान ने गाँधीजी के सिद्धान्तो को पूरी तरह भुला दिया है।

गाँधी केवल एक हुआ है और अन्य कोई उसकी बराबरी नही कर सकता। मैं तो केवल एक सेवक हूँ, मुझे सीमान्त गाँधी नही कहा जाय।

मुझे अफसोस के साथ कहना पडता है कि हिन्दुस्तान मे लोग गाँधीजी का नाम तो लेते हैं, पर मै तो तमाम हिन्दुस्तान मे फिरता हूँ, यह बात मेरी समझ मे नही आती कि आप लोग क्यो गाँधीजी का नाम लेते है? आप लोग अगर गाँधीजी का रास्ता लेते, तो हिन्दुस्तान मे आज जो हिंसा, नफरत दिखाई दे रही है, वह न होती। सिर्फ नाम लेने से कुछ काम बनता नही। गाँधीजी के सिद्धान्तो के प्रति केवल जबानी सहानुभूति नही चाहिए, बल्कि उन पर अमल करने वालो की जरूरत है।

अगर हिन्दुस्तान के लोग गाँधीवाद का पालन नही करेगे तो कोई और वाद उसका स्थान ले लेगा। लेकिन इस मुल्क का उद्धार गाँधीजी के बताये हुए मार्ग पर चलने से ही होगा।

मुझे अपने साथ पायेगे

तपस्वी बादशाह खान

11

—श्री राजेन्द्र माथुर

साढ़े तीन महीने से खान अब्दुल गफ्फार खाँ भारत में ऐसे घूम रहे हैं, जैसे हरम में हठयोगी घूम रहा हो। वे जहां जाते हैं, वहां बांदियों और नौकरो की चुहल रुक जाती है। भांड ठिठक कर खड़े हो जाते हैं। गुजरते फकीर को सब यंत्रवत् सिजदा करते है, और पीठ फिरते ही अठखेलियां शुरू हो जाती है। ढोंगभरा मौन और फिर दबी हुई मुस्काने।

फकीर को क्या पता था कि यहां हरम है। उसे तो एक तपोवन की स्मृतिया खींच लाई थी, जो पहले यहा था। तपस्या और कुर्बानी से भरा एक देश, जिसे गफ्फारखाँ ने अपनी हड्डियां अर्पित कर दी थी। फकीर यहा देखने आया था कि उन अस्थियों का क्या हुआ, और गाँधी की राख का क्या हुआ! लेकिन जब वह मृगछाला को छूने के लिए बढता है, तो उसके हाथ में रेशमी प॰ आ जाते है, और उनके पीछे के दृश्यों से वह अचकचा जाता है।

अब्दुल गफ्फारखाँ ने भारत आना क्यो चाहा? शायद रूह की हवस होती है कि अपने छोडे हुए शरीर में वह फिर से प्रवेश करे, और देखे कि अब वह कैसा है। गफ्फारखाँ की रूह भारत मे रमी हुई थी, लेकिन बँटवारे ने उन्हे भारतविहीन कर दिया। तब से आज तक बादशाह खान उस भटकी हुई रूह वाले मसीहा हैं, जो अपने लिए उचित शरीर खोज रहो है। भारतविहीन होने के बाद उन्होने चाहा कि वे पख्तून कौम के साथ तदाकार हो जाएँ, लेकिन उन्हे इसकी भी इजाजत न मिली।

हिन्दुस्तान की आजादी को पठानो ने अपनी आजादी माना, और उनके लिए कुर्बानी दी। लेकिन जब १५ अगस्त नजदीक आया तो जल्दबाजी मे हमने पठानों को बेचकर अपनी आजादी खरीद ली। आजादी के लिए लड़ने वाले मुसलमान उन मुसलमानों के

गुमनाम बन गए, जिन्होने आजादी की राह मे सौ-सौ रोड़े अटकाए थे। जो मुसलमान बंटे हुए थे, उन्हे बंटवारे ने जबरदस्ती एक कर दिया और तब मुसलमानो ने सरहद पर इस तरह जुल्म किए, जैसे कांग्रेस की भारत व्यापी करतूतो का बदला वे अकेले पठानों से ले रहे हो। हिन्दुस्तान को वे पीट नही सकते, इसलिए मुआवजे के तौर पर उन्होंने पठानो को पीटना शुरू कर दिया। खान अब्दुल गफ्फार खां को पन्द्रह साल तक अपना जेलो मे रखकर पाकिस्तान ने सचमुच १६२० से १६४७ तक के इतिहास को जेल मे रखा, और उसका अन्त कर देना चाहा। गफ्फारखां दरअसल पाकिस्तान की अपराध भावना के प्रतीक बन गए। अंग्रेजो की थाली चाटने वाले नेताओं की महफिल मे एक सच्चे लड़ाकू मुसलमान की उपस्थिति भी असहनीय हो गई।

वर्ना गफ्फारखां ने ऐसा कौन-सा बड़ा विद्रोह किया था? वे पठानो के लिए सिर्फ एक अलग सूबा चाहते थे, जैसे भारत में महाराष्ट्र और गुजरात और तमिलनाडु हैं। सिर्फ राज्य पुनर्गठन की बात होती, तो पख्तूनिस्तान कब का बन जाता। लेकिन वह नही बना, क्योंकि पठानो की राष्ट्रीय चेतना में और पंजाबी मुसलमानों के कठमुल्लेपन मे एक बुनियादी शत्रुता थी।

पठानो की राजनीति हिन्दू-केन्द्रित नहीं थी। वे अपने आपको भारत और अफगानिस्तान की सरहद पर बना हुआ उपराष्ट्र मानते थे। जब भारत मे राष्ट्रीय जागरण शुरू हुआ तो पठानो मे स्वायत्त रूप से उपराष्ट्रीय जागरण शुरू हो गया, और हिन्दू-मुसलमान का भेद भूलकर दोनों ने हाथ मिला लिया।

लेकिन शेष भारत के मुसलमानों की राजनीति हिन्दू-केन्द्रित थी। उन्हें मालूम था कि हिन्दू-बहुमत वाले भारत को कभी न कभी आजादी तो मिलेगी ही, लेकिन उन्हें भय था कि उस आजाद हिन्दुस्तान में हमारा क्या होगा। इसलिए कांग्रेस से कभी मिलकर वे अंग्रेजों से नहीं लड़े, बल्कि कांग्रेस के प्रयत्नों से जो सुधार भारत को किश्तों में मिले, उनमें हिस्सा बटाते रहे। मोहम्मद अली जिन्ना भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के एकनिष्ठ सेनानी थे। उन्होंने एक ऐसे देश पर स्वामित्व का दावा जता रखा था, जिसका अभी जन्म ही नहीं हुआ था।

इस प्रकार पठानों की मेहनत से जो पैदा हुआ, उसे लियाकत अली और अय्यूब खा ने भोगा, और पठान ज्यो के त्यों सताये हुए रहे।

लेकिन जिस हिन्दुस्तान में पठान लोग रहना चाहते थे, उनका क्या हाल है ? अगर पख्तूनिस्तान आज भारत का सूबा होता, तो क्या गफ्फार खां बहुत सुखी होते, और हमारा जयजयकार करते ? इस तपोवन को हरम बनते देख क्या उन्हे और भी दुख नही होता ? १९४५ मे जब चुनाव हुए तब सरहदी सूबे ने बंटवारे के बजाय अखण्ड भारत पसन्द किया। लेकिन आज १९७० में मत संग्रह किया जाए, तो क्या पठान लोग भारत या पाकिस्तान के बीच किसी को पसन्द करेगे ? नही, शायद वे दोनो को ही ठुकराना चाहेगे।

भारत क्योकि बदल चुका है, इसलिए भारत और गफ्फार खा के बीच अब वह रिश्ता ही नही है, जो किसी जमाने में था। उन्हे १४ नवम्बर को नेहरू पुरस्कार देकर दरअसल हमने अपने अतीत की अर्द्ध शताब्दी का तर्पण कर दिया, और उसे नमस्कार कर लिया। गाँधी वापस नहीं आ सकते नेहरू नही आ सकते लेकिन गफ्फार खां आ सकते है। वे शरीरत जिन्दा है, लेकिन दरअसल वे हमारे पितर है। जब हमारे लोग गफ्फार खां से मिलने जाते है, तो लगता है कि वे किसी 'सेआन्स' में किसी रूहानी बैठक में जा रहे है, जिसमें अतोत की रूहे माध्यम के जरिये-हाड़ मास के लोगों से मिलने आती है।

खान अब्दुल गफ्फार खां की भारत-यात्रा एक राष्ट्र-व्यापी सेआन्स है। लेकिन उसका क्या लाभ ? हिन्दू कौम का चरित्र ऐसा है कि हमारे दादा या नाना की रूह हम से मिले, और हमे कुछ आज्ञाएं दे, कुछ समाधान दे, तो हम उसका अक्षरशः पालन करेंगे, और अध्यात्म के गुलाम हो जाए गे। लेकिन राष्ट्र के नाते तो हमारा न कोई दादा है न परदादा। न हममें राष्ट्रीय स्मृतियाँ है, न राष्ट्रीय मस्तिष्क। इसलिए गाँधी तक हमारे लिए अप्रासंगिक हैं। सारा इतिहास एक बुलबुला है, जो लकीरे बनाकर मिट जाता है। अत. गफ्फार खा की जो यात्रा अन्य किसी भी देश के लिए पुनर्परिचय का महापर्व बन सकती थी, वह हमारे लिए कोई माने

नही रखती । हरम की बाँदियो और नौकरो को पता नही कि इसी जमीन पर कभी धूनी रमाई जाती थी । तख्त पर बैठने वाली नूरजहाँ को पता नही कि उसके सिहासन के नीचे एक हवनकुण्ड था। इत्र की खुशबू लेने वालो को यज्ञ के धुवे की कोई स्मृति नही । हरम मे घूमते हठयोगी के मन मे असगति का जो विपण्ण बोध है, वह भारत के किसी नागरिक के मन मे नही । इसीलिए सिजदा करने वाले ढोगियो को वह दुतकारता है । हरम को बदल पाने की कोई आशा उसके मन मे नही । १९४७ के पहले की हमजोली रूहो को सम्बोधित करते हुए वह बोलता है । उसके सारे भापण मानो स्वगत भापण है । (सुनो ओ गाँधी सुनो !) विष्णु पता नही नारद को पृथ्वी का हाल पूछने भेजते थे या नही, लेकिन गाँधी ने जरूर बादशाह खान को इस कृतघ्न भूमि का हाल पूछने भेजा है । कृतघ्न, क्योकि कृत-कर्म का शीघ्रातिशीघ्र नाश करने में भारत का कोई सानी नही ।

दिल के बादशाह

सकडे दिमाग से लोग पूछते है कि खान अब्दुल गफ्फार खा थैली के पैसो का क्या करेगे ? क्या वे पैसा पाकिस्तान ले जाएँगे ? क्या वे पठानो के आन्दोलनो मे उसे खर्च करेगे ? पता नही ये प्रश्न उठते ही कैसे है । लेकिन वे उठते है, क्योकि २२ सालो से हमारा दिमाग टुच्चा हो गया है । माचिस खरीदते समय जब हम एक-डेढ पैसे टैक्स के देते हैं, घासलेट खरीदने मे जब इकन्नी हमारी जेब से निकल जाती है, सुरेश सेठ के नगर निगम को जब हम सालाना एक करोड की थैली भेट करते है, तब हम नही पूछते कि यह पैसा किस ठेकेदार की, किस रिश्वतखोर की, किस फिजूलखर्च की जेब मे जाएगा । लेकिन हमारे ही अतीत का एक ईमानदार टुकडा हमारे सामने आता है, तो हम पूछते हैं कि तुम इस पैसे का क्या करोगे ? हमारे अतीत से बेईमान वर्तमान सवाल पूछता है कि तुम मेरे चन्दे का क्या करोगे ? हमारा काम करवाने वाले गिरहट नेता को हम चन्दा देंगे, लेकिन सतयुग से उतरकर हरिश्चन्द्र भी आ जाए तो हम पूछेंगे कि तुम क्या अपना प्रिवीपर्स इकट्ठा करने आये हो ?

१९३१ के करांची कांग्रेस के अधिवेशन मे अब्दुल गफ्फार खाँ और जवाहरलाल नेहरू की जान पहचान हुई । दिल्ली में

डॉक्टर मुख्तयार अहमद अंसारी के मकान में कांग्रेस कार्यसमिति का जलसा हो रहा था, और गफ्फारखॉ उसके सदस्य थे। जवाहरलाल ने बादशाह खान को अलग से ले जाकर कहा कि हम पेशावर की कांग्रेस कमेटी को खर्च के खिए पाच सौ रुपये माहवार दिया करते थे। अब हम आप लोगों के जिरगे दफ्तर को एक हजार रुपया मासिक देगे।

कराची अधिवेशन में खुदाई खिदमतगारो ने काग्रेस के साथ पहली बार गठबधन किया था, और वे सरहदी सूबे मे काग्रेस की उपशाखा से बन गए थे। स्वाभाविक था कि नेहरू इस सूबे के नेता को दफ्तर चलाने के लिए आर्थिक मदद का प्रस्ताव रखे।

लेकिन गफ्फारखॉं ने रुपया लेने से इन्कार कर दिया। उन्होने कहा (ये शब्द उनकी आत्माकथा के है), "पंडितजी, हमें रुपयों की जरूरत नही है। फिर हम लोग भला रुपये ले ही क्यो ? क्या यह मुल्क आप ही लोगो का है, हमारा नही ? यह आपका और हमारे साझे का देश है ? इसलिए आप अपना बोझ उठाइए और हम अपना बोझ उठाए गे।"

जवाहरलालजी (बादशाह खान लिखते है) इस बात से नाराज हो गये। उन्होने डॉक्टर अंसारी से शिकायत की कि बाशा खान बहुत घमण्डी है। डॉ० अ सारी ने गफ्फार खॉ से (तब वे ४० वर्ष के थे) पूछा कि तुमने जवाहरलालजी को किस बात पर नाराज कर दिया। गफ्फार खॉ ने कहा कि मै तो खुदाई खिदमतगार हूँ, और खुदाई खिदमतगारी और घमण्ड दोनो खिलाफ चीजे है।

इस आरम्भिक गलतफहमी के बाद नेहरू और गफ्फार खॉ सगे भाई से बन गए। लेकिन गफ्फार खॉ ने कभी पैसे नही लिये। काग्रेस कार्य समिति के सारे सदस्य रेल मे आने जाने का किराया संगठन से लिया करते थे, लेकिन नेहरू के आग्रह के बावजूद गफ्फार खॉ ने कभी किराया नही लिया।

और जिस आदमी ने १९३१ में आजादी की संयुक्त लड़ाई के लिए मदद नही ली, जिस आदमी को अंग्रेज बारबार अपनी ओर मिलाना चाहते रहे, उससे हम पूछते है कि तुम हमारे पैसों का क्या करोगे ? गफ्फारखा ने ठीक ही कहा कि तुम्हे इस बात की क्यों फिकर है ?

लेकिन गफ्फार खाँ श्रद्धानिधि के लिए इन्दौर ने जिस ढंग से १ लाख ३१ हजार का चन्दा इकट्ठा किया, वह गाँधी के देश के लिए शर्मनाक था। यदि गफ्फार खाँ को उन तरीको की जानकारी हो, तो शायद वे थैली लौटाना पसन्द करे।

शासकीय तत्वाववान मे चन्दा इकट्ठा करने का आजकल एक स्टेन्डर्ड तरीका वन गया है। दैनिक जीवन मे जो रिश्वत लेने की प्रणाली है, वही ऐसे मौको पर ज्यादा खुले रूप मे निधि-सग्रह की प्रणाली वन जाती है। सरकारी अफसर सेठो और व्यापारियो के यहाँ टेलीफोन खटखटाते है। सेल्स टैक्स और इनकम टैक्स और खाद्य विभाग और कलेक्टरेट के चगुल मे आज कौन व्यापारी, कौन दुकानदार, कौन कारखानेदार नही है? शासन जो भी जजिया लगाए, वह आनन-फानन वसूल हो जाता है।

ऐसे धन को श्रद्धानिधि नही कहते। क्या वह जमाना अब सदा के लिए गया, जब कार्यकर्ताओ की टोलिया दो-दो चार-चार आने के लिए गली-मोहल्लो मे घूमती थी? इन्दौर के लाखो लोग, जो गफ्फार खाँ के नाम पर पैसे देने के लिए आतुर होगे, अपने घरो मे ही बैठे रहे। कोई उनसे चन्दा मागने नही गया, लेकिन फिर भी थैली बडी भारी इकट्ठी हो गई। जनता के पास जाने का अब धैर्य किसे है? नेता को चुनाव लडने होते है, तो वह सेठ से पैसे ले आता है, और सरकार को गाँधी शताब्दी मनानी होती है, तो वह खजाना खोल देती है। राजनीति वालो ने पैसे के ओवरहेड टैंक अपनी कोठियो के ऊपर बना दिये है। नल खोला, और पैसा हाजिर। अब आप उनसे कहे कि जरा कुएँ मे बाल्टी डाल कर भी पानी खीचिये तो वे कन्नी काट जाएँगे।

मजबूरी के १३१ हजार के बजाय उत्साह के १०१ रुपये भी इन्दौर गफ्फार खाँ को भेट करता, तो यह सिद्ध होता कि हमने इस आदमी से सचमुच कुछ ईमानदारी सीखी है। चन्दे के सरकारी तरीके अपनाकर हमने गफ्फार खाँ को तो कोई फायदा नही पहुँचाया (उन्हे हमारा कर्ज ही क्या), लेकिन अपने आपको नुकसान जरूर पहुँचाया है। जो काम दरअसल जन-आन्दोलन द्वारा होने चाहिए, वे भी अगर सरकार के मार्फत होने लगे, तो इसका मतलब यह हुआ कि जनता ने अपनी हस्ती का, गरिमा का, स्वायत्तता का

भी राष्ट्रीयकरण कर दिया है। स्वराज मे वह श्रीहीन और गुलाम बन गई है।

अब्दुल गफ्फार खाँ की भारत यात्रा सचमुच एक टीसभरा प्रसंग है। टीसभरा क्योंकि इस यात्रा का असफल होना अनिवार्य है।

पहला कारण तो यह है कि भारत की हालत बहुत जटिल है, और गफ्फार खाँ के नुस्खे बड़े सरल है। गाँधी के रास्ते पर चलो, वे कहते हैं। लेकिन सचमुच कोई नही जानता कि आज १६७० में गाँधी का रास्ता क्या है ? फिर अगर किसी को मालूम भी पड जाए, और डॉक्टरी नुस्खे की तरह वह उसे कागज पर लिख कर दे दे, तो इसका कोई मतलब नही होगा। गाँधी जी के सारे नुस्खे कागज पर ऐसे मालूम पड़ते है, मानो पागलखाने में रहने वाले किसी भूतपूर्व डाक्टर ने उन्हे लिखा है। लेकिन आज वे प्रतिष्ठित है, क्योकि वे आजमाए जा चुके है।

कोई नया गाँधी भारत मे पैदा हो तो वह नुस्खे लिख कर महान नही कहलाएगा। उसे नुस्खे सिद्ध और प्रतिष्ठित करने होगे। फिर गाधी की चिकित्सा-प्रणाली ऐसी थी कि उसमें दवा का महत्व कम और गाँधी का महत्व ज्यादा था। दवा ऐसी कि दवा देने वाला न हो, तो काम ही न करे, गाधीवाद ऐसा कि गाधी के बिना सब शून्य। अत. गाधी के रास्ते पर चलने वाले को खोजना होगा कि वह दवा देने वाला कैसा था, जिसकी उपस्थिति मात्र से दवा कारगार हो जाती थी। क्या इस उपस्थिति के फैक्टर' के विना भी हम दवा का ईजाद कर सकते है ?

जटिलताए बहुतेरी है। अच्छे लोगो को चुन कर भेजो गफ्फार खाँ कहते हैं। क्या ५२ करोड के देश में चार पाच सौ ऐसे आदमी नही निकल सकते, जो काबिल और ईमानदार हो ? बात सरल सी है, लेकिन हम सब जानते है कि अच्छे आदमी को चुन कर भेजना कितना कठिन है। प्रजातत्र एक समुद्र मथन है, जिसके अपने नियम है। ५२ करोड़ का समुद्र कैसा है, चुनाव की मथानी कैसी है, देवासुरो के ईर्ष्या-द्वेष का स्तर कैसा है, इस बात पर पूरा मंथन निर्भर है। ऐसा नही है कि मथो और अमृत ऊपर आ जाएगा।

प्रेम और मोहब्बत से रहो, गफ्फार खाँ कहते है। लेकिन व्यर्थ दुश्मनी मे क्या किसी को मजा आता है ? हिन्दू और मुसलमान यदि सारे प्रयत्नो के बावजूद विलग है, तो निश्चय ही कोई गहरी

चीज है, जो दोनो कौमो को बांटती है, और उन्हे प्राय शत्रुतापूर्ण बनाती है। इस चीज को मान्यता देना उनकी शत्रुता को कम करने की ओर पहला कदम होगा।

भारत की इज्जत दुनिया मे कम हो गई है, गफ्फार खाँ कहते हैं। सच है। १६२० से १६४७ तक, या नेहरू के काल तक, भारत की इज्जत इसलिए थी कि भारत एक देश का नाम नही, एक अद्वितीय प्रयोग का नाम था। बाहर के लोग सचमुच सोचते थे कि शायद भारत से नई रोशनी मिले, नया रास्ता मिले। वह प्रयोग अब नहीं है। अब भले ही हम अन्न मे आत्मनिर्भर हो जाएं, भले ही हमारी गरीबी मिट जाए, लेकिन प्रयोग की इज्जत हमे नही मिलेगी। केवल अपनी शक्ति के अनुपात में सम्मान हमे मिलेगा, जैसा कि दुनिया का कायदा है।

सचमुच अब्दुल गफ्फार खाँ एक भटकी हुई रूह वाले नेता हैं। भारत ऐसा शरीर है, जिसने अपनी रूह खो दी है। गफार खाँ ऐसी रूह हैं, जिसने शरीर खो दिया है। दोनो खोये-से है।

बार-बार वे कहते हैं कि मेरा हिन्दुस्तान से क्या लेना-देना है? मैं अफगानिस्तान चला जाऊंगा। मेरी बात मान कर आप मेरा कौन सा फायदा करेंगे, और न मान कर कौन-सा नुकसान ?

गफ्फार खाँ ऐसा आइना था, जिसमें पाकिस्तानी नेता अपनी शर्म को देख सकते थे। इस आइने से वे कभी प्यार नहीं कर सकते थे। पाकिस्तान मूलतः मुफ्त का माल है। कांग्रेस ने खून दिया, और मुसललानो को अंग्रेजो की कृपा से मुल्क मिल गया। मुसलमानों ने असहयोग से असहयोग किया, अर्थात् कुछ नहीं किया। अकर्म की शर्म पाकिस्तान की घुट्टी मे मिली हुई है, और भारत के मुकाबले वह एक किस्म का हीन-भाव पैदा करती है। गफ्फार खाँ क्योंकि निराकार भारत थे, इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी उपस्थिति ही पाकिस्तान के लिए चुनौती बन गई और वे पन्द्रह साल जेल में रखे गए।

गफ्फार खाँ क्योकि इतने दिन जेल मे रहे, इसलिए पाकिस्तान की आबहवा मे जीना सीखने का मौका ही उन्हे नही मिला। अपने पाकिस्तानीकरण की छूट भी उन्हे नही दी गई। जब उन्होने पख्तून सूबा मांगा तो, समझा गया कि वे एक छोटा हिन्दुस्तान माग रहे हैं और गद्दारी कर रहे है। हाँ, यह जरूर है कि कई बार उन्हे मुस्लिम लीग मे शामिल होने का निमत्रण मिला और कई बार केबिनेट मे वजीर बनने का। लेकिन गफ्फार खाँ लगातार नामंजूर करते रहे और इससे हुकूमत का शक और बढता रहा।

पता नही गफ्फार खां की अनुपस्थिति में पठान-आंदोलन का क्या हाल है? वे कहते है कि पख्तून सूबा शीघ्र बनने वाला है। लेकिन वे अफगानिस्तान मे है, मानो पठानो के बीच लौट कर खुदाई खिदमतगार संगठन को पुनर्जीवित नही कर सकते। पठानों की जागृति का आदोलन भी स्पष्ट ही १९४७ के बाद सुस्त पड गया है। नये पाकिस्तान के निर्माण में खुदाई खिदमतगार कोई अग्रणी रोल अदा करेंगे, ऐसा प्रतीत नही होता। क्या गफ्फार खाँ अपनी ही कौम मे थोडे अप्रासगिक नही हो गए है? अगर गधे के धड़ के नीचे हाथी के पैर लगा दिए जाएँ, तो हाथी की रूह कहाँ प्रवेश करना चाहे? क्या वह हाथी के सड़े हुए शरीर में रहे, या गधे मे रहने लग जाय?

अपने तई बेमतलब हो जाने से बड़ी कोई ट्रेजेडी नही हो सकती। भारत और गफ्फार खा दोनो की यही ट्रेजेडी है।

●

महान् अहिंसक

12

—श्री सत्यनारायण पारीक

स्वतंत्र भारत मे खान अब्दुल गफ्फार खाँ का प्रथम आगमन गाधी शताब्दी के वर्ष मे एक ऐसी ऐतिहासिक घटना है जिसे हमें राष्ट्रीय आन्दोलन के समूचे परिप्रेक्ष्य मे देखना चाहिए। परिस्थितियो ने भारत का विभाजन अवश्य कर दिया, पर खुदाई खिदमतगार के रूप के बादशाह खान ने कभी इसे सास्कृतिक आधार पर स्वीकार नही किया। बापू की भी यही विचारधारा थी। कांग्रेस मे पाकिस्तान का विरोध करने वाली दो ही बडी हस्तिया थी—बापू और सरहदी गाधी। गाधीजी ने जहां इसे एक 'राजनैतिक यथार्थ" की संज्ञा दी, वहां बादशाह खान ने इसे उन सब सिद्धान्तों का विरोधी बताया जिनके लिये काग्रेस खडी रही और लड़ी।

खूंखार पठानों को शांति-पाठ पढ़ाया

मानने वाले हैं, चाहे उनके लिये कितनी ही यातनायें क्यों न झेलनी पड़ें। यातनाओ के साथ-साथ वादशाह खान अब तक इस एक ही नीति को अपनाये हुए है कि वे अपने सिद्धान्तों का किसी से सौदा नही करेगे। काग्रेस द्वारा देश-विभाजन के प्लान को स्वीकार कर लेने के वाद वादशाह खान के मन पर जो गहरी चोट लगी उससे वे किंकर्तव्यविमूढ हो एक सकते के आलम में आ गये। गांधीजी के हस्तक्षेप और उनके नीतिसम्मत कार्य से वादशाह खान का सहमत होना असम्भव था। वे इतना ही कह पाये कि उन्हें भेडियों के सामने फेंक दिया गया। वाद की घटनायें और जोर-जुल्म वादशाह खान के उक्त कथन को सिद्ध करने वाले ही साबित हुए।

सही निर्णय लेने में कोई व्यामोह नहीं

वादशाह खान शुरू से ही स्पष्टवादिता और अपने सिद्धान्तों, ईमान की दृढता व आत्मविश्वास के धनी रहे हैं और उन्हे सही निर्णय लेने मे न किसी व्यक्ति, का न किसी संस्था का व्यामोह रहा। द्वितीय महायुद्ध के समय बड़े से बडे काग्रेसी तो हिंसा और अहिंसा के सिद्धान्त और विश्वास की ही सैद्धातिक लड़ाई कि "इस वक्त कौन-सी नीति सही है" में उलझे हुए थे, पर वादशाह खान अपने आप मे स्पष्ट थे। वे और उनकी खुदाई खिदमतगार पार्टी किसी भी हालत में अहिंसा के अपने सिद्धान्त को युद्ध की विभीषिका के सामने भी छोड़ने को तैयार नही थे और उनके सामने एक ही मार्ग वचा था कि वे काग्रेस कार्यकारिणी से इस्तीफा दे दे और उन्होने दे दिया।

राइफल और तलवार के स्थान पर अहिंसा

वापू भी तो ऐसे कई परीक्षण कर चुके थे। जब उन्हे मालूम हुआ कि वादशाह खान ने इस मुद्दे पर कार्यकारिणी से स्तीफा दे दिया है तो खान साहब के प्रति उनके मन मे जो भाव उठे और उन्होने जो प्रतिक्रिया व्यक्त को, उस पर जो कुछ उन्होने लिखा वह वादशाह खान के जीवन का और दोनो महापुरुषो के परस्पर संबधो और स्नेह का एक ऐसा दस्तावेज है जो हमे वादशाह खान के वाईस वर्ष वाद भारत आगमन पर इनकी देशभक्ति और इन्सानि-यत की याद ताजा कर देता है। वापू ने लिखा, 'यह खान साहब के योग्य ही है कि वे पिछले वीस वर्षो से जिन सिद्धान्तो को मानते

रहे हैं उनके लिये कोई समझौता न करे। वे एक पठान हैं और एक पठान के लिए राइफल या तलवार हाथ में लिये जन्म लेना कहा जा सकता है, किन्तु खान साहब ने अपने खुदाई खिदमतगारों से इरादतन कहा कि वे अपने सारे हथियार डाल दें और रौलट एक्ट के सत्याग्रह में अपने आप को झोंक दें। उन्होंने देखा कि हिंसा के इन हथियारों के इच्छित रूप में त्याग देने का चमत्कारी प्रभाव पड़ा। एकमात्र यही उपचार था कि जिससे खूनी पैतृक झगड़े, जो बाप से बेटे को हस्तांतरित होते थे और जो एक पठान की सामान्य जिन्दगी का अंग बन चुके थे, खत्म हो गये। इसी संदेश को लेकर उन्होंने उसे अपनी जिन्दगी में उतारा और मुल्क की हर लड़ाई में राइफल और तलवार के स्थान पर बहादुरी के लिये अहिंसा के हथियार को अपनाया।"

लम्बी बहस से उन्हें घृणा है !

गांधी जी आगे और लिखते हैं, "बादशाह खान के इस विश्वास और खुदाई खिदमतगारों की सेवाओं के लम्बे इतिहास को अक्षुण्ण रखने के लिये बादशाह खान के पास और कोई रास्ता नहीं था कि वे अपनी सदस्यता से त्याग पत्र दे दें। उस पर उनका बने रहना असंगत होता और शायद उसका अर्थ होता उनकी जिन्दगी के सारे कार्य का खात्मा। वे अपने लोगों से रंगरूट की तरह सेना में भर्ती होने की बात नहीं कह सकते थे और इस बात को वे कैसे भुला सकते थे कि उसका परिणाम उनके सारे इलाके

सहवास में मैने उन्हें कभी नमाज या रमज़ान का व्रत भूलते हुए नहो देखा, सिवा इसके कि जब वे बीमार होते। पर इस्लाम के प्रति उनकी भक्ति का अर्थ दूसरे धर्मों के प्रति अवज्ञा नही था। उन्होने गीता पढी है। उनकी पढ़ाई थोडी है पर चयनात्मक है और वे तत्काल उस बात को ग्रहण कर लेते है जो उनके हृदय को छू लेती है। वे लम्बी बहस से घृणा करते हैं पर अपना दिमाग बनाने में उस बात पर जो उनके मन को छू गयी हो, ज्यादा समय नहीं लेते। यदि बादशाह खान अपने मिशन में सफल होते है तो उसका परिणाम होगा, कई समस्याओ का समाधान। परन्तु फल की भविष्यवाणी कोई नही कर सकता।"

मानवता के दूत | 13

—श्री मूलचन्द पारीक

सीमान्त गांधी बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खां की गांधी शताब्दी समारोह वर्ष १९६९-७० मे स्वतंत्र भारत की यह प्रथम यात्रा अनेकानेक दृष्टियो से बहुत महत्वपूर्ण है और भारत के लिए इनके दूरगामी परिणाम निकलेगे।

स्वाभिमान से मरना-जीना सिखाया

१५ अगस्त सन् १९४७ को देश स्वाधीन हुआ, पर उसके दो टुकडे हो गये। स्वाधीनता-संघर्ष मे दो गांधी साथ दिखाई देते थे, देश मे राष्ट्रीय एकता और अहिंसा के लिए एक साथ दो ऐसी गांधी-वाणी सुनाई देती थी, जिनकी कथनी और करनी मे कोई अन्तर नही था और जो पीडित भारतीयता के प्रतीक थे। पर विभाजन ने उन दोनो "गांधी" का भी बटवारा कर दिया। बादशाह खान ने गांधीजी की अहिंसा को अपनाकर सीमा-प्रान्त के बंदूकधारी खूंखार कबायलियो को सच्चे अर्थो मे अहिंसक सैनिक बनाकर उन्हे स्वाभिमानी मानव की तरह जीना और मरना सिखाया। हिन्दुस्तान की आजादी की लडाई मे अफगान जिरगा और खुदाई खिदमतगार लालकुर्तीदल का कार्य और कुर्बानी रोमांचकारी है। सीमाप्रान्त में हुई मतगणना का बहिष्कार करना परिस्थितियो को देखते हुए एक बडी भूल सिद्ध हुई। अगर प्रयास होता तो सीमाप्रान्त के लोग उस समय भारत के साथ रहने का फैसला करते और देश के राजनैतिक हालात भिन्न होते।

भेड़ियो के हवाले

गये पर जाते-जाते उन्होंने वादशाह खान के जजबातों के साथ कैसा खिलवाड़ किया ? जिस भारत के लिए उन्होने कुर्बानी दी, वो तो विदेशी राज्य बन गया और वे उसके कानूनी रूप से नागरिक भी नही रहे तथा उनका सीमाप्रान्त उस पाकिस्तान का एक भाग वन गया जिसके निर्माण व उसके पीछे व्याप्त विचारधारा का उन्होने सदा विरोध किया था। बादशाह खान के हृदय के दर्द का अनुमान उनके इन शब्दो से लगाया जा सकता है कि भारत के नेताओं ने विभाजन स्वीकार करके सीमाप्रान्त व उनके रहने वालो को भेड़ियो के हवाले कर दिया।

वेमिसाल संघर्ष

पाकिस्तान वनने के वाद वहां की सत्ता ऐसे लोगो के हाथ मे आई, जिनका भारतीय स्वाधीनता संग्राम में कोई योगदान नहीं था, जो अंग्रेजो के खैरख्वाह व उनसे प्रभावित थे। ऐसे लोगों ने बादशाह खान के साथ अंग्रेजो जैसा ही सलूक किया और उन्हे जेल में वन्द रखा। पाकिस्तानी शासको ने ऐसा ही दुर्व्यवहार वलोच गाँधी खान अव्दुल समद खाँ आदि के साथ भी किया। सीमाप्रान्त के कवायलियो के लिए "पख्तूनिस्तान" के नाम से स्वायत्तता प्राप्ति का उनका सघर्ष पाकिस्तान के साथ आज भी चल रहा है। उनके त्याग व वलिदान का यह दीर्घकालीन सघर्ष इतिहास में वेमिसाल रहेगा।

बाते कड़वी है पर सच हैं

भारत में हर साल विदेशो से अनेक राजनीतिज्ञ, विशेषज्ञ, वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री व शासक आते है और आम तौर से वे यहाँ की प्रगति और संस्कृति की प्रशसा ही करते देखे जाते है, भले ही वे अपने देश व सरकार के समक्ष यहाँ के भविष्य के प्रति आशका ही प्रकट क्यों न करते हो, पर पिछले लगभग वाईस वर्षो से कानूनी रूप से वादशाह खान के विदेशी नागरिक हो जाने पर भी उनकी भारत-यात्रा के माध्यम से देश के स्वरूप का जो धुंधला प्रतिविम्व देखने को मिल रहा है, वह गम्भीरता के साथ मननयोग्य है। सच्चे हृदय से उनके मुँह से जो वाणी सुनने को मिल रही है, वो कड़वी जरूर है, पर उसमे जो सचाई है, उससे कोई इन्कार नहीं कर सकता।

अगर हम आत्मनिरीक्षण करें और अन्तरात्मा की सही आवाज सुने, तभी हमें उनकी बातों में सार्थकता की झलक मिल सकेगी।

बादशाह खान की बुलन्द आवाज भी दब रही है

गांधीजी को भी ससार से गये हुए बाईस वर्ष होने जा रहे है। वो जिन्दा होते और आज की हालत को देखते तो क्या कहते, उसका अन्दाजा बादशाह खान के हृदय से निकले उद्गारो से भली-भाँति लगाया जा सकता है। गांधी शताब्दी समारोह वर्ष में हम गांधीजी को भूल रहे है। बादशाह खान के इस कथन मे कितनी सच्चाई व व्यथा एवं व्यग्य है कि "जो देश इतनी जल्दी गांधी की वाणी को भूल गया, वो उनकी बात कब सुनने वाला है।"

गांधी शताब्दी वर्ष में ही देश की सबसे बडी राजनैतिक सस्था का विभाजन होकर दो टुकड़े हो गये। सत्ता के सघर्ष ने नेताओ को ऐसा झकझोर दिया है कि वे गांधी और उनके विचारो को भूलकर सत्ता के मोह मे अधिकाधिक उलझकर अनैतिक एव अरचनात्मक वृत्तियों के शिकार होते जा रहे हैं। भारत की जनता आज स्वाधीन भारत के भविष्य के प्रति चिंतित और आशंकित है। इस स्थिति ने बेहोशी-सी हालत पैदा कर दी है और उसमें बादशाह खान की बुलन्द आवाज भी दब रही ।

क्या उनकी वाणी अरण्यरोदन रह जायेगी ?

चतुर्थ खण्ड

बादशाह खान के विचार

[बादशाह खान के भाषणो के सक्षिप्त रूपान्तर]

पाकिस्तान का विरोध क्यों ?

1

(३१ अगस्त १९६५)

मै सर्वप्रथम परमेश्वर का आभार मानता हू कि उसने हमारी पख्तून जाति मे एकता और भाईचारे की भावना उत्पन्न की है। मै अफगानिस्तान के महामहिम सम्राट का भी कृतज्ञ हू उन्होने छोटे-बडे तबको के पख्तूनो को संगठित किया है।

मै आपके देश में बहुत दिनों बाद आया हूं किन्तु आप यह न समझिएगा कि मैने आपको भुला दिया था—मै आप लोगों को भुलाता ही कैसे जबकि आपकी और हमारी कौम एक ही है और इस नाते हम—आप एक ही बिरादरी के है, भाई-भाई है।

दरअसल सच्चाई यह है कि पहले हमारे मुल्क पर अंग्रेजों की हकूमत थी। उन्होने हमारे बीच ऐसी खाई पैदा कर दी थी कि हम आपसे मिल नही सकते थे। इतना ही नही, अंग्रेजों ने हमें अपने कबायली भाइयों तक से मिलने पर रोक लगा रखो थी।

लेकिन मुझे दुःख होता है आप लोगों से यह कहते हुए कि अंग्रेजो के चले जाने पर जब पाकिस्तान के इस्लामी शासकों की हुकूमत कायम हुई तो यह देखकर इतना रंज हुआ कि वह भी अंग्रेजो के कदमो पर चली। आप ही जरा गौर से देखिए आज जिन लोगो के हाथो मे पाकिस्तान की हुकूमत की बागडोर है, वे कौन लोग है ! वे वही लोग है जिनके पूर्वज अंग्रेजों की खिदमत में थे। इन लोगों मे एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जिसने मुल्क के लिए कुर्बानी की हो—ये सभी अंग्रेजो के पत्तल चाटने वाले है। अंग्रेजों ने जाने के पहले देश के टुकड़े कर दिये और हम पठानों पर जिन्होने अंग्रेजी हुकूमत की मुखालफत की थी और जिनसे अंग्रेज सदा जलते थे, अपने दोस्त को बिठा दिया कि वह भी उनकी तरह ही हम पर जुल्म ढाए—भाई को भाई से न मिलने दे, बिरादरी में जगह-जगह दीवार खड़ी कर दे।

आपके मुल्क में आए हुए मुझे ६ माह हो रहे है। इस अरसे मे मैंने पख्तूनिस्तान के आन्दोलन को समझने की कोशिश की है। लेकिन मुझे अफसोस के साथ कहना पडता है कि इस आन्दोलन ने कोई तरक्की नही की-दूसरे शब्दो में आन्दोलन कामयाब नही रहा। दुनिया के हिस्सो मे जो जातियाँ अपनी आजादी के जग में कूदी, वे कामयाब रही, लेकिन १८ साल से पठान अपनी आजादी के लिए नाकाम कोशिशे कर रहे है।

आज हमारा मुकाबला पाकिस्तान से हे। हम लोग पाकिस्तान के खिलाफ अपनी आजादी लेने मे नाकामयाब क्यो रहे, इस सवाल का जवाब ढूँढना है। जब मेरी नजर दुनिया के दूसरे मुल्को, दूसरी कौमो पर जाती है और मैं देखता हूँ कि उन्होने हमसे कम अरसे मे आला दरजे की कामयाबी हासिल कर ली, तो उनसे हमें एक ही नसीहत मिलती है कि उनका उद्देश्य ही उनका ईमान था, वे अपने उद्देश्य को पाने के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर करने और भयंकर से भयंकर मुसिबत झेलने को तैयार थे। यदि हम पख्तून भी अपने अन्दर ये गुण पैदा कर ले तो कामयाबी हमारे भी कदम चूमेगी।

बाहर की जातियों को देखने से एक और बात यह साफ नजर आती है कि उन्होने बेइन्तहा तरक्की की है किन्तु हमने तरक्की नही की। इसका कारण है कि हममे राष्ट्रीयता नही है—हम अपने अलग अलग स्वार्थों की पूर्ति मे ही लगे रहते है—राष्ट्र के नाम पर एक होकर कोई कार्य नही करते।

एक बात और है कि हममें न तो जातीय भावना है, न हमने महान् रसूल की बात ही याद रखी। आप लोगों को मैं याद दिला दूँ कि आज से कोई डेढ हजार वर्षों पहले महान् रसूल ने कहा था—'ऐ मुसलमानो, ऐ मेरे अनुयायियो, यदि तुम्हे पैसा अपनी जाति, अपने मुल्क और अपने खानदान से भी अधिक प्यारा हो गया है, तो इस दुनिया में तुम बदनाम होवोगे और मरने के बाद भी तुम्हें सुख नही मिलेगा। जो जाति इस दुनिया मे बदनाम होती है, वही आखिरत (परलोक) मे भी जलील होती है।' इस तरह जो लोग स्वार्थों के चक्कर में आ जाते है, वे कभी तरक्की नही कर सकते—उनकी अधोगति होकर रहती है।

आप लोगों को मै यह बता दूँ कि हमारे मुल्क में यह प्रचार किया जाता है कि पाकिस्तान इस्लामी देश है और अयूब खाँ एक पश्तून है। यह प्रचार कर दुनिया को यह बताने की कोशिश की जाती है कि हमारा पाकिस्तान से विरोध करना वाजिब नही है, लेकिन मै आप लोगो को यह साफ तौर पर कह दूँ कि जो लोग इस तरह का प्रचार करते है वे न तो पाकिस्तान के लिए करते है, न हमारे लिए, उन्हे इस बात के लिए धन मिलता है और उसी रुपए के लिए वे ढोल की तरह बोलते है।

आप लोगो से मै कहना चाहता हूँ कि हम कभी इस बात से इन्कार नही करते कि पाकिस्तान मुसलमान है और हमारी बिरादरी का है, मगर सवाल यह है कि देश को आजाद किसने कराया, कौम और मुल्क की आजादी के लिए खून किसने बहाया, किसकी खेती उजड़ गई, किसके घर तबाह किये गए, किसने कुर्बानी की, गोलियाँ खाई और किसकी माँ-बेटियो को बे-आबरू किया गया? अंग्रेजो को हमने निकाला है, पाकिस्तान को हमने बनाया है। कोई मुस्लिम लीगी कह सकता है कि उसने अंग्रेज की खिलाफत की? वे तो अंग्रेजो के साथी थे—उनके साथ रह कर हम पर जुल्म ढाने वालो मे सबसे आगे थे।

हनारे साथ तो वही हुआ कि 'आग लेने आई थी और घर की मालकिन वन बैठी।' हमने अंग्रेजो को भगाकर जव आजादी दिलाई तो मुस्लिम लीग हमारी छाती पर बैठ गई। हम पाकिस्तान से केवल अपना हक मागते है। वह एक मुसलमान मुल्क है। लेकिन कोई यह तो बताए कि क्या इस्लाम कहता है कि कोई भाई अपना हक मागे तो दूसरा भाई उसका हक न दे?

हम तो पाकिस्तान से और कुछ नही मांगते—केवल पख्तूनों का हक मागते है। मै इस वात से इन्कार नही करता कि अयूव खाँ पख्तून है और यह भी सच है कि वह मुझे मानता है—चचा कहता है मुझे; लेकिन वह ऐसे लोगो के हाथो मे फंसा हुआ है जो पख्तूनों का हक दवाना चाहते है और पठानो की तबाही और वरवादी के वायस (कारण) है। मै सबकी मार्फत अयूव खाँ तक अपनी आवाज पहुँचाना चाहता हूँ कि वे लोग बेगानो को अपना तो वना नही सकते, अपनो को वेगाना जरूर वना लेगे।

लोग कहते है कि पाकिस्तान बनने के बाद मे तो पठानो की अपनी बादशाहत आ गई है। लेकिन कभी लोगो ने इस बादशाहत के नतीजो पर ध्यान नही दिया। आप देखिए, और बात जरा गहराई से सोचने की है कि लडाई पाकिस्तान करता है, चाहे कश्मीर मे हो, चाहे कच्छ मे, लेकिन मारे जाते है पठान ! यही नही, बाजोड में पठानो के सामने पठानो को खडा कर दिया गया था, वजीरिस्तान और बलीचिस्तान मे भी यही हुआ; और भारत और पाकिस्तान की सरहद बाघा पर जो सैनिक तैनात किये गए है वे सभी पठान हैं। इसका मतलब यह कि जो जगह तबाही और बरबादी की है, वह पठानो के लिए !

लेकिन जब हक की बात आती है तो पठानो को कोई पूछता नही। इसका सबूत है कि फौज मे मरने की जगह तो पठान है लेकिन उसी फौज मे से, ऊँचे-ऊँचे ओहदो पर से एक-एक पठान को निकाल बाहर किया गया। सिविल अधिकारियो को भी, जो पठान थे, हटा दिया गया और हमारे प्रदेश मे भी पजाबियो को भर दिया गया।

इतना ही नही, आप लोग हमारे प्रान्त मे जाकर हमारे मदरसों और विश्वविद्यालयो को देखिए देखिए। हमारी आर्थिक स्थिति कैसी है। इन बातो को देखते हुए मुझे अचम्भा होता है कि कोई यह कैसे कहता है कि बादशाहत पठानो का है। वह बादशाहत पठानो की कैसे कही जा सकती है जिसमे पठानो पर ही विश्वास नही किया जाता, उन्हे तबाह किया जाता है।

इसलिए ऐ मेरे पठान भाइयो, यदि आपने अपनी यह हालत न बदली, तो यकीन कीजिए आप बरबाद हो जायेंगे। आप चाहे मेरी बात मानिए, या न मानिए, मगर असलियत यही है। मै तो आपका सेवक हूँ। हम आप एक ही जाति के है। मै आपके भले के लिए कहता हूँ। यदि नुकसान होना है तो आपका होगा, लाभ होता है तो आपका होगा। मुझे चौधरी की ख्वाहिश नही है। मुझे नेतृत्व की तमन्ना नही है, आपको राह दिखाना भी नही चाहता। मै खुदा के नाम पर, इन्सान के नाते पर अपना फर्ज अदा करता हूँ और असलियत की तस्वीर आपके सामने रख रहा हूँ। मेरा आपसे यही कहना है कि आप इस्लाम को भी जान लें और इस असूल को भी जान लें। पाकिस्तान तो हमने अपने खून से बनाया है, अंग्रेजों को

हमने बाहर निकाला है और अब जो हुकूमत चला रहे है वे कैसे हमारे भाई है और कैसे मुसलमान हैं जो प्रचार यह करते है कि बादशाहत पठानों की है और पठानों को नेस्तनाबूद करने की हरकतों से बाज नही आते।

मैंने ये बाते इतने विस्तार से इसलिए कही कि हम पर यह आरोप लगाया जाता है कि हम पाकिस्तान से बगावत करते है, उसे धोखा देना चाहते है। आप खुद ही सोचिए जिन पठानों ने मुल्क की आजादी के लिए खून बहाया, कौम को ऊँचा उठाने के लिए हर मुसीबत को हँसते-हँसते झेला, गोलियाँ खाईं, जेल गए, वे पठान अपने ही मुल्क की बगावत कर सकते है, अपनी ही कौम के साथ गद्दारी कर सकते है ? हरगिज मुमकिन नही है। लेकिन पाकिस्तान की सरकार की हम बगावत करेगे क्योकि वह हमारा वाजिब हक नही देना चाहती, हमारी बरबादी पर तुली है।

मैं अपने पख्तून भाइयों से कहना चाहूँगा कि वे अपने बाप-दादो की तवारीख पर गौर फरमाये। हमारे पुरखों ने सदा अपनी बुलन्दी के झण्डे ऊँचे रखे है और दूसरे मुल्कों मे गाड़े हैं, मैं देखता हूँ आज हमारी कौम का घर उजड़ गया है। आप शेरशाह को देखिए, मीरवस को देखिए जिनके नाम से पठान कौन का माथा आज भी उन्नत है। आप भी उनकी तरह बुलन्दी हासिल कर सकते है। मगर शर्त एक है कि आप में एकता हो, फूट और दुश्मनी न हो। याद रखिए, यदि आपने अपना घर बना लिया तो पठानो के देश को कोई भी नही हरा सकता। आपका नाम दुनिया में रोशन रहेगा और अन्त मे मै आपको महान् रसूल की बात एक बार फिर याद दिला देता हूँ कि जो इस दुनियां में अपमानित है, वही उस दुनिया मे भी अपमानित है।

मुझे हिन्दू कहते हैं | 2

(३१ अगस्त १९६९)

आज के अवसर पर मैं महामहिम अफगानिस्तान-सम्राट् तथा यहाँ के प्रधानमंत्री और सरकार के प्रति कृतज्ञता प्रगट करता हूँ जिनके कारण मुझे इतने पश्तून भाई-बहनों के बीच कुछ कहने का मौका मिला है।

इसके बाद मैं सबसे पहले एक बात कहना चाहूँगा कि जब मैं पठान जाति को देखता हूँ—और अपने लगभग दो वर्षों के अन्दर मुझे यहाँ की पठान जाति को नजदीक से देखने का अवसर मिला है—तो मुझे दुःख होता है कि हम कितने नीचे गिर गए हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि संसार की जातियों में यदि कोई जाति ऐसी है, जिसका तवारीख बुलन्दी पर था और आज नीचे गिरी है, तो वह हमारी पठान जाति ही है और इस तबाही तथा बरबादी का एकमात्र कारण यह है कि इस जाति में जितनी अशिक्षा है, उतनी किसी और जाति में नहीं।

हमारी तबाही और बरबादी बहुत दिनों से होती आ रही है। सबसे पहले सिकन्दर ने, फिर चंगेज, अरब और मुगलों ने हमें तबाह किया। उसके बाद अंग्रेज आए जिन्होंने अपनी मक्कारी से न केवल देश को ही टुकड़े-टुकड़े में बाँट दिया बल्कि हमारी जाति के भी टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

इसमें भी अजीब बात यह है कि अंग्रेजों के जाने के बाद पाकिस्तान की इस्लामी सरकार ने न केवल जाति के टुकड़ों को और भी दूर-दूर रखने की कोशिश की, बल्कि, आपको सुनकर ताज्जुब होगा कि उसने मुझे हिन्दू बताया। इसका कारण यह है कि मैंने राष्ट्रीयता का पाठ अपने पठान भाइयों को पढ़ाया और इस पर कहा गया कि 'बाचाखान [illegible] [illegible] है, काफिर है।"

इसके पीछे राज क्या है? राज यह है कि मेरी निगाह में यह सवाल राष्ट्रीयता का है। जिस कौम में राष्ट्रीय-भावना नहीं, जो अपनी जातीय भलाई की बात नहीं सोचते, जिनमें जातीय गौरव

नहीं, वह कौम कभी आगे नहीं बढ सकती। आज हमारी जाति इन बातो मे पिछडी हुई है और मुझ जैसे किसी ने यदि जातीय एकता की बात कही, कौमी बहबूदी का सन्देश दिया तो उसे जातिगत तिरस्कार दिलाने के लिए फरेब रचा अग्रेजो ने और प्रचार किया पाकिस्तान ने कि मै काफिर हूँ—मै हिन्दू हूँ।

जब बात हिन्दू और मुसलमान की चल पड़ी है, मजहब की चल पड़ी है तो मैं इस पर भी दो-एक शब्द कहना चाहूँगा। आखिर दुनिया में कोई मजहब या धर्म क्यो चलाया जाता है? मेरे विचार से कोई धर्म तब चलाया जाता है जब समाज में बुराइयाँ भर जाती है। इन्सान को इन्सानियत सिखलाने, उसके भीतर बची-खुची इन्सानियत को बनाए रखने और उसे बढाने के लिए ही समय-समय पर कोई महान् व्यक्ति पैदा होकर हमे रास्ता दिखाता है। जिस समय संसार और संसार की जातियाँ मानवता से गिर जाती है, तो उन्हे मानवता की शिक्षा देने के लिए पैगम्बर आता है और वह अपने साथ धर्म लाता है ताकि जातिके अन्दर प्रेम-प्रीति, भाईचारा और राष्ट्रीयता उत्पन्न हो सके। जिन जातियों मे ये गुण आ जाते है, जो कौमे कुर्बानी के लिए तैयार रहती हैं, वे तरक्की कर जाती है और जो यह नही कर सकती वे तबाह और बरबाद हो जाती हैं। इस तरह किसी भी धर्म का उद्देश्य इन्सानियत को जगाना, नेकी और न्याय का ज्ञान करना है। मनुष्य को गलत राह पर जाने से रोक कर उसे सही रास्ता दिखाना है। धर्म हमे खुदा की ओर ले जाता है, सच्चाई के दर्शन कराता है, नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करता है।

आप मुस्लिम धर्म को ही लीजिए। पैगम्बर हजार मुहम्मद ने कहा था, "मुसलमान वह है जिसके हाथ और जबान से किसी दूसरे को कोई नुकसान न हो ताकि खुदा के जीवो, बन्दो को नेकी, भलाई, सुख और लाभ मिले।" उन्होने आगे यह भी कहा कि ईमान का अर्थ है देश और कौम से मुहब्बत करना।

लेकिन ताज्जुब तो यह है कि जब मै यही बाते अपनी जाति के लोगो से कहता हूँ तो मुस्लिम पाकिस्तान मुझसे नाराज होता है और मुझे काफिर और हिन्दू कहता है।

मै यह नही कहता कि यह पाकिस्तान ही है जो धर्म के नाम पर तबाही ढाए जा रहा है। असलियत यह है कि जिनकी गद्दी पर वह बैठे है, उनकी नसीहत ही ऐसी रही है—मेरा मतलब अंग्रेजो से है। अंग्रेज कौन-सा धर्म मानते है—ईसाई धर्म, जिसे ईसा ने चलाया था। ईसा मसीह का कहना था कि यदि कोई तुम्हारे गाल पर एक थप्पड मारे तो तुम बदले मे अपना दूसरा गाल भी उसकी ओर कर दो। ऐसे क्षमाशील थे हजरत ईसा। लेकिन उनके अनुयायी क्या कर रहे है? इंगलैण्ड वालो ने भारत मे लाखो लोगो को तबाह किया, वे भी ईसाई है, अमेरिका वाले भी ईसाई है, लेकिन देखिए वे वीयतनाम मे क्या कर रहे है! इसीलिए मै कहता हूँ कि आज दुनिया मे भगवान की बाते, सच्चे धर्म के रास्ते लोग भूल गए है, वे औरो को सुख पहुँचाने मे नही, तबाह करने में लगे है।

यही पाकिस्तान कर रहा है। ऊपर से तो पाकिस्तान इस्लाम की रट लगाता है लेकिन व्यवहार मे क्या कर रहा है? अपने ही मुसलमान भाइयो का कत्लेआम करता है। कोई उससे पूछे कि अरे पाकिस्तान, बाजोड के पख्तूनो ने क्या गुनाह किया था कि उन पर बम-वर्षा की गई? क्या औरतो, बूढो और बच्चो को तबाह करना ही इस्लाम है? हमारे बलूची भाइयों ने क्या गुनाह किया है कि उन पर आए दिन गोलियाँ चलाई जाती है? क्या हम पठान मुसलमान नही है? क्या हमे अपना हक नही मिलना चाहिए?

इन पर पाकिस्तानी एजेण्ट हमसे कहते है—खानाखान, बेकार क्यो चिल्लाते हो? पाकिस्तान मुसलमान है। मिलकर क्यों नही रहते!

आप लोग यह भी जानते है कि मै अहिसा के उसूल में विश्वास रखता हूँ। मैं शान्ति का समर्थक हूँ। इसलिए मै कहना चाहता हूँ कि शान्ति तब तक नही हो सकती जब तक सबको बराबरी का दर्जा न मिले--एक मालिक और दूसरा गुलाम न रहे। मै रूस और अमेरिका दोनो से कह देना चाहता हूँ कि जब तक पख्तूनों को उनका हक नहीं मिलता तब तक शान्ति हो नही सकती !

गांधी जी, कांग्रेस और पाकिस्तान-1 | 5

(काबुल रेडियो से प्रसारित)

मेरे भाइयो और बहनो, आप लोगो ने महात्मा गांधी के बारे मे बहुत सी बाते मालूम की है। मैं आपको यह बताने के लिए खड़ा हुआ हूँ कि मैं महात्मा गांधी का साथी कैसे बना और फिरंगियो (अंग्रेजो) ने हमे कांग्रेस मे शामिल होने के लिए कैसे मजबूर किया।

आप देख ले कि हम पख्तून कांग्रेस मे हरगिज शामिल नही थे। हम पख्तून तो खिलाफत की तहरीक (आंदोलन) मे थे। फिरंगी ने हमे कांग्रेस मे शामिल होने के लिए इस तरह मजबूर किया। अंग्रेजो ने जिस वक्त अफगानिस्तान मे, ('इंकलाब' तो उसे मैं नही कहूंगा) तबाही शुरू कर दी और अमानुल्ला खान पर कुफ्र का फतवा लगवा दिया और यहा भयानक बरबादी और गड़बड़ पैदा हो गई, उस वक्त वहा (सीमाप्रांत मे) हम पख्तूनो ने सोचा कि हम तो गुलाम है, अंग्रेज तो अफगानिस्तान को नही छोडते जो आजाद मुल्क है। तो हम उठ खड़े हुए और तहरीक चलाने के लिए एक जमात बना ली जिसका नाम 'खुदाई खिदमतगार' रखा। यह एक सोशल जमात थी, कोई सियासी तहरीक नही थी। हमने खुदा के वास्ते काम और कौमी खिदमत शुरू कर दी। जब हमने उस कौम के पीछे दर-ब-दर फिरना शुरू कर दिया तब हमारी जमात बड़ी

रहा हूं। इसका अहसान मानना तो दूर रहा, उल्टे तुम मेरे हाथ रोक रहे हो। मेरी बात का जवाब यह मिला कि तुम अगर पख्तूनों को मुन्तजिम (सगठित) कर लोगे तो इस बात की क्या गारण्टी है कि उनका हमारे खिलाफ इस्तेमाल नही करोगे ! मैने कहा कि गारण्टी एतबार से होती है, तुम हमारे ऊपर एतबार करो, हम तुम्हारे ऊपर एतबार कर लेगे।

मुस्लिम लीग ने साथ न दिया

चार महीने बाद हमे गिरफ्तार करके पजाब की गुजरात स्पेशल जेल मे पहुँचा दिया गया। हमारे सूबा सरहद को फौज ने अपने घेरे मे ले लिया। मशीनगनो से लैस फौजी गाँवो के मुहासरे करने और लोगो को मारने-पीटने लगे। वह धाँधली मची कि अलअमा लोगो को अपने घरो और गाँवो से निकलने की इजाजत नही थी। लेकिन हमारे दो साथी किसी तरह सिध नदी पार करके हमारे पास पहुँच गए। उन्होने बताया कि अंग्रेज हमारी तहरीक को तहस-नहस और बरबाद करना चाहते है। हमने सलाह-मशविरा किया। काग्रेस का उस समय तक हमे कोई खास पता नही था। मैंने अपने साथियो से कहा कि भाइयो यह जो मुस्लिम लीग बयान की जाती है, मुसलमान का नाम इस पर चस्पा है। हम भी तो मुसलमान है। तुम मुस्लिम लीग के पास जाओ और उससे कहो कि हमारी मदद करे।

दो महीने बाद साथी वापस लौटे, उन्होने कहा कि हम शिमला गए, लाहौर गए, मुस्लिम लीग के पीछे मारे-मारे फिरते रहे। वह मुसलिम लीग तो हमारा साथ नही देना चाहती, हमारी कोई मदद नही करना चाहती। मैंने पूछा, क्यो ? उन्होने कहा, यह तो अग्रेजों की साथी है और फिरगियो की ही पार्टी है। उसे तो अंग्रेजो ने कौमपरस्तो के मुकाबले के लिए बनाया है ताकि वह हिन्दुस्तान के लिए आजादी मागने वालो की मुखालफत करे। हमारी लड़ाई भी तो फिरगियो यानी अंग्रेजो के साथ है, हमारी मदद यह अंग्रेजपरस्त मुसलिम लीग पार्टी कैसे करेगी ?

हमने अपने साथियो से कहा कि भाई जाओ, कही और किसी पार्टी को तलाश करो। काग्रेस भी एक मशहूर है, उसी के पास चले जाओ। वे काग्रेस के पास चले गए। गौर से देखा जाए

तो कांग्रेस हिन्दुओं की जमात न तब थी, न अब है। उस वक्त की कांग्रेस में हिन्दू भी थे, मुसलमान भी थे पारसी भी थे, हिन्दुस्तान की तमाम कौमें उसमें शामिल थी। यही एक जमात थी जो मुल्क के लिए आजादी मांगती थी। आजादी चाहने वाले मुसलमान भी इसी कांग्रेस में शामिल थे। एक अजब बात बताऊं कि यह जो मुस्लिम लीग है इनका लीडर मि जिन्ना था। वह भी इसी कांग्रेस में था। सिर्फ यही नही, बल्कि बडे-बडे कानूनदां और जहीन तबका, वे सब कांग्रेस में थे। मि. सापू जयकर साहब और मुल्क के तमाम बुजुर्ग और मुमताज लोग कांग्रेस के अन्दर थे। इसके बाद जब महात्मा गांधी कांग्रेस मे आए तब उन्होंने कहा कि अंग्रेजों से कब तक भीख मांगते रहोगे? यह इस तरह कुछ देने वाले नही। हम बहुत कुछ कर सकते है, हम जद्दोजहद करेंगे, अदम तावन (असहयोग) करेंगे, सिविल नाफरमानी करेंगे। यह सुन कर तमाम सुरमा सिर पर पांव रख कर भागे कि यह तो डायरेक्ट एक्शन है। और कांग्रेस से निकल कर कांग्रेस के खिलाफ बातें करने लगे कि यह तो हिन्दुओं की जमात है।

कांग्रेस के साथ

मजबूर कर दिया। रुपये पैसे के वास्ते यह जो लोग प्रोपेगेण्डा करते है तो रुपये पैसे अंग्रेजो के पास वहुत थे और यह वात नही थी कि वे हमे नही देते थे, उन्ही से पूछ लो, पाकिस्तान से पूछ लो—हम लोग कमरवस्ता हुए तो किसके लिए।

अब आपको वताता हूँ कि मै महात्माजी से कैसे मुताशिर (प्रभावित) हुआ था। इसके पहले जव अफगानिस्तान मे धाधली शुरू हुई और गड़बड़ पैदा हुई तब मै हिन्दुस्तान गया था और वहाँ अफगानिस्तान के लिए इमदाद मांगी थी। लखनऊ में कांग्रेस वकिंग कमेटी का इजलास हो रहा था। उस वक्त मैने पहली मरतबा गांधीजी के दर्शन किए थे। उन्होने हमारे मकसद के साथ इन्तहाई हमदर्दी का इजहार किया था। दूसरी दफा जब मै महात्मा गाँधी से मिला तो और ज्यादा मुताशिर हुआ। तव मैने उन्हे कलकत्ते मे देखा था, वहा हमारी खिलाफत कमेटी का इजलास हो रहा था और कांग्रेस का भी इजलास शुरू था। खिलाफत कमेटी से हमारे रहनुमाओं और पजावियो मे झगड़ा हो गया, चाकू और छुरे निकल आए। हम पख्तून वहाँ न होते और वीच मे न पड जाते तो न जाने क्या हो जाता। दूसरे दिन कांग्रेस का जलसा था, उसमे एक नौजवान ने गांधीजी को दो मरतवा टोका और कहा कि तुम वुजदिल हो, मगर गांधीजी हंसते रहे। महात्माजी कभी गुस्से मे नही आते थे। वह ज्यादा इन्तहापसन्द नहीं थे, नरमी पसंद थे लेकिन थे सख्तजान। वह जो भी वात करते थे वह हिकमत अमली से खाली नही होती थी। मैने खिलाफती रहनुमा भी देखे थे और गांधीजी को भी अच्छी तरह देखा। उनकी इस वात ने मेरे ऊपर वहुत असर किया।

कहा, आप वायसराय को इत्तला दे दीजिए कि बाच्चा खान यहां आ गया है, हमारे पास मौजूद है। वह और मै दोनों शामिल आ जाते है। बाच्चाखान का कहना है कि जिन लोगो ने मेरे ऊपर इल्जाम लगाये है उन्हे भी शिमले बुला ले और आप और वायसराय दोनो मु ंसिफ बन जाये। मै इलजामो के जबाब दूंगा। अगर मै मुजरिम साबित हुआ तो हुकूमत जो सजा देगी वह बड़ी खुशी से कबूल कर लूंगा। दूसरी बात गाधीजी ने खुद लिखी कि लार्ड-इरविन मुझे सूबा सरहद का देखने के लिए भेजना चाहते थे। आप मुझे इजाजत दे दे।

वायसराय का जबाब आया कि न आप शामिल आये, न बाच्चा खान को भेजे। आपको यह इजाजत भी नही देता। गाधीजी ने मुझसे कहा, तुम्हारा कोई कसूर नही है, तुम जाओ अपना काम करो—मुल्क की खिदमत जारी रखो।

महात्माजी की मुहब्बत

तो मै आपसे अर्ज करता हूँ कि जब हम कांग्रेस में शामिल हो गये तो कांग्रेस वालो ने दुनिया भर मे हमारा प्रोपेगण्डा किया और एक कमेटी भी बनाई जिसने हमारे सूबे मे आने की कोशिश की लेकिन अंग्रेजो ने उसे इजाजत न दी। वह जाच कमेटी पठानों पर अंग्रेजी जुल्मो की जाच के लिए रावलपिण्डी में बैठ गई और उसने सरहद मे हुए जुल्मो और पेशावर के किस्सा खानी बाजार की फायरिग की जाच का काम शुरू कर दिया। कमेटी ने एक तगडी रिपोर्ट छापी और अमरिका, इंगलैण्ड और सब मुल्को को अंग्रेजो के जुल्मो से आगाह कर दिया। यह इमदाद गाधी जी और काग्रेस की तरफ से न होती तो फिरगी हमें अपने मुल्क व मिल्लत की खिदमत न करने देते।

यह मैंने आपको एक बात बताई है। मैं गांधीजी से कहा करता था कि तशद्दुद में तो कहरोगजब और नफरत भरी होती है। आपकी कौम हिन्दुस्तानियो में तो यह बात चल सकती है, हमपख्तूनो मे नही चल सकती। हम शुक्रगुजार है कि आपने वह सबक याद करा दिया जो इस्लाम मे मौजूद था। एक दिन मैंने गाधीजी से कहा कि महात्माजी, इस जग मे हिन्दुस्तान ने तो तशद्दुद से काम लिया, हम पख्तूनो ने तशद्दुद का इस्तेमाल नही किया। हिन्दुस्तान के पास

तशद्दुद का सामान भी नही था, हमारे पास था। महात्मा जी ने कह-कहा लगाया और कहा, अदम तशद्दुद (अहिंसा) तो बहादुर कौम का खासा होता है। यह गलत है कि यह नामर्दी की निशानी है। मेरी हिन्दुस्तानी कौम की बनिस्बत तुम्हारी पख्तून कौम बहादुर है। महात्माजी का हमारे साथ और पख्तूनों के साथ जिस कदर मुहब्बत और प्यार था उस कदर प्यार और मुहब्बत और किसी के साथ नहीं था। यह हमारी स्याहबख्ती थी कि वह हिन्दुस्तान की आजादी के बाद हिन्दुस्तान मे नही रह सके।

गांधीजी, कांग्रेस और पाकिस्तान-२ | 4

. जानते है, यह बात एक दिन हकीकत बन गई कि हिन्दुस्तान का तकसीम हो, उसके टुकड़े-टुकड़े हो जाएं। यह फैसला भी हो गया कि सूबा सरहद में रायगीरी करा ली जाए, लोगों से दरियाफ्त किया जाए, रिफरेंडम हो जाए। अरे भाई, किस चीज का रिफ़रेंडम करते हो ? जिस वक्त हिन्दुस्तान का बँटवारा शुरू भी नही हुआ था उसके सिर्फ एक साल पहले सूबा सरहद और तमाम मुत्तहद हिन्द (सयुक्त भारत) में इलेक्शन हुए थे और एक भारी अकसरियत (बहुमत) से हमने अपने सूबा सरहद में मुसलिम लीग से बाजी जीती थी। इलेक्शन भी पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की बिना पर हुआ था। फिर देखो कि पंजाब के दो हिस्से होने है और वहाँ के लोगो से नही पूछा जाता, वहाँ असेम्बली से पूछा जाता है। हमारी असेम्बली से क्यो नही पूछा जाता ? हमारी असेम्बली को इसलिए नजरअंदाज कर दिया जाता है कि उसमें हमारी अकसरियत थी और फिरंगी जो थे वह हमसे सख्त नाराज थे। वे कहते थे कि हिन्दुस्तान में दस करोड़ मुसलमान थे, कौम की हैसियत से उन्होंने हमसे जंग नही की लेकिन पख्तून खड़े हो गए। हिन्दू भी खड़ा हो गया, दोनों इकट्ठे हो गए, हमारे साथ लडाई शुरू कर दी और हमे इस मुल्क से निकाल दिया। खैर, अग्रेज का तो हमे इल्म था कि वह हमारा दुश्मन हो चुका है। शिकायत और गिला अपने साथियों से है। कांग्रेस वालो से बजातौर पर शिकायत है कि हमने उनसे सारी उम्र संगत निभाई, मुसीबत में, जेलखाने मे, आजादी की जंग में, कौम की हर जद्दोजहद में हम तमाम उम्र उनके साथ साबित कदम रहे। हैरानी और दुख इस बात का है कि कांग्रेस ने अंग्रेजों की रिफरेंडम वाली शरारतआमेज बात मजूर क्यो कर ली। उस वक्त का वायसराय लार्ड माउंट बेटन जो था, उसने कांग्रेसी नेताओं को बहुत बुरी तरह अपने जेरे असर किया हुआ था। उन्होंने पाखण्ड

(रिफरेंडम) मंजूर कर लिया और कांग्रेस के नेताओं ने हिन्दुस्तान का बटवारा भी मान लिया और यह भी कबूल व तसलीम कर लिया कि सूबा सरहद में असेम्बली से नहीं पूछा जाएगा। लोगों की राय ली जाए। अरे, पंजाब में लोगों की राय नहीं लेते, बंगाल में लोगों की राय नहीं मालूम करते। यह इसलिए कि अंग्रेज ऐसा चाहते थे और तुम उनके मुंह को ताकते थे।

गांधीजी बटवारे के खिलाफ

महात्मा गांधी हिन्दुस्तान की तकसीम और सूबा सरहद की रिफरेंडम-दोनों चीजों के बरखिलाफ थे। कांग्रेस वर्किंग कमेटी की आखिरी मीटिंग में उन्होंने अपनी मुखालफत का इजहार कर दिया था। वह इस बात के सख्त मुखालिफ थे कि मुल्क की तकसीम के साथ हमारे यहां पख्तूनिस्तान में रिफरेंडम किया जाए। बकौल महात्माजी यहां तो रायशुमारी हो चुकी थी। लेकिन अंग्रेज अपनी पालिसी में कामयाब हो चुका था कि इस बेचारे (महात्मा गांधी) की बातें उनके साथी भी सुनने के लिए तैयार नहीं थे। यह किस लिए? इक्तदार (सत्ता) के लिए। कांग्रेस के नेताओं ने अपने रहबर को छोड़ दिया, उसके साथ बेवफाई की।

मैं उस वक्त कांग्रेस की वर्किंग कमेटी में बैठा हुआ था। गांधीजी मेरी बगल में बैठे थे। मैंने महात्मा जी से कहा कि आप लोगों ने हमें भेड़ियों के सुपुर्द कर दिया, हमारा क्या बनेगा? पाकिस्तानी लाई तो भेड़िया है। आप लोगों ने हमें जिन्दा दरगोर कर दिया।

कहा, ठीक है, मैं तो अदम तशद्दुद का कायल हूँ, लेकिन हुकूमते हिन्द तो अदम तशद्दुद की कायल नही है ।

पाकिस्तान का रेडियो अभी तक हमे हिन्दू बयान करता है। यह इस लिए कि उसके पास और कोई बात नही है और हमने कांग्रेस की सगत की। हुकूमत हिन्द कहना चाहती है कि पख्तूनों के साथ गाँधीजी के वायदे का कोई रिकार्ड हमारे पास नही है। अरे भई, डाकूमेंट की बात छोड़ो। हमने हिन्दुस्तान की आजादी के लिए कुर्बानियाँ दी, तुम्हारा साथ कभी नही छोडा। मगर तुमने हमें कसमपुरसी मे छोड़कर मुँह मोड़ लिया, हमे भेडियो के आगे फेंक दिया। क्या यह तुम्हारा इखलाकी फर्ज नही है कि हमारी मदद करो ? हमारे दिल मे गाँधीजी की जो इस कदर मुहब्बत, एहतराम और अर्कादत है वह इसलिए कि उसने हमारी हर मुसीबत और विपदा मे सहायता की है। आज पाकिस्तान के सदर या उनके खेमा बरदार क्यो कहते है कि खुदाई खिदमतगार और उनका लीडर बाच्चा खान हिन्दुओ का साथी है ? मैं कभी-कभार हिन्दुस्तान से कहता हू कि तुम्हारा पड़ौसी मुल्क चीन है। कोरिया का एक हिस्सा चीन का साथी था। अमरीका और दुनिया भर की फौजो ने जब कोरिया के उस हिस्से पर हमला किया तो चीन ने तने तनहा बड़ी बामर्दी से उसका साथ दिया। तुम जरा चीन से ही सबक सीख लो।

यहाँ परसाल हिन्दुस्तान की आजादी की एक तकरीर में मुझे बुलाया गया था। उसमे पाकिस्तान का सफीर जनरल यूसुफ मेरे पास आकर बैठ गया। वह कहने लगा, बाच्चा खान, अच्छी बात यह होगी कि पाकिस्तान और अफगानिस्तान मे भाईचारा कायम हो जाए, इसके लिए कोशिश की ज ए। मैंने कहा, हम भी यही चाहते हैं। और अफगानिस्तान भी भाईचारा ही चाहता है। तुम इस्लाम के दावेदार हो और हम भी आखिर मुसलमान है। इस्लाम मे भाईचारा है, कौमियत नही है। बडी आसान बात यह है कि तुम हमको भाई बना लो, अफगानिस्तान तुमको भाई बना लेगा।

अब आपने सुना होगा कि हमारे सदरे पाकिस्तान ने १० अक्तूबर को मरदान मे एक तकरीर की। मैं यह बात समझ नही सकता कि एक तरफ तो ये लोग हमसे भाईचारे की बाते करते हैं

और दूसरी तरफ ऐसी तकरीरें करते हैं। दुनिया की तारीख में आप देख सकते हैं कि जो खल्क की खिदमत और अपने देश व जाति की खिदमत के लिए खड़ा हुआ है उस पर इलजाम ठूँसे गए है। फिर भी मुझे सदर (अब भूतपूर्व) अयूब से शिकायत है कि क्योंकि वह मुझको चाचा कहते रहे हैं।

गद्दार कौन ?

अयूब ने अपनी तकरीर मे इस्तेकाम (अस्तित्व) की बात कही है। वह भूल गए है कि इस्तकाम का नाम मैंने ही लिया था, वह मैं भी चाहता हूं, सब पख्तून भी चाहते हैं। अयूब ने कहा था कि मैं एक मजबूत मरकज (केन्द्र) चाहता हू। मैंने कहा था, ठीक है, तुम मुझको बताओ कि मुल्क का इस्तकाम किस चीज पर है। उन्होंने कहा, फौज पर। मैंने कहा, फौज पर नही है। उन्होने पूछा, फिर किस पर है ? मैंने कहा, कौम पर। देखो जनरल च्याग काई शेक के पास कितनी फौज थी लेकिन कौम उसके साथ नही थी, उसका क्या हाल हुआ।

अयूब ने तकरीर मे एक बात यह भी कही है कि खुदाई खिदमतगार पाकिस्तान बनाने के ही खिलाफ थे, आज भी वे इसको बरबाद करने पर तुले हुए है, वे गद्दार है।

अयूब साहब को जानना चाहिए कि हम पाकिस्तान बनाने के क्यों खिलाफ थे। हिन्दुस्तान के मुसलमान तब पागल हो गए थे। मजहब से नावाकिफ आदमी जब मजहबी मजनूं बन जाता है तो उसका दिमाग काम नही देता। पागलों की तरह ये मजहबी दीवाने शोर मचा रहे थे। अंग्रेज ने उनके कान भर दिए थे कि आजादी मांगने वालों की हुकूमत मिल गई तो फिर न हमारी सलामती है, न तुम्हारी खैर है। सारी मुस्लिम लीग की सलामती और हिफाजत नदारद हो जाएगी और मुस्लिम लीगियों की जिन्दगियां खतरे में पड़ जाएंगी। अंग्रेजों के इन टोडी बच्चों ने पूछा तो फिर हम क्या करें ? फिरंगी ने कहा, आओ साजिश करते है और हिन्दुस्तान का एक टुकड़ा काटते हैं, तुम भी उसे खाओगे और हम भी खाते रहेंगे।

इस्लाम के नाम पर मुसलमानो को धोखा दे रहा था। अब दुनिया देख ले कि आज पाकिस्तान की हुकूमत सिर से पाँव तक कौमपरस्तों से खाली है। क्या उसमें एक भी कौमपरस्त है या ऐसा कोई आदमी है जिसने कौम की कभी खिदमत की हो या अपने देश की कोई सेवा की हो ? पाकिस्तान के लीडर वही लोग है जिन्हे टोडी बच्चा कहा जाता था।

आप गौर करे अयूब अपने आप को वफादार और पाकिस्तान का खैरख्वाह कहते है और खुदाई खिदमतगारों को, पख्तूनों को, गद्दार बताते हैं। जिस वक्त हिन्दुस्तान की आजादी के लिए जग जारी था उस वक्त हम लोग अंग्रेजों के खिलाफ लड़ रहे थे, जेलखानों में तरह-तरह की मुसीबतो के शिकार थे और सदर अयूब फिरंगी की झोली में बैठे थे।

●

भूली बिसरी यादें | 5

(प्रस्तोता यू० आर० राव)

गांधीजी के साथ मेरे जैसे स्नेहपूर्ण और हार्दिक सम्बन्ध रहे, वैसे केवल जवाहरलाल नेहरू और राजेन्द्र प्रसाद के साथ रहे।

मैंने गांधीजी को सबसे पहले १६२० में दिल्ली में खिलाफत सम्मेलन में देखा था। उनके साथ जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद और अन्य लोग भी थे। मुझे उनसे मिलने का अवसर नहीं मिला, लेकिन मैंने यह अनुभव किया कि यही लोग देश की स्वतन्त्रता और सुख-समृद्धि के लिए तन-मन-धन से काम करेंगे।

दूसरी बार मैं गांधीजी से १६२८ में कलकत्ता में मिला, जब कांग्रेस और खिलाफत सम्मेलन का अधिवेशन चल रहा था। कांग्रेस अधिवेशन में हम गांधीजी का भाषण सुन रहे थे। इतने में गुस्से से भरा एक नौजवान मंच पर चढ़ आया और गांधीजी को टोकते हुए बोला—'महात्मा जी, आप कायर हैं, कायर।' गांधीजी उसकी बात पर खूब हँसे और उन्होंने अपना भाषण जारी रखा। मैं गांधीजी का शांत स्वभाव देखकर आश्चर्य-चकित रह गया। यह उनकी महानता का द्योतक है।

आपका ध्येय सेवा, मानवप्रेम और इन्सान की खुशहाली है। मैं भी यही चाहता हूँ। जब तक हमारा और आपका यही दृष्टिकोण रहेगा हम में झगड़ा नहीं होगा। मतभेद की स्थिति में ही लोग एक-दूसरे से अलग होते है।'

वर्धा में मै बहुत प्रभावित हुआ कि गाँधीजी हर काम समय पर करते थे। भोजन, सैर, सोने और प्रार्थना का उनका समय निर्धारित था।

रूढ़िवाद से दूर

गाँधीजी का दृष्टिकोण रूढिवादी और कट्टरपंथी नही था। मुझे एक उदाहरण याद है। वर्धा में जब मै गाँधीजी से मिलने जाता था तो मेरे बच्चे भी मेरे साथ जाते थे। एक दिन गाँधीजी का जन्म दिन पड़ा। जब हम गाँधीजी के साथ भोजन करने लगे, तो मेरे पुत्र गनी ने गांधीजी से कहा—'मुझे बहुत खुशी है कि मै यहाँ आया। मैने सोचा था कि आपके जन्म-दिन पर हमे मिठाई, पुलाव और मुर्गा आदि मिलेगा। लेकिन आज भी यहाँ रोज की तरह कद्दू बना है।' यह सुनकर गाँधीजी बहुत हँसे और मुझसे बोले—'देखो, ये बच्चे है। हमें इन्हे वही खाने को देना चाहिए, जो ये चाहते है। हमें इनके लिए मास और अण्डो का प्रबन्ध करना चाहिए।' 'मैने कहा— 'ये केवल मजाक कर रहे है। हम जहाँ भी जाते है, वहाँ वही खाते है, जो मेजबान परोसते है और स्वयं खाते है। यदि आप इनसे और कुछ खाने को कहेगे, तो ये नही खायेंगे।' इसलिए मै और मेरे बच्चे गाँधीजी से सहमत नही हुए। लेकिन गाँधीजी लोगो को उनकी इच्छा के अनुसार खाना देने को तैयार थे।

विनोदी स्वभाव

मै गाँधीजी के विनोदी स्वभाव से भी बहुत प्रभावित था। वह लडके लडकियो और बूढे-जवान सभी के साथ हँसते थे। वह काफी विनोद-प्रिय थे।

एक दिन ऐसा हुआ कि वर्धा का भगी अपना काम छोडकर भाग गया। जब गाँधीजी को इसकी सूचना दी गई तो वह बोले—'हमें बाल्टी-झाड़ू लेकर स्वयं सफाई करनी चाहिए।' और हम सबने मिलकर सफाई की।

जब गांधीजी १९३८ मे दूसरी बार सीमा प्रान्त के दौरे पर आए, तो हमने रात के समय उनके विश्राम के स्थान पर हथियार बन्द सन्तरी तैनात किए। यह एक रक्षात्मक कार्यवाई थी। जब गाधीजी ने इन्हे देखा तो बोले—'इनकी क्या आवश्यकता है ?' मैंने उनसे कहा—'बापू ! ये अनधिकृत व्यक्तियो को अन्दर आने से रोकने के लिए रखे गए है।' उस घटना का हम पर गहरा प्रभाव पड़ा।

अहिंसा का सदेश

सीमा प्रान्त मे पहले हिंसा की अनेक घटनाएं होती थी। अहिंसा का सदेश वहा बाद मे पहुंचा। हिंसा के बाद अग्रेजो का दमन-चक्र चलता था, जिसने बहादुर लोगो को भी कायर बना दिया। लेकिन जब अहिंसा का शुभागमन हुआ, तो कायर से कायर पठान भी बहादुर बन गए। इससे पहले पठान सिपाहियो और जेल से इतने डरते थे कि सिपाहियो से बात-चीत करने का भी साहस नही था। लेकिन अहिंसा ने उनमे साहस, वीरता और भाईचारे की भावना को जन्म दिया और बच्चे भी हसी-खुशी जेल जाना पसन्द करने लगे।

मै जब १९४५ मे जेल से छूटा तो अस्वस्थ था। गाधीजी उन दिनो बम्बई मे बिड़ला भवन मे ठहरे हुए थे। उन्होने मुझे बम्बई बुलाया। एक दिन उनसे देश में हिंसा की स्थिति पर चर्चा हुई। मैने गाधीजी से कहा—'आप लोगो को अहिंसा की शिक्षा देते है। आपके पास अनेक सेवक है। ये धनी लोग हैं और आपको रुपये-पैसे की काफी मदद दे सकते है। इसके बावजूद देश के अधिकाश भागो

"गांधीजी ! हमें क्या करना चाहिए ? यहां इतनी अधिक हिंसा, हत्या और असुरक्षा है।" गांधीजी बोले—मैं केवल बहादुरी का ही पाठ पढा सकता हूं। आप अपने घर वापस जायें।" उन्होने पूछा—"हम यह कैसे कर सकते है ? हमारे जीवन की क्या गारण्टी है ?" गांधीजी बोले—"मैं क्या गारन्टी दे सकता हूं। यदि आप मे से कोई मारा जाता है, तो हिन्दुओ को इसका मूल्य गाधी के जीवन से चुकाना होगा। मै आपको यही आश्वासन दे सकता हूं।" इससे मुसलमान शरणार्थियो को काफी भरोसा हुआ और वे अपने घरो को वापस चले गए।

गाधीजी की वाणी प्रेम और उदारता से भरी थी। उनकी सेवा, प्रेम और शक्ति से असख्य लोग प्रभावित हुए।

सच्चा मित्र

जब रेडियो से गाधीजी की हत्या का समाचार प्रसारित हुआ, उस समय मं एक छोटे से गाव मे भोजन कर रहा था। यह खबर सुनते ही हम स्तब्ध रह गए और हमने खाना छोड़ दिया। हमने बाहर आकर खुदाई खिदमतगारो को इकट्ठा किया। गाधीजी की मृत्यु से हमे गहरा धक्का लगा और हमने अनुभव किया कि हमारा सच्चा स्नेही, सहायक और मित्र हमें छोड़ गया है।

गाधीजी की हत्या अक्षम्य अपराध था। जिस व्यक्ति ने अपना समूचा जीवन मानवता के लिए अर्पित कर दिया, जेलों मे गया और देश की निस्वार्थ सेवा की, उसकी हत्या एक क्रूरतम अपराध था। इस समय भारत को जिस कठिनाई का सामना करना पड रहा है, उसका कारण यही हो सकता है कि खुदा ने इस जघन्य कार्य के लिए हमे माफ नही किया है।

गाधीजी की सबसे बडी देन क्या है, यह कहना मुश्किल है। उन्होने भारतवासियो मे कायरता के स्थान पर साहस की भावना का सचार किया तथा आजादी की माग करने का साहस दिया। उन्होने भारत को ही नही, वल्कि समूचे विश्व को अहिसा का पाठ पढाया। उन्ही के ही प्रयासो से हमें आजादी मिली।

महान पुरुष

यदि लोग गाधीजी की आलोचना करते है तो करे, दुनियां की ऐसी ही रीति है। सभी महान पुरुषो के बारे मे यही होता है। हम

प्रशंसा करके उन्हे अधिक उच्चता प्रदान नही कर सकते और न ही उनकी आलोचना करके दुनिया की नजर मे उन्हे गिरा सकते है। गांधीजी महान थे और महान ही रहेंगे।

हम उनका सम्मान किस प्रकार कर सकते हैं? जनता को जीवन की बुनियादी जरूरते प्रदान की जानी चाहिए, जो गांधीजी चाहते थे। यदि हम किसी ग्रामीण के सामने गाधी-दर्शन की चर्चा करे, तो वह यही कहेगा—"मै भूखा हूं। पहले मुझे खाना दो। मैं नंगा हूं। मुझे कपड़ा दो। मेरे बच्चो के लिए स्कूल नही है। उन्हे स्कूल दो। मै बीमार हूं और गाव मे डाक्टर या चिकित्सा की व्यवस्था नही है।"

इसलिए मेरी राय मे गाधी-जन्म-शताब्दी मनाने का काम तभी सफल होगा, जब लोगो को जीवन की बुनियादी जरूरते प्रदान की जाएं।

भारत में उनके भाषणों के संक्षिप्तांश | 6

मुझे आने से रोका गया (२ अक्टूबर १९६९)

मै भारत की घटनाओ पर सलाह और मशवरा के लिये यहाँ आया हूँ। मै लीडर नही हूँ, आपका खिदमतगार हूँ। आपसे मशवरा करूँगा और यदि मेरी खिदमत की जरूरत है तो मै हाजिर हूँ।

जब मै भारत की यात्रा की तैयारी कर रहा था तो लोगों ने यह कह कर कि भारत के लोग गाँधी जी के आदर्शो को भूल चुके है तथा हिसा पर उतारू है, मुझसे यात्रा का कार्यक्रम रद्द करने का अनुरोध किया था, पर मेरा मन न माना और मै आप लोगो से मिलने चला आया।

पिछले दिनों जलालाबाद में मुझे एक भारतीय नेता मिले थे। उन्होने जब मुझे बताया कि वह गाँधीजी के उपदेशो के प्रचार के लिए अमेरिका जा रहे है, तो मैंने उनसे कहा था कि क्या हिन्दुस्तान मे प्रेम हमदर्दी, सद्भाव और मुहब्बत शेष है? जब आपके देश में हिसात्मक घटनाएँ हो रही है तो ऐसे वक्त पर जब गाँधीजी का सन्देश आप बाहर वालो को देगे तो वे लोग हंसी नही उड़ायेगे ?

खुदगर्ज लोगों का मुल्क (७ अक्टूबर १९६९)

इस मुल्क मे ऋषि और पैगम्बर पैदा हुए है लेकिन यहाँ के लोग अब बड़े खुदगर्ज बन गए है, अगर मै यहाँ सौ साल भी रह जाऊँ, तो यहाँ कुछ असर नही होगा। यहाँ किसी को देश या जनता के हित की चिन्ता ही नही है।

लोग मुझसे कहते हैं कि आप महात्मा गांधी के इस मुल्क में ही क्यों नहीं बस जाते ? मैं उन्हें कैसे समझाऊं कि यह मुल्क मेरे रहने लायक नहीं है। मैं खुदाई खिदमतगार हूँ दूसरों की सेवा करना ही मेरा फर्ज है, मेरा उसूल है, लेकिन यहाँ बेगर्ज (निःस्वार्थ) और दियानतदार (समझदार) लोग नहीं होंगे तो मेरे यहाँ रहने का कोई फायदा नहीं।

आप लोग यह न समझें कि मैं आप लोगों के देश में किसी प्रकार की मदद लेने या किसी को अपना मुरीद (भक्त) बनाने आया हूँ। मैं एक तो महात्माजी की जन्मसदी की वजह से आया हूँ और दूसरे इसलिए आया हूँ कि यहाँ की जनता को देखूँ, उससे बात करूँ और यह समझूँ कि जब कि दुनिया के दूसरे मुल्क आसमान तक पहुँच गए हैं, यह कौम जमीन पर ही क्यों है ! जहाँ तक मेरा ताल्लुक है, मेरे सामने कोई गिरोह या पार्टी नहीं है, सिर्फ इन्सान है, उसकी खिदमत है। जो लोग मुझसे बातचीत करना चाहेंगे, उन सबसे बात करूँगा।

कुछ लोग मुझसे पूछते हैं कि अब तक आपने इस मुल्क में क्या देखा। असल बात यह है कि मैं २२ वर्षों बाद आया हूँ। इस अरसे में क्या कुछ हुआ है, इससे वाकिफ होने के लिए मैं अच्छी तरह लोगों से मिल नहीं पाया। अभी मैं चन्द लोगों से ही मिला हूँ लेकिन उनमें बड़ी पार्टीबाजी है, मुहब्बत नहीं है, आपसी सहयोग नहीं है। ऐसे लोग बहुत कम हैं, जिन्हें मुल्क का खयाल है। यहाँ मैंने जितनी खुदगर्जी देखी, उतनी और कहीं नहीं। सभी अपना पेट भरने में लगे हैं।

धर्मों में घृणा के सिवाय कुछ नही है जब कि धर्म या मजहब हमें प्रेम और मुहब्बत की नसीहत देता है।

मुसलमान चेते (६ अक्टूबर १९६९)

मै भारत के मुसलमान भाइयो से कहना चाहूँगा कि वे सही रूप में समझे कि राष्ट्रीयता क्या है। राष्ट्रीयता को समझना ही काफी नही है। उसे सही रूप मे समझकर उस पर अमल करना होगा। मै यहाँ की मुस्लिम जनता से कहना चाहूँगा कि वे यह न समझे कि यहाँ इस मुल्क मे उनके मजहब को कोई खतरा है। जब यहाँ के मुसलमान राष्ट्रीयता का पाठ पढ कर उस पर आचरण करेंगे, तभी उनका मजहब सुरक्षित रहेगा, जब तक उनकी दृष्टि अपने मुल्क, अपने राष्ट्र के अलावा किसी अन्य राष्ट्र पर रहेगी, तब तक उनका मजहब हमेशा खतरे मे बना रहेगा।

यह भी ध्यान मे रखने की बात है कि बुराई का बदला बुराई से चुकाने के लिए जब तक कोई समाज, कोई व्यक्ति उद्यत रहता है, तब तक बुराई मिट नही सकती। मै मुसलमान भाइयो से कहना चाहूँगा कि वे सच्चाई से कुरान शरीफ की हिदायतो का पालन करे। कुरान हमे हिंसा नही सिखाता, बुराई नही सिखाता। यदि हमने हिंसा नही छोडी और हिंसात्मक कार्यवाइयाँ करते रहे तो इन्सान और शैतान मे फर्क ही क्या रह जायेगा।

मै यह महसूस करता हूँ कि लोग सदा ही उस व्यक्ति का विरोध करते है जो ईश्वर-भक्त होता है तथा दीनो-दुखियो की सेवा का कार्य करता है। लेकिन इससे हिम्मत नही हारनी है। दूसरो को बुरा करते देख कर हमे अपनी इन्सानियत नही खोनी है। जो मानवता की सेवा करता है उसे सदैव कठिनाइयाँ और मुसीबते झेलने के लिए तैयार रहना चाहिए।

मै आपके देश मे आया—नेहरू और गाँधी के देश में आया था कि लोगो मे मिलूँ और उनसे बाते करूँ। लेकिन मुझे यहाँ के लोगो की हालत देख कर रहम आता है। आज जिस गरीबी और अज्ञानता में लोग जकडे हुए हैं, उसे देखकर कहना पडता है कि यह स्थिति

अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। मुझे दुख के साथ कहना पडता है कि भारत जापान जैसे छोटे देश से भी मदद लेता है, फिर भी दावा करता है कि उसने अपनी राष्ट्रीय आय बढाई है। कभी रूस से, कभी अमेरिका से सहायता की भीख मागता है। मुझे समझ मे नही आता जो देश दूसरे देशो से खाने के लिए अन्न की भीख मांगता है, वह अपने को स्वाभिमानी कैसे कह सकता है, वह कभी गौरवशाली कैसे बन सकता है।

मै मुसलमान भाइयो से कहूँगा कि राष्ट्रीयता का सम्बन्ध देश और देशभक्ति से है, धर्म से नही। एक ही राष्ट्र मे अनेक धर्मो के लोग रहते है, रहना चाहिए और रह सकते है, लेकिन उनका राष्ट्र एक होगा, राष्ट्रीयता एक होगी। विदेशो मे जब किसी से पूछते है कि तुम कौन हो तो उत्तर मिलता है—अग्रेज, जर्मन या फासीसी या जापानी। लेकिन इस देश के लोगो मे राष्ट्रीय भावना आई ही नही है, वे इसी प्रश्न का उत्तर देते है—मै हिन्दू हूँ, मुसलमान हूँ, सिख या पजाबी या मद्रासी।

भारत के मुसलमानो का धार्मिक एव राष्ट्रीय कर्त्तव्य यही है कि वे अपने मजहब को अपने तक रख कर सबके साथ देश की तरक्की और बहबूदी की बात सोचे और वही काम करे जिससे भारत उन्नति करे। मुझे इस बात से आश्चर्य होता है कि यहाँ के मुसलमान ऐसी हालत मे आ गए है कि वे अपने देश के स्थान पर दूसरे देश की चिन्ता करते है, यहाँ तक कि अपने ही देश की मस्जिदो की फिक्र छोडकर सैकडो मील दूर स्थित अलअक्सा मस्जिद की ओर ध्यान देते है जो चिन्ता की बात है।

मुझे दुख है कि भारत के मुसलमान केवल कागजी कार्यवाहियो मे उलझ गए है और उन्होने कुर्बानी तथा खिदमत के उसूलो को भुला दिया है जो तरक्की की बुनियाद है। उन्हे चाहिए कि आज की मौजूदा हालत मे अपने पिछडेपन का कारण ढूंढे और राष्ट्र की मुख्य धारा से अपना सम्बन्ध स्थापित करे—इससे अलग रह कर आगे बढने, तरक्की करने की बात थोथी है।

भारत मे—गांधी के देश मे—मुझे यह देखकर बडा रज होता है कि धर्म और जाति के नाम पर यहां दगे मारकाट मची हुई है।

मुझे बड़ा कलेश है और इसके विरोधस्वरूप मै तीन दिनों के उपवास कर सबसे शान्ति रखने की अपील करता हूँ।

मै यह भी बता दूँ कि मुझे डाक्टरों ने सलाह दी है कि उपवास करना मेरे स्वास्थ्य के लिए घातक है किन्तु मैंने निश्चय कर लिया है और इस पर अटल रहूँगा।

आज मैं २९ वर्षो बाद यहाँ आया हूँ। इस दौरान हम पर जो गुजरी है वह शायद आपको मालूम न हो। २२ वर्षो बाद आपकी मुहब्बत और गाँधी जी की याद मुझे यहाँ खीच लाई है।

आप यह न समझे कि मैं अपने लिए या अपने पठानो या पख्तूनिस्तान के लिए आपसे कुछ मदद मागने आया हूँ। वह तो हमें मिलके रहेगा। इसलिए मै आपको अपना मुरीद बनाने नही आया हूँ। मै इस गरज से यहाँ आया हूँ कि गाँधीजी ने जो सबक सिखाया था। उसकी आप लोगो को याद दिलाऊँ और देखूं कि गाँधीजी के उसूलो पर आपने कहाँ तक अमल किया है।

मैं आपको यह भी याद दिलाने आया हूँ कि आप अपने इतिहास को देखे और उन बातो पर गौर करे जिनसे आपका इतिहास गौरवशाली बना। आप चाहे तो उन्ही बातों को अपने जीवन मे ढाल कर आप अपना वर्तमान और भविष्य और भी गौरवशाली एव उज्ज्वल बना सकते है।

मैंने अभी आपसे कहा है कि मै पख्तूनिस्तान के लिए आपसे मदद मागने नही आया हूँ, इस मसले पर मै कुछ और विस्तार से कहना चाहूँगा।

पाकिस्तान ने ऐसा प्रचार कर रखा है कि हम पख्तूनिस्तान का कोई स्वतंत्र मुल्क बनाना चाहते है। दुनिया मे यही ऐलान किया जा रहा है और शायद आप भी यही समझते हो। लेकिन असलियत यह नही है। हम पाकिस्तान के भीतर एक स्वायत्त पख्तून राज्य चाहते है और यह जल्दी ही मिल जायेगा।

मैं आपको यह भी बता दूँ कि जिन दिनो मार्शल अयूबखाँ पाकिस्तान के राष्ट्रपति थे, उन्होने एक गोलमेज सम्मेलन बुलाया था और उसमे वायदा किया था कि शीघ्र ही हमारी माग पूरी कर दी जायेगी। वर्तमान राष्ट्रपति याह्या खाँ ने भी इस बात को स्वीकार कर लिया है और इसे कार्यान्वित करने का वायदा किया है।

आप यह कतई न सोचें कि हम पाकिस्तान से अलग होकर उसे कमजोर बनाना चाहते हैं, हालांकि भारत मे भी और अफगानिस्तान मे भी इस मसले को लेकर गलतफहमी रही है। हम चाहते है कि जिस तरह सिन्ध, पजाब और बगाल (सभी पाकिस्तान के प्रान्त है) तो उनके नाम से जाना जाता है, वैसा ही हम लोगो का भी अपना अलग से प्रान्त हो। हम यह बुरा मानते है, और यह इन्सानियत भी नही है कि हमे 'पश्चिमोत्तर कबायली' कहा जाय जैसा कि अभी हमे नाम दिया गया है। आप जानते है पख्तूनिस्तान के लिए पख्तूनो ने लम्बी लडाई लडी है, बेहद कुर्बानियाँ दी है और अब समय आया है जब हमारी, पठान कौम की मुराद हासिल होगी।

जहा तक पाकिस्तान का सवाल है, मै चाहता हूँ कि वहाँ ससदीय प्रणाली का शासन कायम हो और जनता को अपना मत काम मे लाने का अधिकार मिले। इस तरह का शासन होने पर केन्द्र को कम से कम अधिकार मिलना चाहिए। जब केन्द्र शक्तिशाली होता है तो राज्यो को दबा लेता है और इस तरह जनमत का आदर नही होता—यही बात मैने पाकिस्तान से कही है। मै मानता हूं कि केन्द्र को राज्यो के आन्तरिक मामलो मे कोई हस्तक्षेप नही करना चाहिए।

कृत्य हुआ। इसमें किसका दोप है, कौन निर्दोप है, किसने शुरूआत की और किसको अधिक नुकसान हुआ, मैं इसका फेसला करने या इस पर विचार करने का इरादा नही रखता ! मुझे तो एक बात से तकलीफ होती है कि आज भी यहाँ साम्प्रदायिक दंगे होते है जबकि भारत को आजाद हुए आज २२ वर्प हो रहे है और अग्रेजो की यह फूट और विद्वेप की बीमारी उनके साथ ही चली जानी चाहिए थी।

मैं सबसे पहले अपने उन हिन्दू भाइयों से कुछ कहना चाहूँगा, उन हिन्दुओ से जो समाज की सेवा करना चाहते हैं और करते है। मैं उनसे कहूँगा कि उन्हे अभी तक हिन्दुओ के बीच रह कर ही काम करने का मौका मिला है, इसलिए वे मुसलमानो को नही जान पाये। उनको चाहिए कि वे मुसलमानो के बीच जाकर भी काम करे ताकि एक दूसरे को अच्छी तरह जानने-समझने का अवसर मिले। यह मानना पडेगा कि हिन्दू नेताओ ने अब तक मुख्य रूप से अपने ही सम्प्रदाय के लोगो के बीच रहकर कार्य किया है और मुसलमानो को मुस्लिम लीग के भरोसे छोड़ दिया है और जो ब्रिटिश हुकूमत की हाँ मे हाँ मिलाने वाली थी।

मै इस सच्चाई पर भी कोई परदा नही डालना चाहता कि अंग्रेजो के समय में अधिकाश मुसलमान मुस्लिम लीग के साथ थे किन्तु आज यह भी महसूस करने की बात हे कि उन दिनो ये लोग किन परिस्थितियों में थे। आपको मालूम है कि अंग्रेजो ने सदा मुस्लिम लीग को शाह दी और मुसलमानो को गुमराह करने की कोशिश की और अपनी इस कोशिश मे कामयाब भी रहे। यह कहना भी बिल्कुल ठीक है कि आजादी की लडाई में बहुत सारे हिन्दू नेता मारे गये और मुसलमान नेताओ ने कोई ऐसा बलिदान नही किया बल्कि वे 'खान बहादुर' ही बने रहे—इन मुस्लिम नेताओ ने केवल अपने मालिको-अंग्रजो के-निहित स्वार्थों की ही पूर्ति की।

अब सोचना यह है कि करनी किसकी थी और उसका फल कौन भोग रहा है। मुस्लिम लीग के नेता तो तत्कालीन शासको के खिदमतगार और पिट्ठू बने रहे जो मुल्क का बँटवारा चाहते थे और काग्रेस और मुस्लिम लीग दोनो ने ही बँटवारे को मंजूर किया।

पर अहम सवाल यह है कि भारत के गरीब मुसलमान इसकी सजा क्यों भुगतें ?

यह तो सभी मानेंगे कि साम्प्रदायिक बँटवारे की चाल अंग्रेजों की थी—मुस्लिम लीग को इससे खुशी थी और कांग्रेस ने मजबूर होकर, उन्हें यहां से निकालने की खातिर, यह बँटवारा मान लिया। पर आखिर दोष तो अंग्रेजों का था—इन मुसलमानों का तो नहीं जो आज भारत में बसे हुए हैं। अंग्रेजों ने तो हमारे प्रान्त में भी हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानों में फूट डालने की कोशिश की किन्तु वे अपनी इस ओछी हरकत में कामयाब नहीं हो सके और वहां सभी बड़े प्रेम से, भाईचारे से मिल-जुल कर रहे।

इसलिए मैं हिन्दू भाइयों से अपील करूंगा कि वे अपने मुस्लिम भाइयों से सम्पर्क बढ़ाएं, उन्हें पराया न समझें और एक दूसरे को नजदीक से जानने-परखने के अवसर उत्पन्न करें।

थोथे नारों से काम नहीं चलेगा

(सदन में २८ नवम्बर १९६६)

मुझे इस बात का अफसोस है कि जिस कांग्रेस ने आम जनता की खुशहाली के लिए, करोड़ों गरीब लोगों की बहबूदी के लिए अंग्रेजों की खिलाफत की, आजादी का जंग लड़ा, जिसके रहनुमा ऐसे थे जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपना सब कुछ कुर्बान किया, उसी कांग्रेस को जब हुकूमत मिली तो वह गरीबों को भूल गई, दलितों और शोषितों को भूल गई।

यह ठीक है कि मुल्क ने समाजवाद स्थापित करने का लक्ष्य बनाया है, किन्तु समाजवाद आयेगा कैसे ? मुझे तो यहां के किसी भी सत्ताधारी नेता या विरोध पक्ष के किसी नेता में समाजवाद की झलक तक नहीं दिखाई देती। सोचना है कि जब जनता के रहनुमाओं में ही, चाहे वह शासक वर्ग के हों चाहे विपक्ष के, समाजवाद की बू नहीं है, उनका आचरण-व्यवहार समाजवाद के अनुकूल नहीं है तो यह कैसे मान लिया जाय कि उनकी कोशिश से देश में समाजवाद आ सकता है।

इस मुल्क मे मुझे देखने को मिला कि आजादी के बाद अमीर और गरीब की खाई और भी गहरी और चौडी हो गई है। कुछ ऐसे है जो बेशुमार दौलत के मालिक बने बैठे है और दूसरी ओर करोड़ों ऐसे है जिनके पास न तो खाने को रोटी है, न पहनने को कपड़े या रहने को मकान।

ये परिस्थितियाँ समाजवाद के अनुकूल नही है। समाजवाद का अर्थ ऊँचे ऊँचे, गगनचुम्बी भवनो से तो नही है—समाजवाद का अर्थ है कि दलितो-पीडितो को आँखो से बहते आँसू पोछे जायँ, गरीबो के हृदयो को जीवन के प्रति आशा की किरणो के प्रकाश से भर दिया जाय तथा असख्य नगे-भूखो के लिए रोटी-रोजी मुहय्या कराई जाय।

मै समझता हूँ कि लोकतत्र, समाजवाद और आजादी से लोगों मे ईमानदारी, आत्म-निर्भरता तथा सन्तोष की भावना उत्पन्न होनी चाहिए और उनके जीवन की मूलभूत आवश्यकताओ की पूर्ति होनी चाहिए। यदि ऐसा नही होता, तो ये तीनो—समाजवाद, लोकतत्र और आजादी—थोथे नारे मात्र रह जावेगे।

गाँधी जी कभी स्वप्न देखा करते थे कि देश को आजादी मिल जायेगी तो आम जनता की मुश्किले हल हो जायेगी। वे कहा करते थे कि स्वतत्र भारत मे कोई दु खी नही रहेगा, कोई जरूरतमन्द नही रहेगा और कोई भूखा-पेट नही सोयेगा। किन्तु मुझे यह देख कर दु ख होता है कि गाँधी जी के भारत की सरकार की आय के साधनो मे मुख्य है शराब की बिक्री कर तथा चु गी कर। आज तक इस देश से शराब नही गई। वे अहिसा के परम पुजारी थे और उनकी इस जन्मशताब्दी के अवसर पर देश के गली-कूचे इन्सान के गर्म रक्त से रगे पडे है। उनके जीवन काल में कुछ विदेशी कहा करते थे कि गाँधी जी की मृत्यु के पश्चात् गाँधीवाद उसी तरह समाप्त हो जायेगा जैसे बुद्ध के बाद बौद्ध धर्म का इस देश से पलायन हो गया। किन्तु गाँधी जी इस बात मे विश्वास नही करते थे और कहते थे जो मेरी बात नही मानगे वे स्वय नष्ट हो जावेगे।

अब मै देखता हूँ कि गाँधीवाद के आलोचक और प्रवर्तक दोनो ही सही थे—गाँधी का नाम उनके देशवासी मिटाते जा रहे है और साथ ही वे अपने विनाश का मार्ग प्रशस्त करते जा रहे है।

कि कानून महज दिखावटी है, उसका जनसाधारण के लिए कोई उपयोग नही। यदि ऐसा ही है तो यह निहायत शर्म और अफसोस की बात है। मुझे एक न्यायाधीश ने बताया है कि अभी तक धर्म के नाम पर उपद्रव करने के लिए किसी को सजा नही दी गई है। यदि यह सच है तो इससे अधिक इन्सानियत का पतन और क्या हो सकता है ! मुझे ऐसा लगता है कि उपद्रवियो को कडी से कड़ी सजा नही दी गई तो इस वहशीपन का कही अन्त नही होगा।

मै मानता हूँ कि धर्मान्धता से भरी हुई देश-भक्ति से कुछ लोगो को थोडे समय के लिए लाभ हो सकता है किन्तु अन्ततोगत्वा साम्प्रदायिक दंगो से सबको ही घाटा होता है क्योंकि इससे विकास की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाती है।

इस मुल्क मे राजनीतिक दलों का भी अजीब हाल है। मै समझता हूँ कि प्रत्येक राजनीतिक दल का उद्देश्य जनता की सेवा होना चाहिए और शुरू मे इसीलिए राजनीतिक दल गठित होते है। लेकिन यहाँ मै देखता हूँ कि राजनीतिक दल पारस्परिक द्वेष और विरोध के शिकार हो रहे है ? सबको अपने स्वार्थो की पूर्ति हो एक मात्र उद्देश्य दिखाई दे रहा है। इसलिए मुझे लगता है कि जो भी राजनीतिक दल है सभी सत्ता के लिए जी रहे है और सत्ता के लिए मर रहे है—उन्हे जनता की तकलीफो की कोई फिकर नही।

यह ठीक है कि आज राजनीतिक सगठनो को राष्ट्रीयता के आधार पर खडा किया जाता है पर इसमे काफी विवेक की जरूरत है क्योकि जब राष्ट्रीयता का अर्थ धर्म लगाया जाने लगता है तब तबाही का कोई आर-पार नही दिखाई देता। असलियत यह है कि किसी मुल्क की ताकत उसके नागरिको की एकता और देश-भक्ति मे होती है, पर एकता का आधार समता है। यदि किसी मुल्क के जुदा-जुदा वर्गो मे समता नही है, वे एक दूसरे को अपने बराबर न मान कर छोटा-बडा मानते है तो एकता नही रह सकती। मुल्क की ताकत के लिए, एकता के लिए यह जरूरी हो जाता है कि प्रत्येक नागरिक यह महसूस करे कि सभी बराबर है, कोई न तो छोटा है, न कोई दूसरे से बड़ा, और सबका भविष्य देश की किस्मत के साथ जुड़ा हुआ है।

नाम छा रहा है। कोई नारा लगाता है, कोई फूल चढाता है, जगह-जगह उनकी स्मृति मे सभाएँ की जाती है। पर यह सब ऊपरी बातें हैं। गांधीजी की जयन्ती मनाने का सही तरीका है उनके उसूलों, उनके सिद्धान्तों पर सच्चे मन से अमल करना।

हिन्दुस्तान से पहले हम वहुत उम्मीदे रखते थे लेकिन अब नहीं रही। देश ने अपनी इज्जत खुद ही खो दी। देश को आज आजाद हुए २२ साल बीत गए है, पर कोई तरक्की नही नजर आती। लोग सरकार को दोष देते हैं, लेकिन यह असलियत नही है। विदेशी सरकार होती तो यह वात मानी जा सकती थी। आज तो जनता की सरकार है। यदि आप लोग यह समझते हैं कि जो लोग सरकार चलाते है वे लोग गलत आदमी हैं, तो उनकी जगह आप सही आदमी बैठाइए। यह काम आपको ही करना है। इसके लिए आपको मन मे लालच और लोभ निकालना होगा। आज हालत ऐसी है कि जो आपको ५ रुपए दे देता है, उसी को आप वोट देते है। इस नक्शे को बदलना होगा।

मैनें कहा है कि मै किसी की आलोचना नही करता और ऐसा करने में मेरा कोई निजी स्वार्थ नहीं है। मुझे न तो यहाँ वोट लेना है, न नेतागिरी करनी है, न हुकूमत लेनी है। हम लोगों ने गाँधीजी के साथ मिलकर मुश्किले उठाई थी कि आजादी मिलने पर देश की गरीबी दूर हो जायेगी, चारो ओर प्रेम, शान्ति और एकता स्थापित होगी किन्तु गाँधीजी के बाद क्या हम यह कर सके है ? आज मै देखता हूँ कि देश में चारो ओर नफरत, फिसाद और गरीबी वैसें ही फैले है जैसे पहले थे।

यह देश के लिए बड़े शर्म की बात है कि दूसरे मुल्को से अन्न और धन माँगते है। इससे हम दूसरो के मोहताज बनते जा रहे है और दुनिया की नजरो मे हमारी इज्जत गिरती जा रही है।

यहां मै शहरो में भी गया, गाँवों में भी गया। जहाँ तक शहरों का सवाल है, कुछ तरक्की नजर आती है, किन्तु गाँवो में नही। देश की असली खुशहाली तो गाँवों की तरक्की मे ही है। जब तक गाँवो के करोड़ो लोग खुशहाल नही होगे, तब तक मुल्क को खुशहाल कैसे कहा जा सकता है।

महात्मा गाँधी ने हमें दो बाते बड़े महत्व की बताईं–अहिंसा और साम्प्रदायिक एकता की। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि लोग दानो बाते भूलतें जा रहे है। आज हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम करने की बड़ी जरूरत है। यहाँ के साम्प्रदायिक झगड़े भी सच पूछिए तो धर्म के नाम पर कम है, वोट के लिए अधिक हैं। देश में जो झगड़े हो रहे है वे हिन्दू-मुसलमान के नही है। वोट के लिए है। लोग धर्म तथा जाति के नाम और पैसे से वोट खरीदते है। इस तरह गरीब को ही नुकसान होता हैं, चाहे वह हिन्दू हो चाहे मुसलमान।

इसलिए मैं आम जनता से कहूँगा कि वह असलियत को पहचाने और गरीबी को दूर करने के लिए कृतसंकल्प हो जाय। देश की आजादी इसलिए हासिल की गई थी कि गरीबी दूर होगी किन्तु असर उल्टा हुआ। गरीबी और बढ गई और लाजिमी था कि एक गरीब हो रहा हैं तो दूसरा अमीर होगा। इस तरह गरीबी और अमीरी की खाई कम होने के बजाय और गहरी और चौड़ी होतीं गई।

मेरा मकसद पूरा हुआ (४ फरवरी १९७०)

हम नारे लगाते है, फूल लाते है, दर्शन करते है किन्तु जिनके लिए हम यह सब करते है, उनकी बातो पर अमल नही करते ।

आज से ४ महीनो पूर्व मै आपके देश मे आया था—इस लिए कि गाँधी जन्मसदी समारोह मे शरीक हो सकूँ तथा हिन्दुस्तान की जनता से मिल सकूँ । खुदा का शुक्र है कि ये दोनों काम पूरे हो चुके और मै अब आप लोगो से विदा ले रहा हूँ ।

मै जिस मकसद से यहाँ आया था, वह पूरा हो चुका, मेरा काम भी खत्म हो चुका है, अब आपका काम बाकी है। यदि आप उसे पूरा करेंगे तो आपको फायदा होगा और यदि नही करेंगे तो नुकसान भी आप का ही होगा ।

मुझसे बहुत से लोगो ने जगह-जगह पूछा है कि क्या फिर से भारत और पाकिस्तान मिलकर एक सघ बना सकते है ? इसके बारे मे मुझे यही कहना है कि मै और गाँधीजी दोनो ही बटवारे के खिलाफ थे । आप देखे और सोचे कि पाकिस्तान कैसे बना है ! मै बार-बार कहता हूँ कि पाकिस्तान हिसा और घृणा से बना है। और यदि यही बाते भारत मे रही, यहाँ भी हिसा और घृणा का बोलबाला रहा तो भारत-पाक का एक संघ कैसे बन सकता है ? इसकी तो बात भी नही सोची जा सकती । पर इन दोनो का एक सघ बनाना दोनो देशो के हालातो, इंसानों और कोशिशो पर मुनहसिर है। यदि हालात वदल गए, तब तो सघ बनना सम्भव हो सकता है, मगर आज के मौजूदा हालातो मे तो यह कार्य नामुमकिन है ।

पिछले ४ महीनो मे जगह-जगह पर मैने जो कुछ कहा, वह हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तानियो की इज्जत के लिए कहा, उसमें कोई मेरा स्वार्थ नही था—सव कुछ आपके प्रेम और इज्जत के लिए कहा ।

यह मेरा फर्ज है कि मै आपका एहसान प्रकट करूँ उस मुहब्बत और प्रेम के लिए जो आपने मुझे दिया। मै हुकूमत का भी शुक्रिया अदा करता हूँ जिसने मुझे आप लोगो तक, देश की जनता तक पहुँचने मे मदद की ।

गांधीवाद पुनः प्रबल होगा
(७ फरवरी १९७०)

मैंने आपके देश में लगभग ४ महीने भ्रमण किया। इस दौरान बहुत सारे लोगों से मिला, उनके हालात देखे-सुने। सारी बातों को देखते हुए मुझे पूरा भरोसा है कि इस देश में गांधीवाद पुनः जोर पकड़ेगा, हिंसा की जो घटनाएं है, उन्हें अपने आप एक दिन बन्द होना पड़ेगा।

अपनी लम्बी यात्रा के दौरान मैंने बहुत सी ऐसी बातें कही होंगी जिनसे कुछ लोग चिढ़ गए हैं। लेकिन यदि मैं निर्भय होकर अपने मन की बात नहीं कहता, तो मैं दोस्त कहलाने का हकदार भी नहीं रहता, मेरा इरादा किसी के दिल को ठेस पहुँचाना नहीं था। मैंने भारत में पाया कि साम्प्रदायिक घृणा, हिंसा व आपसी अविश्वास फैले हुए हैं। मैं यहां उन आदर्शों को लागू हुआ देखने आया था, जिनके लिए गांधीजी जिए और शहीद हुए। मुझे खेद है कि गांधीजी के सिद्धान्त भारत के लोगों ने भुला दिये हैं।

मैं इस अजीज मुल्क के निवासियों से निवेदन करता हूँ कि आप गांधीजी द्वारा दिखाये मार्ग का अनुसरण करें। इसी में आपके देश की शान्ति और समृद्धि निहित है।

बादशाह खान के विचार सूत्र | 7

- मै अहिसा और सत्य का पालन चाहता हूँ, जिसके लिए गाधीजी जीये और शहीद हुए।
- किसी भी राष्ट्र का आधार महजब नही हो सकता।
- धर्म का अर्थ है प्रेम–अहिसा–समाजवाद।
- कुछ बडे नेताओ को सरकार से बाहर रहकर सत्ता का दुरुपयोग न हो ऐसी चौकसी रखनी चाहिये।
- लोकतन्त्र में लोगो के वोट की ताकत है, उस ताकत को लोग जाने और उससे ऐसे लोग चुने जो नि.स्वार्थ सेवा करे।
- मैने दो राष्ट्र के सिद्धान्त मे कभी विश्वास नही किया और न कभी करूगा।
- मुहब्बत और सच्चाई ही मजहब है।
- कौमो की जमानत विश्वास और भरोसे पर होती है।
- क्राति एक जल–प्रवाह की भाति होती है।
- जब हम प्यार से पशु को अपना मित्र बना सकते है तो मनुष्य को जो श्रेष्ठतम प्राणी है, क्यो अपना मित्र नही बनाया जा सकता ?
- भारत के नेताओ और जन साधारण से यह निवेदन करना चाहता हू कि कांग्रेस ने आजादी से पूर्व जन साधारण को जो वचन दिये थे, उन्हे पूरा करे।